ठकुरानी

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली-६

अपनी ममतामयी माँ
आशादेवी को
सादर
सानुराग
सप्रणाम
समर्पण

—'चन्द्र'

मैं इतना ही कहूँगा—

- यह उपन्यास स्वाधीनता के पूर्वकाल की रियासतों के ठिकाणों व राजाओं की गाथा है। राजमहलों व डेरों की कहानी है। जन-जागरण की सीधी-सादी कथा है। राजस्थान के जन-जीवन पर आधारित होने के कारण इसका मूल्यांकन उस परिवेश में करना जरूरी है।

- विज्ञजनों की राय की प्रतीक्षा रहेगी।

—यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

प्रथम खंड

काले-काले पापाण खण्डों से निर्मित 'हाथी महल' स्थापत्य कला का एक अद्वितीय नमूना था। पर्वत के एक भाग पर अनेक गुम्बदों से शोभित महल कोसों दूर से दिखाई देता था। महल तक पहुँचने के लिए पक्की सड़क थी, जो घुमावदार थी। रास्ते में कीकर, नीम, जामुन के वृक्षों की छाया में महल के नौकर-चाकर थककर विश्राम किया करते थे। रास्ते में हर मील पर पुलिस चौकी थी।

महल के मुख्य द्वार से लगभग पचास गज दूर सिपाहियों के रहने के लिए छोटी-छोटी कोठरियाँ बनी हुई थी। यहीं पर अलग निजी विजलीघर था और यहीं से महल मे पानी पहुँचाया जाता था। यहाँ से महल के तोरण-द्वार तक लाल पत्थरों की बनी सड़क थी। यह सड़क चिकनी और समतल थी। वहाँ पर अत्यन्त विश्वसनीय पहरेदार रहते थे।

तोरण-द्वार के किवाड़ मजबूत लोहे के बने हुए थे।

महल के भीतर अनेक कमरे थे। प्रत्येक कमरे का महत्व पृथक्-पृथक् था—शयन कक्ष, नृत्य गृह, विश्राम कक्ष, भोजन कक्ष, बैठक इत्यादि।

नृत्य गृह में अनेक झूले डाले हुए थे। झूलों के चारों ओर फव्वारे लगे हुए थे। जब कामिनियाँ सोलह-शृंगार कर, शराब में उन्मत्त होकर नाचतीं, गाती, झूलतीं—राजा अपने उच्चासन पर आसीन होकर मस्तियाँ लूटते और उन अप्सराओं को पारितोषिक बाँटते तथा जो उन सुन्दरियों को उनके हुजूर में पेश करते थे, उन्हें जागीरें प्रदान किया करते थे।

शयन कक्ष में मखमली गद्दों व तकिये से युक्त तीन ढोलिए (पलंग) बिछे हुए थे। चारों ओर आदमकद शीशे लगे हुए थे। कुछ कामोत्तेजक सुन्दर चित्र थे।

उस दिन वसत का उत्सव था।

महाराजाधिराज राजराजेश्वर श्री खेतसिंह ने अपने ठाकुरों, उमरावों,

जागीरदारों को आमन्त्रण दिया था। पटरानी के सिर में दर्द था, अतः वे नहीं पधार सकी। शेष दो परित्यक्त रानियाँ आने की चाह होते हुए भी नहीं आ सकी क्योंकि वे सब प्राचीन अवशेषों की भाँति महाराजा के देखने की वस्तुएँ मात्र बनकर रह गई थी। उनका अस्तित्व आजकल इतना ही था कि जब महाराज प्रसन्न होकर अपने काले होठों पर मुस्कान बिखेरें तो वे अपनी कोई इच्छा उनके समक्ष प्रस्तुत कर दें, बस।

खेतसिंह का कद छः फीट था। उनका वक्ष ५०-५५ इन्च था। बलिष्ठ बाँहें, रंग काला—एकदम कोयले की तरह। उस पर काली-काली कानों से लिपटी मूँछें। भारी-भरकम आवाज, बड़े-बड़े पाँव, उनमें सलमे-सितारों जड़ी पगरखी। गले मे अमूल्य हार।

उनकी मुखाकृति पर सदैव कठोरता झलकती थी। उनकी बड़ी-बड़ी आँखों में क्रूरता की गहरी चमक थी। इन दो बातों से उनका सभी सरदारों व जागीरदारो पर अत्यन्त आतंक था, हालाँकि वे हृदय के अत्यन्त कोमल थे।

साँझ हो रही थी।

पर्वतमालाओं के पीछे से अंधकार बढ़ रहा था।

हाथी महल में सरदारों की चहल-पहल बढ़ गई थी। महल के प्रथम आँगन मे महाराजा की ओर से उनके अतिथियों की आवभगत की जा रही थी। द्वितीय आँगन में सिंहासन लग रहे थे। पदो के अनुसार छोटे-बडे सिंहासन। आँगन के तीन तरफ पश्चिम दिशा को छोडकर जालीदार झरोखे बने हुए थे। इन झरोखों मे पटरानी अपनी सखी, सहेलियों एवं दासियो के साथ विराजती थी।

अचानक जीप की आवाज सुनाई पडी। उस जीप में पुलिस थी।

सारे अतिथि सावधान होकर पंक्ति-बद्ध खड़े हो गये।

"महाराजा आ रहे है।" यह मौन वाक्य सभी के मस्तिष्को मे एक साथ दौड़ गया। एक आलीशान लाल रंग की कार से महाराज उतरे। सभी ने उनकी जय-जयकार की। लोगो की आँखों में उल्लास चमक उठा। महाराजा ने हाथ जोड़कर उनकी जय-जयकार का उत्तर दिया।

महाराजा जब तक खड़े रहे तब तक सब खड़े रहे और जैसे ही वे बैठे बैठ गये।

अब महफिल जमी।

अफीम, भांग और शराब सभी सरदारों ने अपनी-अपनी रुचि के अनुसार ग्रहण की। उनके मस्तिष्क मे उन्माद के हल्के-हल्के बादल छा गये और पातुरों को गाने की आज्ञा दी गई।

शहर की अत्यन्त प्रसिद्ध तीन गायिकाएँ अख्तर जान, धूड़ी बाई और काशी बाई आई थीं। रूप और सौन्दर्य में काशी की सानी नहीं थी और शास्त्रीय संगीत व लोक-गीत गाने मे धूड़ी बाई अपना विशिष्ट स्थान रखती थी। गजलें गाने में अख्तर सबको मोह लेती थी।

महाराजा के संकेत पर अख्तर उठी। उसने मिर्जा गालिब की गजलें गाईं।

आह को चाहिए इक उम्र असर होने तक,
कौन जीता है तिरी जुल्फ के सर होने तक।
....
हमने माना कि तगाफुल न करोगे लेकिन,
खाक हो जायेंगे हम तुमको खबर होने तक।

गजल के साथ-साथ काशी ने नृत्य किया। महफिल मे रौनक आ गई। सरदार रुपयों की वर्षा करने लगे। 'वाह-वाह' और 'क्या खूब' की आवाजें उठने लगीं। देर तक गजलें होती रहीं। इसके पश्चात् धुडी बाई ने अपने शहद से मीठे स्वर में गाना शुरू किया। उसने "मोरिया" और "ढोला" प्रसिद्ध राजस्थानी गीत गाये। अफीम और शराब के नशे में सरदारगण झूम रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था कि संसार की समस्त खुशियां इसी आँगन में सिमट कर एकत्रित हो गई हैं।

अप्रत्याशित खुशियो में विघ्न पड़ा।

महाराजा के प्राइवेट सेक्रेटरी श्री धूड़सिंह उनके समीप आये। उन्होंने अदब से सिर नवाकर धीमे स्वर में कहा, "जान की माफी चाहता हूँ महाराज, अर्ज यह है कि अभी-अभी खबर मिली है कि गाँव साधुपुर में किसानों ने विद्रोह कर दिया है। लैफ्टीनेण्ट साहब आई० जी० फ्रैंक मोरिस साहब उन्हें रोकने में सर्वथा असमर्थ हो रहे हैं।"

महाराजा खड़े हो गये।

उनके उठते ही महफिल में गहरी निस्तब्धता छा गई। सब सरदार उठ खड़े हुए। पातुर विस्मृत दृष्टि से उन्हें देखने लगीं। वाद्ययन्त्रों के वादकों की मुखाकृतियों पर आशंकाओं की रेखाएँ नाच उठी।

महाराजा सहज स्वर में बोले, "मैं अभी आता हूँ। आप महफिल जारी रखें। कोई विशेष बात नहीं है।"

खेतसिहजी महफिल से बाहर आये। कार पर चढ़ साधूपुर की ओर रवाना हो गये। साधूपुर हाथी महल से लगभग अस्सी मील पड़ता था। मोटर हवा से बातें करती हुई उधर भागने लगी।

"साधूपुर" प्रान्त का अच्छा-खासा ठिकाना था। दस लाख की सालाना आय थी। वहाँ का ठाकुर खीवसिंह अत्यन्त अन्यायी और ऐय्याश था। नगर और अपने अधीन गाँवों से वह गरीबों की सुन्दर बेटियों को कुटनियों द्वारा फुसला-फुसला कर, धमका कर या उनकी गरीबी का अनुचित लाभ उठाकर अपनी 'जनानी ड्योढ़ी' में मँगवा लेता था और चन्द दिन तक उनकी जवानी का उपभोग करके नारकीय यंत्रणाएँ भोगने के लिये उन्हें बड़े-बड़े बुर्जों से घिरी अपनी जनानी ड्योढ़ी में बन्द कर देता था। आजकल उसकी ड्योढ़ी में दो सौ स्त्रियाँ थी। इसके साथ-साथ इधर निरन्तर दो वर्ष से सूखा पड रहा था। सारे किसान चाहते थे कि इस बार का लगान माफ कर दिया जाय, पर खीवसिंह इसके लिये तैयार नहीं था। तब एक सद्‌भावना मण्डल महाराजा खेतसिहजी से मिला था। उन्होंने किसानों की दुर्दशा देखकर सहायतार्थ कुछ धन-राशि प्रदान की तथा यह आश्वासन दिया कि किसानों को लगान के लिए कोई तंग नही करेगा। किन्तु आश्वासन महाराज तक ही रहा, खीवसिंह की माँ सूरज व अन्य ठाकुरों ने इस आज्ञा का किंचित् भी पालन नहीं किया। उनके कारिन्दे किसानों पर पूर्ववत् जुल्म करते रहे और सब तरह की लाग-बाग माँगते रहे।

परसों की घटना है—

वंध्या धरती। भूखी और आहत।

दूर-दूर तक किसी वृक्ष का चिह्न तक नहीं। यत्र-तत्र जानवरों की हड्डियाँ व ढाँचे पड़े थे। हवा का हर झोंका आने में मृत्यु की आशंका लेकर चल रहा

था। आग की तरह रेत दहक रही थी। प्रतीत होता था, प्रभु उन दरिद्र किसानों पर आफत का पहाड़ निरन्तर गिराता जायगा।

साधूपुर के गाँव जैंतसर में मठधारी भजनानन्द का आगमन हुआ था। भजनानन्द साधू थे। गौरवर्ण और बलिष्ठ। जब चारों ओर दाने-दाने के लिये समस्त जन-मानस पीड़ित था, तब भजनानन्दजी दूध-घी की नदियों में स्नान करते थे और अपने चेलों की श्रीवृद्धि में संलग्न थे। आजकल वे गाँव-गाँव घूम कर पीड़ित और भूखे किसानों के नन्हे-मुन्ने फूल से कोमल बच्चों को खरीद रहे थे।

जैंतसर से उन्होंने तीन बच्चों को खरीदा। पच्चीस गाएँ उन्होंने आठ-आठ आने में खरीदीं। और उसी रात उन गायों को अपने चेलों द्वारा समीप के नगरों में बेचने के लिये रवाना कर दिया।

चाँदनी रात।

सारे किसानों के घरों व झोंपड़ों में घोर अंधकार।

"हरखू!" भजनानन्द ने उसे उसके घर के आगे पुकारा।

"हाँ महाराज!"

"गाँजा नहीं है?"

"नहीं है।" हरखू ने उत्तर दिया।

"गाँजे का प्रबन्ध करो।"

"महाराज घर में खाने तक को दाना नहीं है। गाएँ-भैंसें सबकी सब बेच चुका हूँ। घर में तीन दिन से बच्चे भूख से तड़प रहे हैं। जनानी सात-सात दिन से फाके कर रही हैं। आप गाँजे............

बीच में भजनानन्द ने अवरोध उत्पन्न किया। उनकी बड़ी-बड़ी दीप्त आँखों में परेशानी के भाव पैदा हुए। दीर्घ श्वास से बोले, "तभी कहता हूँ कि शिव की बात न मानो। यह शिव तुम सबको पथ-भ्रष्ट कर रहा है। अकाल और रोग प्रभु के आधीन होते हैं। यह सब पृथ्वी के प्राणियों के पापों के फल हैं। मनुष्य अपने कर्म से सर्वथा विमुख होकर निजी स्वार्थ के पीछे अन्धा हो गया है। वह युगों से चले आ रहे नियमों एवं आदेशों को भंग करके गलत नियमों की सर्जना कर रहा है। तुम किसान हो, तुम्हारा धर्म खेती करना है। तुम्हारा कर्म हल के साथ-साथ ईश्वरीय रूप अपने अन्नदाता की आज्ञा का

पालन करना है किन्तु अब तुम उस छोकरे के कहने पर इन्कलाब करना चाहते हो। ठाकुर का सिंहासन बदलना चाहते हो ! क्यों ? केवल इसलिए कि वह छोकरा जिसमें किंचित् भी आत्मविश्वास नहीं है, जिसके हृदय में स्वार्थ का अँधेरा छाया हुआ है, जो तुम लोगों की जरा भी मदद नहीं कर सकता, वह तुम्हें दिलासा दे रहा है कि सब बदल जायगा !"

हरखू की विक्षुब्ध आत्मा मौन आर्त्तनाद कर उठी। वह हल्के स्वर में तीखी दृष्टि से स्वामीजी को देखकर बोला, "शिव कैसा भी हो, पर वह सत्य कहता है। उसकी बात में सच्चाई है। स्वामीजी, प्रभु कभी निर्दोषों को नहीं सताता। क्या ठाकुर सा चन्द दिनों के लिए अपना खर्चा कम नहीं कर सकते ?"

"तर्क कर रहे हो ? श्रद्धा की जगह हमसे तर्क करके तुम नरक और पाप के भागी बन रहे हो। हरखू ! यह मत भूलो कि हम जो कुछ भी कहते हैं, ईश्वर के आदेश से कहते हैं। मैं केवल तुम्हारे और उसके बीच में माध्यम हूँ।"

"महाराज, वर्षों से मैं आपकी आज्ञा का पालन करता आ रहा हूँ। पता नहीं मुझे आज ऐसा क्यों लग रहा है"—उसका स्वर भर आया, "कि मैंने ठीक नहीं किया। आदमी जितना सीधा होता है, उतना ही कष्ट पाता है।" उसने अपनी उँगली ऊँची करके पागल के प्रलाप की तरह कहा, "मैं आपकी कुछ भी सेवा नहीं कर सकता, आप यहाँ से इसी समय चले जाइए, मुझे न ईश्वर की जरूरत है और न आपकी। मुझे चाहिए केवल धान, केवल अन्न।"

भजनानन्दजी उसका प्रलाप सुन कर उत्तेजित हो गये। उनकी मुखाकृति पर कठोरता झलक उठी। वे कर्कश स्वर में बोले, "तुम हमारा अपमान कर रहे हो, मैं तुम्हें भस्म कर दूंगा। नास्तिक हो रहे हो ! धर्म-कर्म छोड़ कर उस कल के छोकरे के पीछे हमारा अपमान कर रहे हो ! मैं तुम्हारा समाज से बहिष्कार करवा दूंगा।"

हरखू कुछ नहीं बोला। वह क्रोध में जड़वत् बना रहा। भजनानन्द जी चले गये।

उसके जाते ही हरखू के घर में सम्पूर्ण सन्नाटा छा गया। अँधेरे में उसकी बहू और उसकी बड़ी बेटी चमेली घूमती नजर आ रही थी। बिचला बेटा करुण-स्वर में बोला, "मुझे रोटी दो, मुझे रोटी दो ! माँ तू कहाँ है ? माँ !"

उसकी माँ विवशताजनित आन्तरिक भावनाओं में बह कर सिसक पड़ी।

हरखू का मन विकल हो उठा। उसने भाग कर अपने बेटे को गले से लगा लिया।

तभी उसके द्वार पर पूर्व-परिचित स्वर सुनाई पड़ा, "काका, ओ काका !"

"कौन शिव ?"

"हाँ काका !" शिव घर में घुसा। उसने हरखू से बाहर आने का अनुरोध किया। व्यथा भरे स्वर में बोला, "बड़ा गजब हो गया है, काका !"

"क्या हुआ ?" भय मिश्रित विस्मय था हरखू के स्वर में।

"भीखली ने आत्महत्या कर ली है।"

"क्या कह रहे हो ?"

"सच कह रहा हूँ काका !"

तभी चमेली उन्मत्त सी बाहर आई। क्षुब्ध स्वर में बोली, "यह क्या कह रहे हो शिव भैया ?"

"ठीक कह रहा हूँ बहिन !" उसने टूटते स्वर में कहा, "बेचारी छः रोज से भूखी थी। अन्न का एक दाना भी उसके मुँह में नहीं गया। थोड़ा-बहुत माँग कर संचय किया, इससे वह अपनी तीन साल की बच्ची को दो-तीन दिन तक पालती-पोपती रही। आज दोपहर से उसकी लड़की की दशा खराब होती गई। रोते-रोते वह अचानक चुप हो गई। उसका मौन न टूटने वाला मौन बन गया। फिर भी वह इधर-उधर भागी। उसने वैद्यजी से विनती की। वह साहूकार के पास गई, पर कौन सुनता है गरीबों का रोना ! इस संसार में अमीर की एक आह बहुत असर करती है किन्तु गरीब का क्रन्दन भी बेअसर होता है। अन्त में वह अपना धैर्य खो बैठी। आश्चर्य नहीं, वह अपने मस्तिष्क का सन्तुलन भी खो बैठी हो। मेरा विश्वास है कि उस पर विक्षिप्तता भी सवार हो गई थी। लगभग घण्टे भर पहले उसने पागल की तरह बकना शुरू कर दिया था। वह उन्मादग्रस्त प्राणी की तरह इधर-उधर भागती रही। कहती रही, 'मैं मर जाऊँगी, मैं मर जाऊँगी।' बच्ची को बन्दरिया की तरह उसने अपने सीने से चिपका रखा था। उत्तमचन्द का कहना है कि उसकी बेटी भूख से तड़प-तड़प कर मरी थी। किन्तु उसने उसे अपने से अलग नहीं किया। ममता भी बड़ी विचित्र है। आखिर वह अपनी बेटी को लेकर कुए में कूद गई। उसकी लाश को हम कई आदमियों ने मिलकर निकाला है।"

धरती फट पड़ी हो, इस तरह फफक कर रो पड़ी चमेली।

रोते-रोते उसने कहा, "वह मेरे बचपन की भायली (सहेली) थी। हम दोनों साथ-साथ खेलीं, और बड़ी हुईं। मुझे क्या पता था कि वह मुझे इस तरह छोड़कर चली जायेगी।"

शिव ने सबको धैर्य दिया, "रोने से कुछ नहीं होगा। जीवन में आँसू ही ही हमारी समस्याओं का समाधान नहीं हैं। उसके लिए हमें कुछ करना होगा।"

चमेली व्यथाभिभूत सी बोली, "शिव! वह बड़ी भोली थी। उसके मुख पर अपूर्व ओज और चमक थी। उसने कभी किसी को नहीं सताया। पति के भाग जाने के बाद वह अपनी बच्ची को सीने से चिपकाये हुए खेतों में काम करती थी। उसकी मेहनत देखकर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है। वह अकेली कुए से पानी लाकर खेत सींचती थी। जानते हो तुम, उसके घर से कोई भी पाहुना भूखा नहीं जाता था।"

शिव ने उसे ढांढस बँधाया, "शान्ति रखो चमेली, जो कुछ हो गया है, उसके लिए चिन्ता करना व्यर्थ है। मैं ठाकुर की हवेली से इसलिए आया था कि यह भजनानन्द किसानों को हमारे आन्दोलन के खिलाफ भड़का रहा है। मुझे ऐसा गुस्सा आ रहा है कि इसका सिर ही फोड़ दूँ।"

चमेली भड़क कर बोली, "तुम मुझे आज्ञा दो, मैं अभी उसका सिर फोड़ कर तुम्हें बताती हूँ।"

"नहीं, नहीं, केवल गाँव वालों को इससे सावधान करने की जरूरत है।" शिव ने तनिक घबराहट से कहा।

कुछ देर मौन छाया रहा।

अन्त में हरखू बोला, "तुम चिन्ता न करो, मैं इस भजनानन्द का माथा बिलकुल ठीक कर दूँगा।" वह क्षण भर चुप रह कर बोला, "चमेली, तू थोड़ी देर यहीं ठहर, मैं भीखली के दाह-संस्कार का प्रबन्ध करता हूँ।"

शिव ने कहा, "शामिल मैं भी होना चाहता था, पर मुझे अभी-अभी ठाकुर की हवेली पहुँचना है। सुना है अन्नदाता आने वाले हैं।"

× × ×

ठाकुर के महल के आगे किसानों का जत्था दस दिन से बैठा था। तीन किसानों ने भूख-हड़ताल कर रखी थी। उन्होंने प्रण कर लिया था कि जब तक ठाकुर का जुल्म खत्म नहीं होगा, तब तक हम अन्न का दाना मुंह में नहीं डालेंगे। ठाकुर खींवसिंह ने महाराजा की आज्ञा की अवज्ञा की थी, इसकी सूचना शिव ने महाराजा को पहुँचा दी थी। कल ठाकुर के कारिन्दों ने एक किसान मुरली को पकड़ कर इतनी बेरहमी से पीटा कि उसकी मौत हो गई। शिव व दूसरे किसानों ने जब इस जोर-जुल्म के विरुद्ध नारे लगाये और ठाकुर को न्याय कराने की चुनौती दी तब उनके सामने संगीनें तान दी गईं। फलस्वरूप निहत्थे किसान हिंसात्मक कार्यवाही करने को आतुर हो उठे। उन्होंने ठाकुर को मारने का आह्वान किया। किन्तु शिव ने उन्हें रोक दिया और तुरन्त दो आदमियों को महाराजा के हुजूर में भेजा। महाराजा तुरन्त रवाना हो गये। उसका एक कारण यह भी था कि यदि यह आग भड़क जाती तो केन्द्रीय शासन हस्तक्षेप करता और अंग्रेजो की नीति सदा ठिकानों को समाप्त करने की रही थी।

शिव लौट आया था। वह उत्तेजित किसानों को शान्त कर रहा था। उसने सबको समझाया, "हिंसात्मक कदम से हम कुचल दिये जायेंगे। हमें अपना दुखड़ा अन्नदाता को सुनाकर ही कोई ऐसा काम करना चाहिए जिससे हमें मुंह की न खानी पड़े।" चाँदनी में शिव और अन्य किसानों की मुखाकृतियाँ स्पष्ट दीख रही थी। इधर शिव किसानों को शान्त कर रहा था, उधर हवेली के पीछे से आग की लपटें भड़क उठी। किसान विस्मित से उन लपटों को देखने लगे। ठाकुर दहाड़ मार कर अपने महल से बाहर पालकी पर निकला, पालकी पर इसलिए कि वह जन्म से अपंग था और उपस्थित लोगों पर गालियाँ बरसाता हुआ बोला, "तुम लोगों की यह जुर्रत कि मेरे घर को आग लगाओ! मैं सबको गोलियों से भुनवा दूंगा।"

उसका इतना कहना था कि ठाकुर के कई कारिन्दे एक किसान को पकड़ लाये। यह किसान वस्तुतः किसान नहीं था, ठाकुर का ही आदमी था, जो

नगे वदन और फटी धोती में किसान-सा लगता था। ठाकुर के आदमी बुरी तरह से उसे पीट रहे थे। पीटने में सत्यता और कठोरता थी, क्योंकि कारिन्दे इस कार्य में अभिनय से अत्यन्त दूर रहते थे। वह घायल पक्षी की तरह चीख रहा था।

अचानक महाराजा की गाड़ी रुकी। उनके साथ ही दूसरे ट्रक में उनके तीस सिपाही थे। वे शस्त्रों से लैस थे। आग की लपटों को देखकर महाराजा का पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया। उन्होंने कड़क कर कहा, "यह आग किसने लगाई है ?"

"माई-बाप शान्ति से कार्य करने के बाद भी किसानों ने मेरे महल को जला दिया है।" ठाकुर खीवसिंह ने जमीन की ओर सिर झुका कर महाराजा का अभिवादन किया। अभिनय-प्रवीण ठाकुर ने तुरन्त अपने नेत्रों मे आंसू भर लिये। उसकी आकृति से ऐसा लग रहा था जैसे उसे गहरी व्यथा है।

महाराजा का शेष धैर्य जाता रहा। अपने भतीजे के घर को आग की लपटो में भस्म होते देखकर उन्होंने किसानों से सही स्थिति को समझने की चेष्टा ही नही की। शिव आगे बढा और उसने सही स्थिति को समझाने के लिए बोलना चाहा किन्तु उत्तेजित महाराजा ने उसे बोलने का अवसर ही नही दिया। उन्होंने अपनी बडी-बडी मूंछों पर ताव देकर फिर गर्म होकर पूछा, "तुम लोगो ने ऐसा अत्याचार क्यों किया ? क्या मैं यह सब सहन कर लूंगा ? जूंओं के खाने से घाघरे नही फेंके जायेंगे।

शिव ने आगे बढ़कर कहा, "अन्नदाता नै खम्मा, यह आग ठाकुर सा की खुद की लगाई हुई है। यह सब षड्यन्त्र है। विश्वास न हो तो फ्रेंक साहब से पूछ लीजिए।" पर राजाजी का चाकर फ्रेंक भी झूठ बोल गया।

ठाकुर खीवसिंह ने अपने समीप खड़े व्यक्तियों को दूर होने का सकेत किया और लाल-लाल आँखें करके कहा, "यह झूठ बोलता है। यह झूठ बोलता है। मैंने इसके आदमी को पकड़ा है। यह रहा वह आदमी।"

खीवसिंह ने अपने आदमी को जो अपराधी करार कर दिया गया था, महाराजा के सामने पेश करने को कहा। महाराजा की भृकुटियां तन गईं। क्रोध से कांपते अपने अंगों पर काबू करते हुए उन्होंने कहा, "तू कौन है ? तूने ऐसी हिमाकत किस बूते पर की ? तुझे किसने भड़काया ?"

उस आदमी का चेहरा उत्तेजित और भयानक वातावरण में पीला पड़ गया था। वह तनिक आगे बढ़ा और उसने दोनों हाथों से महाराजा के चरण स्पर्श किये। उसका अंग-अंग सूखे पत्ते की तरह कांप रहा था और उसकी आँखों मे भावी मृत्यु की आशंका थी। वह घिघियाता हुआ बोला, "यह आग मैंने लगाई है, मुझे शिव ने आग लगाने के लिए भेजा था।"

"तू कहाँ काम करता है ?"

"मैं ठाकुर सा के यहाँ गायों की देखभाल का काम करता हूँ।"

"नालायक, नमकहराम, जिस थाली मे खाता है उसी को छेदता है। ठाकुर भैरूंसिंह जी इस माद......गोली के जायड़े (जन्मे) को गोली मार दो।"

ठाकुर भैरूंसिंह पुलिस इन्सपेक्टर था। महाराजा की आज्ञा पाते ही उसने उस निर्दोष और कायर आदमी को गर्दन से पकड़ा और उस पर ठोकरें बरसाने लगा। वह आदमी जो दहेज में आया हुआ गोला (गुलाम) था, जमीन पर गिर गया। उसका सारा बदन धूल-धूसरित हो गया। उसकी नाक से खूनबहने लगा। उसे जिस निर्दयता और निर्ममता से पीटा जा रहा था, उसे देखकर समस्त भूखे-नंगे आन्दोलनकारी किसानों में भय की लहर दौड़ गई। वे प्रश्न भरी दृष्टि से एक दूसरे को देखने लगे। शिव इस असह्य अत्याचार को नहीं सह सका। निर्भीकता और साहस उसके बचपन के गुण थे, सो उसने गरज कर कहा, "यह आदमी मेरा नहीं ठाकुर का है। मैंने आज से पहले कभी इसे देखा भी नहीं।"

खींवसिंह क्रोध से कांपते स्वर में बोला—"चुप रह पाजी, यह सब तेरी ही लगाई आग है। मैं तुझे जिन्दा जमीन में गाड़ दूँगा।"

महाराजा ने ठाकुर को रोका। भैरूंसिंह तब तक उस आदमी को घसीटता हुआ दूर पेड़ की छाया में ले गया था। वह आदमी हृदय दहलाने वाले आर्त्त-स्वर में कह रहा था, "मुझे मत मारो, मैं बेकसूर हूँ, मैंने कोई कसूर नहीं किया, मुझे खुद ठाकुर-सा ने कहा, तो मैंने यह आग लगाई !"

खींवसिंह ने सब कुछ सुना। सुनकर भी वह बहरा हो गया।

शिव ने महाराजा के पाँव पकड़ लिये। वह आर्द्र-स्वर में बोला, "रहम कीजिए महाराज, इस निर्दोष को मत मरवाइए, मैं ईश्वर की कसम खाकर कहता हूँ कि मैं इसे नहीं जानता।"

महाराजा ने दम्भ से कहा, "राजनीति तुम अधिक जानते हो या मैं ?"

शिव ने इतना ही कहा, "मैं राजनीति और विद्वत्ता की बात नहीं करता। मैं केवल इतना ही जानता हूँ कि आप जिस आदमी को गोली से उड़वा रहे हैं, उसे मैं नहीं जानता, उसे मैंने आज से पहले देखा भी नहीं। इस पर भी आपको उस पर सन्देह है, तो इसे कानून के हवाले कर दीजिए।"

महाराजा उस तुच्छ किसान के मुँह से उपदेश की बातें सुनकर आवेश में आ गये। कड़क कर बोले, "मेरा न्याय मेरा जूता है।"

दूर वृक्ष की छाया में गोली की भयानक आवाज हुई। एक इन्सान चिंघाड़ कर शान्त हो गया। वह कुछ देर तक जलहीन मछली की तरह तड़पा और फिर निर्जीव हो गया।

शिव ने अपने कान बन्द कर लिये।

कुछ किसानों के मुँह से 'शिव-शिव' की ध्वनि हुई।

कुछ किसान पाषाणवत् हो गये।

महाराजा ने व्यग्रता से कहा, "हम न्याय की व्यस्तता में यह भूल ही गये कि आग भी बुझानी है।" और उन्होंने अपने साथ आये आदमियों को आज्ञा दी। बाद में शिव की गिरफ्तारी का हुक्म देकर चले गये।

× × ×

२

शिव ठाकुर की कोठरी में बन्द था।

उस कोठरी में श्मसान सी शान्ति और मृत्यु-सा सन्नाटा था। अपनी बीट पर पहरा देते हुए जमादार के नालदार जूतों की खट्-खट् उसे हथौड़े की चोट-सी लग रही थी। वह प्राणहीन की तरह दीवार का सहारा लिये हुए सोच रहा था—"मैं बचपन से इन नादिरशाहों के जुल्म से लड़ता आया हूँ। न इनके पास न्याय है और न धर्म। पुण्यात्मा कहलाने वाले ये राजे-महाराजे

अपने स्वार्थ और हित के पीछे साधारण सी साधारण बात को तूल देकर विपक्ष को परास्त करते हैं। गोलियां चलवाते है। आदमी को मूक पशु की तरह निर्दयता और बेदर्दी से मरवा देते हैं। आह ! बेचारा वह आदमी ! बेचारा वह गुलाम !" शिव की आँखें भर आयी। उसके गालों पर अश्रु की धारा बह चली।

वह रात्रि के भयानक क्षणों में पत्थर के बुत की तरह बैठा रहा। उसकी आंखो मे जरा भी नीद नही थी। उसे जरा भी चैन नही था। वह अवश पंछी की तरह उस हवालात की गन्दी और अँधेरी कोठरी में फड़फड़ाता रहा, तड़पता रहा। रह-रह कर उसे अपना अतीत याद आ रहा था। अतीत की एक-एक घटना उसके समक्ष नाच उठी। उसने अपने जीवन के कुछ धुंधले चित्र स्पष्ट किये, तभी भैरूसिंह आया और उसने शिव की गर्दन पकड़कर जोर से धक्का मारा और उसे कोठरी के बाहर धकेल कर कहा, "आ, तुझे अब राजधानी ले जाया जायगा।"

शिव टूटे हुए इन्सान की तरह उसके पीछे चला। उसके चेहरे पर घोर मुर्दनी छा गई।

रेल तेज रफ्तार से जा रही थी और उसी रफ्तार से उसे अपना जीवन याद आ रहा था। अपना अतीत••••••

ठाकुर केसरीसिंह की इस विशाल और मजबूत चहार-दीवारी के भीतर से आज से बाईस वर्ष पूर्व जब ठाकुर शराब के नशे में मदोन्मत्त था और इन्सानियत की चमक को विहँस-विहँस कर समाप्त कर रहा था, तब दो युवतियाँ अपने पहरेदार को दो-दो सौ रुपयों के जेवर देकर भागी थीं। इन औरतों में एक किसान की बेटी जमना थी और दूसरी धोबिन नैना थी। ये दोनों रात के अँधेरे में भाग रही थी। उन्हें भगाते हुए हिजड़े ने कहा था, "तुम जल्दी ही यहां से दूर, बहुत दूर चली जाना।"

वे दोनों चल पड़ी थीं।

उसके पास कुछ धन था, वस्त्र थे और कुछ खाने का सामान था।

नैना ने थोड़ी दूर चलकर एक प्याऊ में विश्राम किया। यह प्याऊ नाम मात्र की प्याऊ थी। टूटी-फूटी झोंपड़ी में दो-चार मटकियां रखी हुई थीं। इन मटकियों के पास एक पानी पीने का लोटा था, जिससे आते-जाते यात्री प्यास

बुझा लेते थे । इस प्याऊ में रात की शून्यता भयावह लग रही थी । उन दोनों ने बैठकर परामर्श किया, "अब क्या करें बहन ?"

"मैं कुछ नही जानती ।" नैना ने निराशा से कहा ।

"ऐसी दिल डुबाने वाली बाते न कर, ऐसा करेगी तो हम वापस ठाकुर सा की जनानी ड्योढ़ी मे चल पड़ेंगी ।"

"नहीं-नहीं बहन, ऐसा कहेगी तो मैं कुए में कूदकर अपनी जान दे दूंगी। उस नरक मे सड़ने से तो मौत चोखी ।"

"फिर कुछ बताती क्यों नही ?"

नैना ने जमना का हाथ अपने हाथ में ले लिया । उसकी आंखो में क्या भाव था, वह अंधेरे के कारण नही देख पाई, पर उसका गला भर्राया हुआ था, "मैं कुछ नही जानती । मैंने यह भी नही सोचा कि भागने के बाद क्या नतीजा निकलेगा ? पकड़े जाने के बाद अपने साथ कैसा वर्ताव किया जायगा ? हाँ सरोज को जो सजा दी गई है, उसको पाने से अच्छा है कि मर जायें ।"

जमना का हृदय भर आया । वह रुकती-रुकती बोली, "मैं वह सजा भोग चुकी हूँ ।···बरसात का मौसम था । भीनी-भीनी हवा में मन नाच रहा था । मैं उन दिनों ठाकुर के हुजूर से निकाल दी गई थी, क्योकि उनके हुजूर में कुटनी चन्द्रावती ने एक दूसरी लडकी को पेश कर दिया था । वह लड़की जवान और सुन्दर थी । उसके आते ही मेरे साथ दुर्व्यवहार किया जाने लगा । हालांकि मेरे बाप ने जब मुझे गरीबी मे बेचा था, तब उसको यह आश्वासन दिया गया था कि तुम्हारी बेटी रानी बन कर रहेगी, किन्तु ठाकुर मेरे साथ रखैल का व्यवहार करता था । वह शराब और अफीम का नशा करके मेरे शरीर को इस तरह नोचता था जैसे कुत्ता मरे हुए पशुओं के मांस को नोचता है । कभी-कभी मैं दु:ख से तड़प उठती थी और मेरी इच्छा होती थी कि मैं हवेली के सबसे ऊँचे बुर्ज से कूद कर अपनी जान दे दूँ, पर मैं इस काम में एकदम असफ रही । रात के सन्नाटे मे जब ठाकुर के कमरे से घुंघरुओं की झनकार सुन पड़ती थी, तब मैं बुर्ज की दीवार पर खड़ी होकर जीवन और मृत्यु के बी झूलती रहती थी । बेचैनी और दु:ख, पीड़ा और मोह । अजीब उलझन ! सच नैना, केवल इस भ्रम में कि मैं रानी हूँ, मैं जीवित रही । लेकिन मैं यह नहीं जानती थी कि सत्य कुछ और ही है । कुछ दिन के बाद मेरे साथ एकदम

उपेक्षा और अपमानजनक वर्त्ताव किया जाने लगा। दूसरी अभागी रखैलों की तरह मुझे भी ठाकुर सा के लिए तड़पना पड़ा। एक दिन की बात है—

पूर्णमासी का चांद आकाश के बीचोंबीच चमक रहा था। पातुरें नृत्य और संगीत में तन्मय थीं। ठाकुर सा शराब में मतवाले झूम रहे थे। नयी लड़की सोना उनके पास बैठी थी। तभी मैं उनके कमरे में घुस पड़ी। मुझे देखते ही ठाकुर का नशा उतर गया। पातुरों के गीत रुक गये और सोना तन कर बैठ गई जैसे उसका बड़ा अपमान हो गया हो। उसके समीप ही मरजीदानें बैठी थी जो ठाकुर की अत्यन्त कृपापात्र थीं। कुछ घाघरवालियाँ, जो जनानी ड्योढ़ी में रहने वाली रानियों, पासवानो, पर्दायतणों और मरजीदानों की सेवा के साथ-साथ उनके सन्देश पहुँचाया करती थी, खड़ी-खडी सोना व अन्य युवतियों पर पंखा झल रही थी व उनकी माँगों को पूरा कर रही थी, मुझे देखते ही वे स्तब्ध हो गईं।

ठाकुर आये और बोले, "तुम किसके हुक्म से भीतर आई हो ?"

"अपनी मर्जी से।" मैंने तन कर कहा।

"जमना ! जानती नहीं, इसका नतीजा क्या निकलेगा ?"

"मैं कोई गोली (दासी) और रखैल नहीं हूँ। आपकी रानी हूँ, आपने मुझ अपनी पटरानी बनाया था।"

ठाकुर ने गरज कर कहा, "चुप रह हरामखोर, गोली, जबान लड़ाती है ! अरे कोई है ?" उनका कहना था कि चार पहरेदार आये। मेरी ओर संकेत करके ठाकुर सा बोले, "इस साली को बीस हण्टर लगाओ।"

ठाकुर की अपनी अदालत है।

उसके अपने जल्लाद हैं।

मुझे तुरन्त भैरव नामक हिजड़े को सौंपा गया। भ्रम कच्चे महल की तरह टूट गया। हिजडे ने तार और चमडे का हण्टर सँभाला और मुझे अर्ध नंगा करके एक खम्भे से बाँध दिया। फिर उसने सबको वहाँ से जाने का संकेत किया। मैं मन ही मन तड़प रही थी।

एकान्त !

मैं डरी-डरी सी, सहमी-सहमी-सी खड़ी थी।

उसने हण्टर सम्भाला और तड़ातड़ मुझ पर बरसाने शुरू कर दिये।

मैं चीखी और तड़प कर शान्त हो गई।

जब मुझे होश आया, मैं उस हिजड़े के साथ सोई हुई थी। वह हिजड़ा जंगली आदमी की तरह मेरे अंग-अंग को चूम रहा था। पौरुषहीन वह इन्सान कितना नीच और आदमखोर था, यह मैं बयान नहीं कर सकती। पर इतना कहती हूँ कि ये हिजड़े बड़े घिनौने और विकृत होते हैं। मुझे चूमते हुए उसने कहा, "मेरा कहना मानोगी तो सुख पाओगी।" उसके हाथ में हण्टर था।

मैं उस हण्टर के नाम से पीली पड़ गई। बोली, "तुम मुझे हण्टर से मत मारना।"

"मैं नही मारूँगा, लेकिन तुम्हें मेरी रानी बन कर रहना पड़ेगा।"

"नहीं, मैं तुम्हारी रानी नहीं बनूंगी। मैं ठाकुर सा की रानी हूँ, उनकी ठकुरानी हूँ।"

वह डरावना अट्टहास कर उठा।

वह बोला, "वे दिन गये जब रानीजी फूलों की सेज पर सोती थी और फूलों पर चलती थी। अब इसी में भला समझिए कि काँटों का रास्ता न मिले।"

मैं उसका तात्पर्य समझ गई। कुछ नहीं बोली। उसकी कृपा से मुझे और भयानक दण्ड नहीं मिला। सरोज की तरह मेरे बालों को नही मुड़वाया गया और न मुझे काला मुँह करके अँधेरी कोठरी में बन्द किया गया।......इसके बाद मुझे ऐसा लगा कि मैं मर जाऊँगी। फिर तुम आईं। तुम्हें भी वही शीश-महल दिखाये गये।

मैना ने कहा, "मुझे मेरे पति के कारण यहाँ आना पड़ा। कामचोर मेरा पति मुझे हर रोज सताता था। एक दिन उसने मुझे बड़ी निर्दयता से पीटा। लाचार होकर मैं भाग खड़ी हुई। इसके बाद मैं चन्द्रावती से मिली और उस राँड ने मुझे झूठे-सच्चे प्रलोभन देकर यहाँ ला पटका। मेरे पेट का बच्चा मेरे अपने पति का है। जब ठाकुर को यह मालूम हुआ कि मैं गर्भवती हूँ तो उसने चन्द्रावती के बाल पकड़ कर घूँसे मारे और गुप्तांग में मिर्चें भरवा दी। वह बेचारी रात भर पागलों की तरह चीखती रही, पर यहाँ कौन बैठा है जो अभागी-अबलाओं का रोना सुने!......जमना, कभी-कभी ऐसा लगता है कि ईश्वर है ही नहीं।"

रात ढल रही थी ।

जमना ने आहिस्ते से कहा, "अब क्या करें ?"

नैना ने कहा, "मैं एक उपाय बताऊँ ?"

"बता ।"

"तू मेरा मर्द बन जा ।"

जमना सकते में आ गई । वह हतप्रभ-सी नैना की ओर देखता रहा ।

"हाँ, तू मेरा मर्द बन जा ।" उसने विश्वास के साथ कहा, "तू मेरा मर्द न जायगी तब हमें कोई नहीं पहचानेगा । हम कहीं सूने गाँव में जाकर बस ायेंगे और धीरे-धीरे अपनी जिन्दगी गुजार देंगे ।"

"सच ?"

"हाँ !"

"मुझे यह बड़ा अजीब लगता है । विश्वास नहीं होता कि हम यह सब कर गे ।"

नैना ने जमना के दोनों हाथ मजबूती से पकड़ लिये ।

आकाशगंगा शान्त और स्निग्ध थी ।

दोनों ने कुछ खाया-पिया और चल पड़ी—नवीन पथ पर नये यात्रियों की ारह हौले-हौले ।

कोई राहगीर अपने मधुर स्वर में व्यथा भरा गीत गा रहा था—

> काली रे काली काजलिए री रेख रे,
> मूरोड़े बुर्जों पर चिमकै बीजली,
> जुग जीवो म्हारी मूमल चालो नी,
> लश्करिए ढोला'रे देश···

नैना ने कहा, "प्रेम दीवानी 'मूमल' की कहानी तुम्हें आती है ?"

"हाँ !" जमना ने कहा ।

"सुना !"

जमना ने अपने हिस्से के सामान की गठरी सिर पर रखी और चलते हुए कहा, "तू पगडण्डी का ध्यान रखना । ऐसा न हो जाय कि कहानी की मस्ती में रास्ता ही बिसर जाय ।"

"तू चिंता-फिकर मत कर।"

दोनो चली।

जमना ने कहा—राजकुमारी मूमल का प्यार महेन्द्र से हो गया। महेन्द्र हर रात ऊँट पर सवार होकर आता था और भोर के तारे के साथ वापस चला जाता था। दिन बीतते गये।

मूमल के एक छोटी बहन थी सूमल।

बडी नट-खट और चचल।

एक दिन उसने वातो ही बातो में मूमल से कहा, "मै बहनोईजी को छकाऊँगी।"

"कैसे ?"

"मर्द का भेष बनाकर तुम्हारे संग सो जाऊँगी।"

मूमल हँस पड़ी। उसने स्नेह से सूमल के गालो पर चपत लगा दी। चपत खाकर सूमल चिड़िया की तरह नाचती-फुदकती भाग गई।

आधी रात!

मूमल सूमल से लिपट कर सो गई। सूमल ने 'ढोली' का भेष बना रखा था, क्योंकि मूमल के महल में मर्दों का प्रवेश वन्द था, केवल गाने-बजाने वाले ढोली ही उसमे प्रवेश पा सकते थे।

महेन्द्र बडा फासला तय करके आया।

उसने कक्ष मे घुसते ही यह नज्जारा देखा। क्रोध से जल उठा। बिना किसी से पूछे, बिना किसी के सुने, वह उल्टे पाँव लौट गया। दासियो ने यह सूचना मूमल और सूमल को दी। मूमल बावरी बनी महेन्द्र के पीछे दौड़ी, जोर-जोर से आवाज भी लगाई, पर महेन्द्र नही लौटा, नही लौटा।

पल, दिन, रात और महीने बीते।

जमना का गला भर आया—प्रेम दीवानी मूमल अपनी ड्योढी के झरोखे में बैठी हुई महेन्द्र का इन्तजार करने लगी।

जमना भावुक हो उठी—

हर कदम की आहट उसके निर्जीव प्राणों मे स्पन्दन भर देती थी। वह द्वार की ओर भागती थी। उसके नयनों मे व्यथा के आँसू भर आते थे, लेकिन महेन्द्र की जगह वह किसी और को देखती तो हताश हो उठती। सिसक-सिसक

कर रो पड़ती थी। सखियाँ उसे धीरज बँधाती थीं। मूमल अपने आपको हर घड़ी और हर पहर कोसती रहती थी। हजारों बार सन्देश भेजे गये, पर निर्मोही महेन्द्र नहीं आया, नहीं आया। प्रतीक्षा करते-करते मूमल ने उमर गुजार दी। मर गई। आखिरी साँस तक उसने महेन्द्र का ही नाम लिया—काश वह उसे एक बार अपनी सूरत ही दिखा जाता।""""तब से आज तक मूमल का यह विरह-गीत हमारे दिलों को झकझोर रहा है।

जमना चुप हो गई।

प्राची के आँगन में सूर्य देवता के आगमन में ऊषा ने अरुणिम आँचल ओढ़कर नृत्य करना आरम्भ कर दिया।

नैना ने उल्लास से कहा, "जमना, भोर हो रही है।"

"सामने गाँव भी है।"

और दोनों ने जल्दी-जल्दी कदम बढ़ाये।

× × ×

४

...

छोटा-सा गाँव।

कच्ची मिट्टी के दो-चार, शेष घास-फूस के झोंपड़े। एक साहूकार की दूकान। एक पंडित जो वैद्य भी है और तांत्रिक भी और जन्म से लेकर मरण तक के सारे काम करा देता है।

जमना और नैना एक झोंपड़े के आगे पहुँचीं। एक दस वर्ष की बालिका ने उन दोनों का विस्मित दृष्टि से स्वागत किया। जमना ने अपने होठों पर मुस्कान बिखेरते हुए उस बालिका को अपनी ओर आने का संकेत किया। बालिका धीरे-धीरे कदम उठाती हुई उसके पास आई और चुपचाप खड़ी हो गई।

"यह घर किसका है, बाई?"

बालिका ने भोलेपन से उत्तर दिया, "मेरे बाप का है।"

"तेरे बाप का क्या नाम है ?"

"सखाराम।"

"क्या करता है ?"

"खेती।"

"जाट हो क्या ?"

"हाँ !"

"तेरी माँ घर में है ?"

"हाँ !"

"जरा उसे बाहर भेज। कहना पावणे (मेहमान) आये हैं।"

बालिका चली गई।

जमना ने कहा, "यहीं खा-पीकर चल देंगे।"

नैना ने कहा, "यहाँ से कैंची भी माँग लेना।"

"क्यों ?"

नैना विहँस पड़ी, "तुझे मेरा मोट्यार (पति) जो बनाना है।"

"धत् !"

"देख जमना, यह दुनिया बड़ी जालिम है, इसमें छिप कर रहना आसान नहीं है। जैसा कहती हूँ, वैसा करली जा, वर्ना ठाकुर के आदमी पकड़कर अँधेरी कोठरी में बन्द कर देंगे। केवल मूँग की दाल खाने को देंगे और वह हण्टर ! जमना !"

जमना जनानी ड्योढ़ी की नारकीय यंत्रणाओं से परिचित थी, इसलिए नैना की बात तुरन्त मान ली।

तभी घूँघट में लिपटी एक साधारण स्त्री आई और उन दोनों के सामने खड़ी हो गई। नैना ने राम-राम करके कहा, "हम लोग परदेशी हैं, यहाँ पर दो घड़ी विश्राम करना चाहते हैं। क्या आप हमारी मदद करेंगी ?"

"क्यों नहीं ! इस दूजी झोंपड़ी में आप दोनों ठहरिए। मैं आपको खाट लाकर देती हूँ। और जो भी रूखी-सूखी है, वह आपके सामने परसती हूँ।"

"रोटियाँ हमारे पास हैं।"

"वह अपने पास ही रखना। हमारे यहाँ हमारी ही रोटियाँ खानी पड़ेंगी।"

जमना ने स्नेहपूरित स्वर मे कहा, "आप क्यों कष्ट करती हैं ?"

"इसमें कष्ट !"

"कष्ट तो होगा ही !"

"ना-ना, इसमें मुझे कोई कष्ट नहीं होगा। रोटियां हमारी ही खाना होंगी !"

जैसी आपकी मर्जी।"

घर की मालकिन अन्दर चली गई।

कुछ देर तक सन्नाटा छाया रहा। जमना और नैना दोनों अपनी-अपनी गठरियां खोल कर पहनने के कपडे निकालने लगी।

बालिका 'किशोरी' ने आकर कहा, "आपके लिये पानी लाऊँ ? मां कहती है कि आप नहा-धो लें।"

'पानी हम खुद ही कुए से भर लाएंगी। तू चलकर हमें कुआ बता दे।"

किशोरी झट से एक मटकी ले आई। मटकी खाली थी। नैना ने झट से उसे उठाकर कहा, "जमना, मैं पानी भर लाती हूँ।"

"भर ला, पर कुआ है कहां ? अधिक दूर हो तो मैं तेरे सागे (साथ) चलूं।"

किशोरी ने चलते हुए कहा, "बहुत ही पास है। उस धोरे (टीबे) के पीछे।" और वह चली गयी।

जमना ने एक बार फिर कहा, "चलूं क्या तेरे सागे ?"

"बस रहने दे। तू कैंची लेकर अपने बाल साफ कर।" नैना की आंखों में मस्ती भर आई। चुटकी लेकर वह हँसकर बोली, "घबराती क्यों है, तुझे अपना मर्द बना रही हूँ। तेरा हुक्म मानूंगी, तेरा घूंघट निकाल कर अडीक (इन्तजार) रखूंगी। और रात को तेरी सेज सजा कर रखूंगी।"

जमना भड़क कर बोली, "मैं अपने बाल नही काटूंगी। देख मैंने अपने बालों को कितना तेल पिलाया है। छाछ से धोया और कई बार घी से चुपड़ा (बालों में तेल लगाने को 'चुपड़ना' कहते हैं) है। ना भाई ना, मैं तेरी फाकी (गप्प मे)नही आऊंगी।"

"तू बड़ी निगोड़ी है !"

"फिर तू क्यों नही कटाती ?"

नैना चेहरे पर कृत्रिम गम्भीरता लाती हुई बोली, "दूसरे को खसम बनाने मे किसको आनन्द आता है ? जनानी ड्योढ़ी में कितने खसम थे ? हाय राम, उनके हुक्म सहते-सहते मेरी जान निकली जाती थी। मुझे खसम नाम के जन्तु से ही चिढ़ है। किन्तु लाचारी भी कोई चीज होती है। मुझे भी बनाना पड़ रहा है। वाह रे मेरे भाग्य !"

जमना ने अपने शब्दों में जोर देकर कहा, "नैना, मैं अपनी सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि मुझे तू अपना मर्द न बना। फिर औरत मर्द बन कर कैसे रह सकती है ?"

"रह सकती है, हिम्मत रख।"

"ना...... !"

बीच मे नैना बोली, "तू किये-कराये पर पानी फेरेगी।"

"लेकिन तू क्यों नही बनती ?"

"देख जमना, बिना दाढी-मूँछों वाले भी मर्द होते हैं। किन्तु आज तक कोई ऐसा मर्द नही देखा गया जो बच्चा भी पैदा कर सकता हो। मैं अगर मर्द बनूँगी तो मेरे पेट का बच्चा ?"

जमना अप्रतिभ-सी नैना को देखती रही।

"इसलिए मेरी भायली (सहेली), मर्द तुझे ही बनना पड़ेगा।" कहकर नैना मटकी को बजाती हुई चल पडी।

वह उस मुक्त वातावरण में स्वतंत्र पंछी की तरह चहक पडी—

पणिहारी ओ लो
भरिया-भरिया समंद तलाब
बाला जो।
कंणे चिणाया कुवां-बावड़ी ओ पणिहारी ओ लो
छिणगारी ओ लो
बावेजी चिणाया कूं समंद-तलाब बाला जो....

दूरागत आती हुई ध्वनि धीरे-धीरे लोप होती गई।

× × ×

"आप बाल क्यों काट रही हैं ?" घर की मालकिन ने हठात् जमना से यह

प्रश्न किया। जमना चौंक पड़ी। तत्क्षण उसे कोई उपाय नहीं सूझा। वह अपलक दृष्टि से घर की मालकिन को देखती रही।

"इतने चोखे बालों को काटने से क्या लाभ होगा ?"

"क्या करूँ बहन !" सोच कर जमना बोली, "बालों में जूएँ बहुत हैं। रात को सोने भी नहीं देतीं। फिर……?" जमना के चेहरे पर वेदना छा गई। उसकी वेदना की प्रतिक्रिया आगन्तुक महिला पर अत्यन्त सौहार्द्रपूर्ण हुई। घर की मालकिन के मुख पर गहरी करुणा चमक उठी। वह मैत्री-भाव से बोली, "फिर क्या बहिन ?"

"फिर जिसका स्वामी नहीं है, उसे हार-शृंगार की क्या जरूरत है ? उसे सिर्फ दो रोटी और एक लँगोटी ही चाहिए। एक बार मैं हरद्वार में काट कर आई थी, पर अब फिर बढ़ गये हैं।"

घर की मालकिन यह सुनकर दुःखी हो गई। उसके मुख की सौन्दर्य-सुषमा ग्रहण लगे सूर्य की तरह निस्तेज हो गई।

"आप क्यों दुःखी हो गयीं ?"

"स्त्री के लिए पति ही सब कुछ होता है ! पति के बिना जवन-जगत सब जहर समान होता है। सच बहिन, मैं उनकी एक पल की देर भी नहीं सह सकती। बस, बावरी बन जाती हूँ। कभी-कभी यह छोटी-सी किशोरी भी मुझे टोक देती है। पर मेरा मन ही कुछ ऐसा है। पागल रहता है उनके लिए !"

दोनों महिलाएँ कुछ देर तक एक-दूसरे को प्रश्न भरी दृष्टियों से देखती रहीं।

सूर्य आकाश में ऊँचा चढ़ रहा था। उसके प्रकाश में रेत के धोरे सोने से चमक रहे थे। जमना ने अपने बालों की ढेरी उठाकर भावना भरी दृष्टि से प्रकृति के उस सुरम्य दृश्य को देखा। गत चार वर्ष से पत्थर की निर्जीव दीवारों के भीतर गुलामी का जीवन-यापन करने के बाद यह दृश्य उसे अत्यन्त सुहाना लग रहा था। उसने अपने बालों को गड्ढा खोद कर गाड़ दिया। तभी नैना मटकी सिर पर रख कर आती दीखी। वह जिस ढंग से बल खा-खा कर चल रही थी, उस ढंग को देख कर जमना को हँसी आ गई। नैना के पास आते ही उसने मुस्का कर कहा, "अरे क्यों मटक-मटक कर चल रही हो, कहीं कमर में लचक आ गई तो ?"

"तो मुझे तकलीफ होगी।"

"तेरी तकलीफ मुझे कहाँ चैन लेने देगी ?"

"अफीम खाकर पड़ी रहना।" उसने एक झटके से अपने सिर की मटकी नीची कर दी।

घर की मालकिन ने कहा, "रोटियाँ तैयार हैं। झटपट निपट कर खा लो।"

"किशोरी के बाप कब आयेंगे ?"

"उनका भाता (खाना) लेकर मैं खेत जाऊँगी।"

"फिर आप चली जाइए, हमें किशोरी खाना खिला देगी।"

किशोरी ने माँ के सम्मुख जा कर कहा, "हाँ-हाँ, मैं इन्हें खाना खिला दूँगी। तू चली जा। साँझ को जल्दी आना।"

"हाँ-हाँ, अच्छा मैं फिर जाती हूँ।" घर की मालकिन चली गई।

भोजन से निवृत्त होकर उन दोनों ने श्रृंगार किया। बाल-सुलभ हृदय की समस्त कोमलता अपने स्वर मे उँड़ेल कर किशोर ने पूछा, "आप कहाँ जा रही हैं। मुझे बताएँगी ?"

"हम तीर्थ-यात्रा करने जा रही हैं ?"

"कहाँ ?"

"दूर, बहुत दूर।"

"कितनी दूर ?"

"बहुत दूर, तू उसके बारे में सोच भी नहीं सकती।"

"फिर भी ?"

"काशी, प्रयाग, हरद्वार।" नैना एक क्षण रुकी। उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में ममता दीप्त उठी थी। बोली, "तू हमारे सागे चलेगी ?"

"नहीं।"

"क्यों री ?"

किशोरी के स्वर में माधुर्य था, "मैं माँ को नहीं छोड़ सकती। उसके बिना मुझे कुछ भी चोखा नही लगता।"

"फिर तू अभी अपनी माँ के सागे क्यों नहीं गई ?"

"सदा जाती हूँ, पर आज मन नहीं करा। मुझे आप दोनों बहुत चोखी लगती हैं।" तब उसकी तर्जनी का संकेत जमना की ओर था, "इन्होंने अपने

बाल काट लिये हैं। इनके बाल बहुत ही बड़े-बड़े और काले थे। जब ये बाल काट रही थीं तब मैं सोच रही थी कि मैं इन बालों को उठाकर अपने इन छोटे-छोटे बालों में जोड़ लूँ। मेरे भी बाल आपकी तरह बड़े-बड़े हो जायेंगे। मैं भी आपकी तरह फूटरी (सुन्दर) लगने लगूँगी।"

जमना के अन्तस् में वात्सल्य का ज्वार उठा। उसने किशोरी को अपनी बाँहों में भर कर उसके पराग लगे कपोलों पर चुम्बन अंकित कर दिये। उस स्पर्श ने जमना के हृदय में शाश्वत संगीत की अनुपम झंकार उत्पन्न कर दी।

"तू फूटरी बनना चाहती है ?"

"हाँ।"

"क्यों ?"

किशोरी लजा गई।

"लजाती क्यों है ? बोल, बोल !"

"माँ कहती है कि फूटरी छोरी को सब प्यार करते हैं"

"सच ?"

किशोरी ने उसे प्रश्न भरी दृष्टि से देखा।

जमना ने नैना की ओर देखकर कहा, "नैना, कब यहाँ से चलना पड़ेगा ?"

"थोड़ी देर नींद ले लूँ, फिर चलेंगे।"

किशोरी भीतर चली गई और वे दोनों सो गयीं।

सूरज के ढलने के साथ ही वे दोनों पुनः अपनी यात्रा पर चल पड़ी।

× × ×

एक और गाँव ! इस गाँव का जमींदार ब्राह्मण था। महाराजा के बुजुर्गों की अखण्ड सेवा करने के बाद इस ब्राह्मण के कौन से पितामह को यह गाँव दानस्वरूप मिला था, यह वर्तमान जमींदार दामोदरप्रसाद भी बिना दान-पत्र देखे नहीं बता सकता था। दामोदर की उम्र इस समय पचास-पचपन की थी। उसके चौड़े मुख पर चमकती झुर्रियाँ जीवन के कठोर अनुभव की स्पष्ट प्रतीक थीं। शैशव का अपरिपक्व भोलापन, तारुण्य का अल्हड़पन और बुढ़ापे की गम्भीरता की यात्राएँ किये हुए उसका ललाट तेजस्वी तपस्वी-सा लगता

था। उसके सिर पर गो-पद सी चोटी थी जो उसकी धार्मिक कट्टरता की प्रतीक थी। गले में रुद्राक्ष की माला कहती थी कि यह शिवजी का भक्त है। आवाज बुलन्द और स्वभाव में कोमलता।

सारा गाँव उसके कुशल शासन में खुशहाल था। जमीदारी का नियम था कि कोई भी आदमी गाँव में हरा वृक्ष नहीं तोड़ सकता, बरसाती नदी के अतिरिक्त यह पशुओं को तालाब मे नहीं नहला सकता था, क्योंकि तालाब का पानी भी निम्न वर्ग की जातियाँ पीने के काम में लाती थी। कुओं पर कपड़े धोने व साबुन लगाने की सख्त मुमानियत थी।

गाँव में बीस-पच्चीस घर ब्राह्मणों के, सात सौ जाटों के, सौ राजपूतों के और सौ अन्य जातियों के थे, जिन मे हरिजन भी सम्मिलित थे। डेढ़ सौ वैश्य रहते थे।

जमना अब सम्पूर्ण रूप से मर्द बन गई थी।

नैना ने घाघरा और जयपुर की सुप्रसिद्ध चूनड़ी ओढ़ रखी थी। घूघट में उसका अनुरूप सौन्दर्य आकर्षण का केन्द्र बना हुआ था। वैसे नैना की उम्र भी सत्रह-अठारह वर्ष की ही थी। नैना ने अपनी प्रकृति के अनुसार जमना को परिहास भरे स्वर से पुकारा, "ओर सुनते हो जी, मेरे पाँव थक गये हैं।"

कँधे पर लकड़ी के सहारे गठरी को लटकाये जमना बोली, "पाँव थक गये हैं तो बैठ कर दबा ले। मैं अब गाँव मे जाकर ही आराम करूँगी।"

नैना भागती हुई आई। पैजनियाँ गीत गा उठी। उसने जमना का हाथ पकड़ कर कहा, "करूँगी नहीं, करूँगा। अब तू जमना नहीं, नैना का खसम है, खसम। 'करूँगी' और 'करूँगा' सारा मामला चौपट कर देगा।"

जमना ने चिढ़कर कहा, "कर दे तो मैं हनुमानजी को सवा पाँच आने का प्रसाद चढाऊँ। मैं इस बनावटी भेष से तंग आ गई हूँ। अकड़ कर चलते चलते मेरी कमर में दर्द होने लग गय है।"

"पाँच-सात रोज में आदत पड़ जायगी।"

"तुम आदत की बात कहती हो, मैं समझती हूँ—पाँच-सात दिन मे मेरी अर्थी ही निकल जायगी।"

"थूक तेरी जबान से, ऐसी अशुभ बोली बोलते तेरी जीभ नहीं जली?" जमना की आँखें सजल हो उठीं। उसने भर्राये स्वर में कहा, "तुझे बना-

वट दुःख देती है। क्या जीवन भर इस बनावट और भाग-दौड़ के पीछे परेशान होते रहेंगे। घोर दरिद्रता में बचपन बीता, जवानी में भाग्य ने महाराजा की रानी बनाया, किन्तु भाग्य का वह क्षणिक सुख जीवन में सदा का दुःख दे गया। उस जीवन को याद करती हूँ तब लगता है—क्या वह सुख मुझे फिर कभी मिलेगा? सच कहती हूँ नैना, मैं महाराजा की सदा कृपापात्र बनी रहती, पर वहाँ के आदमियों तथा कुटनियों की चालबाजियों ने मेरे जीवन में जहर घोल दिया। मुझे महाराज की निगाहों मे गिरा दिया।"

नैना ने उसके कन्धे को मजबूती से पकड़ा। उसकी आँखों मे वेदना तरलता बनकर चमक उठी। अपनी भावनाओं को वह रोकती-रोकती बोली, "तू उस राक्षस को देवता कहती है। मैं समझती हूँ कि ऐसा पापी इस धरती पर नही होगा। तू नही जानती कि उसने अबलाओं के साथ पशुओं-सा व्यवहार किया है। वह धरती पर कलंक है, बोझ है। मैं उसे हत्यारे से कम नही मानती। मेरा वस चले तो मैं उसे शूली पर चढ़वा दूँ।"

"तू आवेश मे भर गई है। तू उसे नीच कहती है और मैं उसे महानीच कहती हूँ, पर यह भी सच है कि मैं ठाकुर के घर कुँवारी ही आई थी। मंत्रों को साक्षी बनाकर उसने मुझसे विवाह भले ही न किया हो, पर उसने मेरे कुँवारेपन को खण्डित किया था। उसने मुझे कुछ दिन अपनी पत्नी कहा था। और मेरा विचार है कि मैं अब परित्यक्ता का जीवन व्यतीत करूँगी। तू नहीं जानती कि उस हीजडे का स्पर्श भी मुझे कितना पीड़ादायक लगता था!"

नैना ने कहा, "उस पापी के पीछे तुझे भी नरक मिलेगा। उसका कहीं भी उद्धार नहीं है। उसकी आत्मा को कही भी शान्ति नही मिलेगी। उससे किंचित् भी स्नेह रखने वाला नरक का कीड़ा बनेगा।"

जमना हँस पड़ी, "हर मनुष्य को अपने कर्म का फल मिलता है। उसका पाप मुझे नही सतायेगा और मेरा धर्म उसका उद्धार नहीं करेगा।"

नैना मे तर्क का साहस नही था, "मैं तुझसे नही जीत सकती। ले गाँव आ गया है। अब जरा हुशियारी रखना।"

जमना ने कहा, "तू निश्चिन्त रह।"

गाँव की सीमा मे उन दोनों ने प्रवेश किया।

गाँव में शूद्रों के कच्चे घास-फूंस के झोंपड़े थे। ब्राह्मणों के मकान इस गाँव मे कच्चे, पर लिपे-पुते थे और किसी-किसी पण्डित का मकान पत्थर का भी बना हुआ था। ठाकुर हरीसिंह की हवेली के अतिरिक्त सारे राजपूतों के मकान अत्यन्त साधारण थे। शूद्रों के मकानों में दिया कभी नही जलता था। उनकी दशा आर्थिक दृष्टि से गिरी हुई उपेक्षित-तिरस्कृत थी। फिर भी उनमे भाईचारा पर्याप्त मात्रा मे था। ब्राह्मण, वैश्य और राजपूतों की स्त्रियाँ और मर्द उनका सम्मान करते थे। उनकी बहू को 'बहू' और बेटी को 'बेटी' समझते थे। हरिजनो के बडे-बूढे का लिहाज राजपूत, ब्राह्मण एवं वैश्यों की बहुएँ घूँघट निकाल कर करती थी तथा उनके सामने से पाँवों में जूनी पहन कर नही जाती थीं। हरिजन जाति के पच मूला का बड़े-बड़े सम्मानित गाँव वालो के अतिरिक्त स्वयं जमीदार दामोदरप्रसाद आदर करता था।

गाँव की सीमा पर उसकी कुटिया थी। उस कुटिया के आगे वह हाथ में लट्ठ लिये बैठा रहता था। हर गुजरने वाले यात्री से वह पुलिस-अफसर की तरह प्रश्न किया करता था। उसका गाँव कौन-सा है, वह कहाँ का रहने वाला है, उसे कहाँ जाना है, इत्यादि। प्रश्नों का उत्तर सुनकर वह उस राहगीर को सारी बातें समझा देता था। मूले की स्मरण-शक्ति कमाल की थी। वर्षों की बातें उसे इस खूबी से याद थी जैसे वे कल ही घटी हों। फिर उसके कहने की शैली इतनी रोचक होती थी कि सुनने वाला मत्र-मुग्ध सा सुनता रहता था।

गाँव की सीमा मे जमना और नैना ने प्रवेश किया।

मूले की कुटिया के आगे से जैसे ही नैना गुजरी, वैसे ही मूले ने उसे घूर कर देखा। उसने नैना के पाँवों की पगरखी देख ली। उसे देखते ही वह रोष-भरे स्वर में बोला, "यह कौन राँड है जो अपने माई-तों (माँ-बाप) को जूतों से मारती हुई जा रही है?"

जमना उसका तात्पर्य समझ गई। उसने झट से नैना को पगरखी खोलने के लिए कहा। नैना ने पगरखी खोलकर हाथ में ले ली। मूले के श्रान्त मुख पर प्रसन्नता की रेखाएँ दीप्त हो उठी, मानो उसे ऐसा लगा जैसे हर आदमी बूढे का सम्मान करता है।

जमना ने मूले के हाथ जोड़े और उसके चरण-स्पर्श करने चाहे तभी मूला

चौंक कर बोला, "अरे यह क्या कर रहे हो बेटे, क्यों मेरे सिर पर पाप चढ़ा रहे हो ?"

"नहीं बाबा, आप बड़े हैं !"

"बड़ा हूँ, तभी तो मैंने तुम्हारी बहू से अपना हक और सम्मान मांग लिया। लेकिन नीच जाति का होकर तुम से पाँव कैसे छुआ सकता हूँ ? बोलो, तुम्हें कहाँ जाना है ?" मूले के स्वर में सौहार्द्र टपक रहा था। उसकी धँसी-गहरी आँखों मे स्नेह की प्रखरता एक अनोखी दीप्ति-सी प्रतीत हो रही थी।

"हम परदेशी हैं बाबा !"

"यहाँ दो घड़ी विश्राम करना चाहते हो ?"

"नहीं !"

"फिर ?"

"हम इस गाँव में सदा के लिए बसने आये हैं !"

"क्यों ?"

"मुझे मेरे बाप ने ताना देकर घर से निकाल दिया। अब मैं चाहता हूँ कि खुद अपने पाँवों पर खड़ा होऊँ। कुछ ऐसा काम करूँ जिससे वे यह समझें कि मैं एकदम निकम्मा नहीं हूँ।" जमना ने दृढ़ता से सँभल-सँभल कर यह सब कहा।

"बाप से झगड़ा कर आये हो ?"

"नहीं बाबा, उनसे पूछकर आया हूँ। चाहता हूँ कि उन्हें कुछ करके दिखाऊँ।"

"आदमी साहसी हो। कुछ जरूर करोगे। तुम सीधे जमींदार के पास चले जाओ। इस गाँव के जमींदार ब्राह्मण हैं। बड़े ही नेक और दयालु। उनसे विनती करना, वे तुम्हारी विनती जरूर मान लेंगे।"

"कहाँ है उनकी हवेली ?"

मूला हँस पड़ा। हँसता हुआ ही वह बोला, "बड़े भोले हो ! अरे भाई, जमींदार और साहूकार के मकान हर गाँव में दूर से ही मालूम हो जाते हैं। जो सबसे अच्छा मकान है, वह है जमींदार का और उससे छोटा है, वह है साहूकार का।"

जमना ने उससे नमस्ते की। तभी मूला स्नेहसिक्त स्वर में बोला, "सुनो

बेटा, यदि इस गाँव में रहने का हुक्म मिल जाय तो इस गरीब को कभी-कभी दर्शन देते रहना। मैं तुम दोनों को सच्चे मन से आशीष दूँगा।"

"जरूर-जरूर!" जमना ने कहा और वे दोनों चल पड़ीं।

मुले की कुटिया से एक बड़ा रास्ता और अन्य छोटी-छोटी पगडंडियाँ जाती थीं। ये पगडंडियाँ विभिन्न मोहल्लों में जाती थीं और मुख्य रास्ता जमींदार की हवेली को।

वे दोनों दामोदर की हवेली के आगे पहुँचीं।

हवेली के आगे एक नौकर कुछ कुत्तों को बाजरे की रोटियाँ खिला रहा था। जमना ने विनम्रता से सिर झुका कर उस नौकर से पूछा, "जमींदार साहब घर में हैं?"

नौकर कुछ अहम्‌वादी एवं सनकी-सा दीख रहा था। उसने पहले-पहल जमना की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया, केवल निर्विकार भाव से कुत्तों को रोटियाँ खिलाता रहा। उसकी भाव-भंगिमा से स्पष्ट लक्षित हो रहा था कि उसे उनकी उपस्थिति का तनिक भी भान नहीं है।

जमना ने अब अपनी जगह बदली। वह उस नौकर के सामने आकर बोली, "भाईजी, जमींदार साहब घर में हैं?"

नौकर ने अर्थ भरी तीव्र दृष्टि से जमना की ओर देखा। जमना के तन-बदन में कपकपी दौड़ गई। उसे लगा कि यह नौकर अभी उसका रहस्य जान जायगा, इसलिए उसने अपनी गर्दन नीची कर ली।

नौकर ने कड़कते स्वर में कहा, "काम क्या है?"

"काम उनसे ही है। तुम जाकर उनसे बोल दो कि दो परदेशी आये हैं।"

"फिर बैठ जाओ।"

वे दोनों बैठ गईं।

नौकर कुछ देर तक पूर्ववत् कुत्तों को रोटियाँ खिलाता रहा। फिर उठकर जमींदार को सूचना देने गया। दामोदर ने उन्हें बैठकखाने में बुलाया। जमना ने जैसे ही बैठकखाने में प्रवेश किया, वैसे ही दामोदर ने उसकी ओर बिना देखे ही कहा, "बैठ जाओ।"

"कहाँ से आये हो?"

"माधोपुर से।" जमना ने झूठ बोला, क्योंकि वे दोनों साधूपुर की जनानी ड्योढ़ी से भाग कर आई थीं।

"क्यों ?"

"आपके गांव में बसने।"

"क्यों ?"

"वहां गुजारा नहीं होता।"

"यहां क्या करोगे ?"

"आपके राज मे थोड़ी-सी जमीन लेकर खेती-बाड़ी करूंगा।.........अन्नदाता, मैं अपने बाप को कुछ करके दिखाना चाहता हूं।" उसने रुकते-रुकते कहा।

"तुम कुछ करना चाहते हो ?" जमीदार की दृष्टि बहुत तीखी हो गई।

जमना सिर से पांव तक सिहर उठी।

दामोदर की आंखें डाक्टर की तरह जमना का मुआयना कर रही थी। जमना उनकी तेज नजर को नही सह सकी। उसका शरीर पसीना-पसीना हो गया।

"तुम इतने दुबले क्यों हो ?"

"अन्नदाता मैं बीमार था। मुझे अपने गांव की आबोहवा माफिक नहीं रहती।"

"तुम्हारे शरीर में खून की कमी है।"

जमना मौन रही।

"तुम मुझे अपना हाथ दिखाओ, मैं तुम्हारी नाड़ी देखना चाहता हूं।"

जमना शंकाकुल हो उठी। उसने सहमते-सहमते अपना हाथ जमीदार के हाथ में दिया। जमीदार ने उसकी नाड़ी देखकर कहा, "कल से मैं तुम्हें दवा दूंगा।.........अरे, तुम्हारे मूंछें नही हैं ?"

जमना ने गर्दन नीची कर ली।

"समझा, पर चिन्ता न करो, हर रोज उस्तरा मुंह पर फेरा करो। सुनते है, उस्तरा फेरने से मूंछें और दाढी निकल आती हैं।"

"हम मियां बीबी यही रहना चाहते हैं। क्या हमें आपका हुक्म मिलेगा ?"

सुखद भविष्य की उज्ज्वल और मधुर कल्पनाओं में तरह व्यस्त रहती!
वे उम्र भर इसी तरह मियाँ-बीबी बन कर रहेंगी। जैसे उनके जीवन में किसी प्रकार का परिवर्तन ही नहीं आयगा। दोनों एक ही खाट पर सोतीं। स्त्री-पुरुष की तरह प्यार करतीं। गहरा और अटूट प्रेम!

सवेरे का समय है।

सूर्य देवता का आलोक झूमती हुई बालों पर पड़ रहा था। नैना इन दिनों अकेली थी। वह दिन-रात खेत में रहती थी। रात के भयानक सन्नाटे में वह कभी-कभी इतनी भयभीत हो जाती थी, जैसे वह थोड़ी देर में मर जायगी। तब वह उन्मादग्रस्त प्राणी की तरह उस पगडंडी की ओर दृष्टि जमाये खड़ी रहती थी जिस राह से जमना शहर गई थी।

तीसरे दिन उसका धैर्य जाता रह।

वह अपने बच्चे को लेकर मूले के पास गई। उसके साथ गाँव का एक लड़का था, क्योंकि मूला बहू से सीधे बातचीत नहीं करता था। ऐसा करना वह उचित नहीं समझता था। नैना को देखकर मूले ने पूछा, "बेटा पूछ न, बहू क्या कहती है?"

छोकरे ने कहा, "काकी कहती है कि वे शहर गये हुए हैं।"

"फिर कोई मुझसे काम है?"

"काकी कहती है कि मुझे अकेली को खेत में डर लगता है।"

"डर लगता है?" हँस पड़ा मूला, "किसान की बेटी को इतना डरपोक नहीं होना चाहिए।" मूला भावुक हो गया।

"लेकिन मुझे········।"

"अच्छा, आज रात मैं तुम्हारे खेत आ जाऊँगा। बहू की रक्षा करना मेरा धर्म है!"

रात को मूला नैना को वीरतापूर्ण कहानियाँ सुनाया करता था। वह खेतों का पहरा देता था और रात की घोर निस्तब्धता में वह राजस्थान के दर्दीले और प्रभावशाली गीत गाया करता था। नैना पत्थर के बुत की तरह उसके कण्ठ-स्वर से निकले गीत सुना करती थी।

आखिर एक रात नैना ने अपना मौन तोड़ लिया। वह गम्भीर-स्वर में मुँह उघाड़ कर मूले के सामने बैठ गई। मूला विस्मित हो गया। चाँदनी की

उज्ज्वलता में उसने सर्वप्रथम नैना के सुन्दर मुख के दर्शन किये। मूले को ऐसा लगा कि एक नारी के समस्त गुण पूंजीभूत होकर उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में दीप्त हो उठे हैं। तभी उसके माँ-बाप ने उसका नाम 'नैना' रखा है। क्षण भर के लिए वह अपने बुढ़ापे का अहम् भूल गया। वह बाल-सुलभ जिज्ञासा से नैना को देखता रहा। अप्रत्याशित वह चेता, बोला, "यह क्या बदतमीजी है ? मैं तुम्हारे ससुर के बराबर हूँ !"

"नहीं !" नैना के स्वर में दृढ़ता थी।

"क्या कहती हो ?"

"आप मेरे पिता समान हैं। आज मैं आपकी बेटी हूँ।"

मूला थोड़ी देर चुप रहा।

"क्या बापू, तुम्हारा इस संसार में कोई नहीं है ?"

प्रश्न क्या था जैसे मूले के शान्त आन्तरिक सागर में तूफान उठ गया हो। वर्षों से छिपी वेदना सहस्र पटलों को चीर कर अंगारे की तरह भड़क उठी हो। वह दूर-दूर तक फैले खेतों को अनिमेष दृष्टि से देखता रहा, देखता रहा। करुणा उसके मुख पर स्पष्ट झलक रही थी। वह विचलित स्वर में बोला, "इस संसार में कौन किसी का होता है। आदमी सदा अकेला आता है और अकेला जाता है।"

"बहुत भारी बात कह दी आपने।"

"नहीं बेटी, ठीक कहता हूँ—अपने-पराये, नाते-रिश्ते क्या हैं, यह सब दुनियादारी हैं। असल में आदमी का कोई नहीं है। भाई-बन्धु, कुटुम्ब-कबीला, जोरू और मित्र, सब सुख के हिस्सेदार होते हैं। दुःख और आफत में उनकी नग्नता हमारे सामने आती है। तब लगता है—सब स्वार्थी हैं, खुदगर्ज हैं। तुमने पूछा कि मैं इस संसार में अकेला हूँ ? सचमुच मैं अकेला ही हूँ। मेरा कोई नहीं है। अगर कोई होता तो क्या मैं इस वीराने में ऐसी खामोश जिन्दगी बिताता ? कभी न कभी मेरी याद किसी को आती ही और लाख नाराज होने के बाद भी वह मेरे पास आता। लेकिन कौन आया है मेरे पास ? कोई भी नहीं ! इस सुनसान सीमा पर अकेला बैठा रहता हूँ—निरीह और लाचार; बेटी ! व्यर्थ की बातें करके मैं अपने मन को बहलाता हूँ, उम्र गुजारता हूँ।" कहकर वह चुप हो गया।

रात का सन्नाटा छाया रहा।

नैना ने कहा, "फिर भी कौन है आपका ?"

"कह दिया न, कोई नहीं।"

"बापू ?"

"हठ करती हो—फिर सुनो—

"मेरी उम्र इस समय ५५ वर्ष की है। आज से २० वर्ष पहले मैं महाराजा भँवरसिंह के गढ़ में काम करता था। मेरी अत्यन्त भोली-भाली बहू थी। भोली इतनी कि मैं कह नहीं सकता। एक बार उसने एक औरत के कहने पर मुझे कंकरों की सब्जी बना कर खिला दी। अब तुम्हीं बताओ कि इससे ज्यादा कौन भोली-भाली हो सकती है ? मुझे उसके भोलेपन पर अत्यन्त तरस आता था, इसलिए मैं उसकी अपने से अधिक देखभाल करता था।

"एक दिन की बात है—भँवरसिंह की एक छोटी रानी थी। वह अत्यन्त निर्दय प्रकृति की थी। बात-बात मे वह अपने नौकर-चाकरो को पिटवा देती थी। सारे गढ़ में उसका घोर आतंक था। यहाँ तक कि स्वयं महाराजा भी उससे मन ही मन डरते थे। इसका कारण यह था कि छोटी रानी षड्यंत्र करने में बड़ी ही चतुर थी। इसके साथ ही साथ वह रूपवती थी। शराब वह दिन भर पीती थी। शराब उसके जीवन का खास हिस्सा था। सबेरे वह अपने महल के झरोखे में बैठकर उड़ते हुए पक्षियों को गोली मारा करती थी। चील, कौवे और कबूतरों तक को मार देती थी। पता नही, उसे किसी की मौत में क्यों आनन्द आता था ! किसी जीव को तड़पते-छटपटाते देखकर उसे बहुत खुशी होती थी। तब उसके मुख पर क्रूर मुस्कान बिखर जाती थी और उसकी नजर में जल्लाद-सी चमक पैदा हो जाती थी। एक दिन की बात है—मेरी बहू उस झरोखे के नीचे झाड़ू निकाल रही थी। छोटी रानी हाथ में बन्दूक लिये साफ आकाश में उड़ते हुए पक्षियों को देख रही थी कि अप्रत्याशित उसने गोली दागी। पक्षी बच गया। छोटी रानी ने दूसरे पक्षी पर गोली दागी। वह भी बच गया। छोटी रानी का पारा गरम हो गया। उसने अपने दाँत भींच लिये। तभी एक कौवा उड़ता हुआ महल के ऊपर से गुजरा। उसने एक आँख बन्द करके निशाना मारा। निशाना चूक गया। रानी ने बन्दूक को फेंक कर कहा, 'धत् तेरी की, आज सवेरे से एक भी शिकार नहीं।'……तभी

उसकी नजर मेरी पत्नी पर पड़ी। बस फिर क्या था, उसने बन्दूक तानकर उसी समय उसे निशाना बना दिया। हँसती-गाती जिन्दगी धरती पर सो गई।...बेटी क्या कहूँ, जब मुझे इसका पता चला, तब मैं अचेत हो गया। मैं भागा-भागा वहाँ गया, तब तक रानी के दो आदमियों ने उसकी लाश को भीतर ले लिया था और रानी ने उसे जलाने की आज्ञा दे दी थी। मैंने जाकर रानी के सामने प्रार्थना की। रानी ने मुझसे सान्त्वना व सहानुभूति का एक भी शब्द नही कहा, बल्कि उसने दो सौ रुपये निकाल कर दे दिये। वे नोट मेरे जख्म पर नमक का काम कर गये। मैंने उन्हें रानी के चरणों में रखकर कहा, 'माँ यदि पैसों से इंसान का जीवन खरीदा जा सकता है तो धनवान कभी मरते ही नहीं। आपके इन रुपयों से मेरी बहू क्या लौट आयेगी? मेरे दिल की आग ठण्डी हो जायेगी? मेरे दिल का घाव भर जायगा?'......रानी मेरे उपदेशात्मक शब्दों को सुनकर चिहुँक उठी। उसके चेहरे पर जल्लाद वाली भावनाएँ चमक उठी। वह कड़क कर बोली, 'इस नमक हराम को मेरे सामने से जाओ ले।'

"मैं खुद ही चला आया। पर जाते-जाते मैंने उसे शाप दिया—'जीवन मे हर दिन नया रंग लेकर आता है। लेकिन कभी-कभी सुरंग बदरंग भी हो सकता है, तब हम गरीबों की आहे आपको चैन नही लेने देंगी।'......मैं इतना कह कर चला आया। फिर अपनी बहू की लाश के पास आया। उसके माथे में गोली लगी थी। उसकी आँखें बाहर निकल गई थी जिससे उसका चेहरा भयानक लग रहा था। नाक और मुँह से भी खून बह रहा था। मैं दहाड़ मारकर रो पड़ा। मेरा कलेजा मुँह को आ गया।......तुम्ही बताओ न बेटी, उसकी मौत कितनी दु.ख भरी मौत थी! न कुछ अपना कहा और न मेरा सुना।" सहसा मूला खामोश हो गया। उसकी आँखों से अविरल अश्रु-धारा बह उठी। नैना का मन भी व्यथा से भर आया। वह चाँदनी में अपना मुँह फेरकर आँसू पोंछने लगी।

"जीवन जहर हो गया मेरा। मुझे सोते-जागते और उठते-बैठते उसी की याद आती थी। उसकी अधूरी इच्छाएँ और प्यासी चाहें मुझे सताने लगी। वह कहा करती थी—'मूला हमारे बच्चे होंगे। बच्चों के फिर बच्चे होंगे। हमें वे दौड़-दौड़कर पुकारेंगे। एक हँसता-गाता संसार होगा। सुख ही सुख।'

किन्तु उसका सपना लोक-कथा की नायिका 'ग्वालिन' की तरह टूटकर रह गया। कुछ दिन तक मैं बावरा-सा रहा। मेरा मन कहीं पर नहीं लगता था। मुझे ऐसा लगता है कि वह सहसा मेरे पास आ जायगी।" और उसकी आँखें स्थिर हो गयीं मानो वह कह रही थी—उसकी पदचाप और पायल की रुनझुन मेरे कर्ण-कुहरों में मधुर रस घोलती हुई मेरे समीप आयगी और मेरे अभाव से पीड़ित मानस को अनेक खुशियों से भर देगी। वह मुझे जीवन की महायात्रा में एकाकी नहीं छोड़ सकती। वह सम्पूर्ण रूप से मेरा साथ आखिरी साँस तक देगी।

……मूला को कभी-कभी ऐसा अहसास होता था जैसे वह मरी नहीं है, जीवित है। यहीं कहीं काम करने गई है। दिन ढलते लौट आयगी। और वह सत्य से नितान्त परिचित होते हुए भी एक मिथ्या आशा में अपनी झोपड़ी के द्वार पर बैठा रहता था। रात हो जाती, तारे ढलने लगते, तब वह टूटे हुए इन्सान की तरह झोपड़े में घुसता। न वह खाना खाता और न वह जल की एक बूंद अपने मुँह में डालता, निर्जीव-सा पड़ जाता।

"आप चुप क्यों हो गये?" नैना ने मूले का मौन तोड़ा।

"मुझे उसकी याद आ गई। सच बेटी, उसको मरे बीस वर्ष हो रहे हैं, पर क्यों नहीं दिल को विश्वास होता कि वह सचमुच मर गई है? वह अब कभी लौटकर नहीं आयगी, लेकिन बार-बार आशंका होती है कि वह आयगी, वह जरूर आयगी।" वह अपने आप पर हँस पड़ा। उसकी आँखों में उस हँसी के साथ अश्रु झलक आये, "मैं भी कैसा पागल हूँ री, अब वह कैसे आ सकती है! उसे मैं अपने हाथों से जलाकर आया हूँ। इसके बाद मेरा वहाँ मन नहीं लगा। मैं खूब शराब पीने लगा। शराब के साथ अफीम भी खाने लगा। नतीजा यह निकला कि मेरे पास जितनी भी पूँजी थी, वह भी खत्म हो गई। अपने-पराये हो गये। मुझे कोई भी आकर नहीं पूछता था। पैसों के बिना कोई किसी को नहीं पूछता। तब मेरा मन उचाट हो गया। एक दिन मैं वहाँ से बिना किसी को कहे रवाना हो गया। मुझे कोई ढूँढने नहीं आया, किसी ने मुझे पाने की चेष्टा नहीं की। उन्होंने भी सोचा होगा, 'चलो शराबी चला गया, अच्छा ही हुआ, जो कुछ इसकी जमीन होगी, अपनी हो जायगी।' फिर मैं भी पलट कर वहाँ नहीं गया। मुझे वहाँ लौट जाने में कोई दिलचस्पी दिखलाई नहीं पड़ी। इस

गाँव में आ गया। इस गाँव में मुझे शान्ति और सन्तोष मिला। इसके जमींदार दामोदरजी बड़े भलेमानुस हैं। घमण्ड उन्हें छूआ तक नहीं है। मैंने उनके हुजूर मे विनती की। उन्होंने मुझे पहरेदार बना कर बिठा दिया। तब से मैं यहाँ बैठा हूँ। लोग यहाँ मेरी बड़ी इज्जत करते हैं। मेरे दुःख-दर्द में वे शामिल होते हैं। फिर भी मुझे एकान्त ही पसन्द है। मैं चाहता हूँ—जीवन के शेष दिन इस झोपड़ी में ही गुजार दूं।"

बच्चा एकाएक जोर से रोया।

नैना हड़बड़ा उठी। उसने तुरन्त छोटी सी मचिया (छोटी खटिया) से अपने बेटे शिव को उठाया और उसे बहलाने लगी।

मूले को जम्हाई आने लगी थी, उसने अंगडाई लेकर कहा, "अच्छा बेटी, मैं सोता हूँ।"

नैना भी अपने पलंग पर सो गई।

सोते-सोते मूले ने कहा, "मेरी एक बात को ध्यान से सुनो, अपने बेटे को खूब पढा-लिखाकर हुशियार करना।"

नैना चुप रही।

रात ढल रही थी।

× × ×

६

सातवें दिन जमना लौट आई।

उसके हाथ में एक गट्ठर था। उस गट्ठर में नैना के लिये चूंदडी और बच्चे के लिए दो-चार घघरियां (फ्राक) थी तथा मूले के लिए एक गमछा और एक बगलबन्दी।

नैना मुंह चढा कर भीतर बैठी थी। जमना ने उसे कई बार पुकारा, "शिव की मां, ओ शिव की माँ!" पर नैना भीतर से बाहर नही आई। जमना

ने अब भीतर प्रवेश किया। नैना रूठी रानी सी मुँह फुलाये बैठी थी। जमना ने उसके गाल को पकड़ कर खींचा और कहा, "पति शहर से आया है और तू मुँह फुला कर बैठी है! क्या उसकी आवभगत ऐसे की जाती है?"

"मुझसे न बोलिए।"

"क्यों?"

"मुझे अकेली छोड कर चले गये। जानते हो, जाने के बाद मुझे किन-किन आफतों का सामना करना पड़ा। रात को अकेली खेत में सोती थी। छोटा-सा फून जैसा बच्चा, क्या पता साँप-बिच्छू काट जाये तो!" उसकी नजर जमना पर जम गई।

जमना ने उसे अपनी बाँहों में भर कर चूम लिया, "अच्छा बाबा, मुझे माफ कर दे, आइन्दा सोच-समझ कर बाहर जाऊँगा।"

"छोड़ न!" उसने कृत्रिम क्रोध से कहा, "मूला न होता तो मैं जिन्दा नहीं मिलती।"

"तभी मैं उसके लिए गमछा और बगलबन्दी लाया हूँ।"

"सच?"

"हाँ!"

इसके बाद जमना स्नान आदि करने भीतर चली गई।

दोपहर हुई।

मूला अपनी झोंपड़ी में बैठा हुआ ऊँघ रहा था। जमना दरवाजे के आगे खड़ी हो गई।

जमना को देखकर वह चौंका, फिर हँस कर बोला, "कब आये बेटे?"

"आज भोर को।"

"सब ठीक है न? हाँ, वहू को अकेले छोड़ कर मत जाया करो। अकेले उसे खतरा रहता है। फिर तुम जानते ही हो कि यह गाँव एक ब्राह्मण का है और ब्राह्मण के सुखी गाँव पर कुछ राजपूत डाकू नजर गड़ाये बैठे हैं। जाने कब वे इस पर हमला बोल दें!"

"भाग्य का लिखा तो काका मिटेगा नहीं।"

"भाग्य के भरोसे बैठ कर आदमी को कर्महीन भी नहीं बनना चाहिए।"

जमना ने सोचा—यह भंगी भंगी नहीं, अवश्य पिछले जन्म में कोई पंडित

रहा होगा। वह मुस्कराकर बोली, "लो काका, तुम्हारे लिए शहर से लाया हूँ।" जमना ने इतना कहकर वह गमछा और बगलबन्दी मूले के आगे रख दी।

मूला कुछ क्षण तक उन दोनों वस्त्रों को देखता रहा। उसकी आँखें छल-छला आईं, मानो उसे वर्षों के उपरान्त पहली बार कोई अपना मिला हो। उसके अंग-अंग मे एक विचित्र स्फूर्ति का संचार हो उठा। उसके हाथ, जिनमें वे वस्त्र थे, काँप उठे। वह मौन-स्थिर दृष्टि से जमना को देखता रहा। उसकी सजल गहरी आँखों में अतीव अनुराग था, मानो उसकी आत्मा की सहस्र ध्वनियाँ मूक समवेत स्वर में उसे आशीष दे रही हों। वह भावावेश में आगे बढ़ा। उसने चाहा कि वह जमना को अपनी बाँहों में भर ले, किन्तु संस्कारों ने उसे रोक दिया। आखिर वह हरिजन है! वह क्यों इसे स्पर्श करके अपने परलोक को बिगाड़े! बस, उसके मुँह से इतना ही निकला, "तुम हजार बरस जिओ!"

"नहीं काका, इतना जी कर क्या करूँगा? जितना अधिक जीऊँगा, उतने अधिक कष्ट झेलूँगा।" जमना के चेहरे पर मुस्कान नाच उठी।

"जीने से कायर घबराते हैं। देखो, मेरे जीने में क्या सार है? न उद्देश्य और न कारण! फिर भी आत्महत्या नहीं करता। सोचता हूँ, यहाँ बैठकर राहगीरों को सही रास्ता बता दूँ, यह भी ठीक है, कुछ पुण्य ही होता है।"

जमना को सहसा अपना अतीत याद आ गया। वह झोंपड़ी से बाहर निकल कर एक वृक्ष के नीचे खड़ी हो गई। जनानी ड्योढ़ी मे जब वह पहले-पहल आई थी और अपने आपको रानी समझती थी, यह उन्हीं दिनों की बात है। तब वह एक परदेशी लड़की से मिली थी। वह शिक्षित थी और अत्यन्त भावुक मनोवृत्ति की थी। एक दिन उसने बेचारी एक घा घरेवाली लड़की को डाँट दिया था। उसको डाँटने पर वह लड़की अपने मनोद्वेग नहीं रोक सकी। वह बोली, "बहन, मेरा नाम प्रतिभा है। मैं भी तुम्हारी तरह एक कुटनी के चक्कर में पड़कर यहाँ आ गई थी। गरीबी से सीधी महल की मालकिन बनाना चाहती थी। कुछ दिन तक मैं भी तुम्हारी तरह आकाश में उड़ती रही। अन्त में मुझे ठाकुर की जनानी ड्योढ़ी में कैद होना पड़ा। इसलिए इस मौके पर सबको स्नेह दो, प्यार दो, सबकी आशीष और करुणा लो ताकि तुम्हें जीवन गुजराने मे उपेक्षा और दुरकारें नहीं सहनी पड़ें। त ाकि जब तुम उपेक्षित

होकर हमारी तरह नरक की भयानक यंत्रणाएँ भोगो तो अन्य बदनसीब स्त्रियाँ तुम्हें सहानुभूति दें। तुम्हें धीरज बँधाएँ।"......इसके बाद जब उसके अच्छे दिन चले गये, तब प्रतिमा जमना को अपनी अच्छी सहेली समझती थी। खाली समय मिलता था। प्रतिभा ने उसे पढ़ाया-लिखाया। जीवन और जगत के बारे में गूढ़तम बातें बताईं। एक बार जमना ने उससे पूछा था, "तुम यहाँ से भाग क्यों नहीं जातीं?"

"भाग कर जाऊँ कहाँ?"

"अपने घर।"

"क्यों? क्या मैं घरवालों से पूछकर यहाँ आई थी? अपनी मर्जी से भागी थी और अब अपना सर्वस्व लुटा कर कहाँ जाऊँ? समाज, धर्म और घर अब सभी मेरे लिए मिट गये हैं। मेरा वहाँ कोई नहीं है। जाऊँगी तो सब दुत्कार देंगे। कुलटा, छिनाल, बदजात—अब मेरे लिए यही विशेषण रह गये हैं। लेकिन अब अधिक जिन्दा भी नहीं रहना चाहती। उस कुटनी 'तारा' का इन्तजार है। जिस दिन वह यहाँ आ गई, उसी दिन मैं उसे जान से मार दूँगी और खुद मर जाऊँगी। बिना कारण जीवन को मूर्ख ही ढोते हैं, उससे प्रतिशोध लेने के बाद मेरे जीवन का कोई भी अर्थ नहीं रह जायगा।"

"लेकिन बुरे को बुरा देने से भगवान् नाराज हो जाते हैं।"

उसकी भृकुटियाँ तन गईं। उसकी आँखों में स्फुलिंग सी दीप्त हुईं। वह चिढ़े हुए स्वर में बोली, "भगवान् धनवानों का होता है। अगर भगवान् होता तो इस सड़ाँध में सड़ रही मानवी का हाहाकार और आर्त्तनाद सुनकर 'द्रौपदी की कथा' की पुनरावृत्ति नहीं कर देता? यहाँ एक पांचाली नहीं, सैंकड़ों पांचालियाँ दानव दुःशासन के पंजों में तड़प रही हैं और मुक्त होने के लिए अनवरत अनुनय-अनुरोध कर रही हैं। लेकिन कहाँ है हमारा कान्हा? कहाँ है उसका सुदर्शनचक्र? कहाँ है उसकी गीता के न्याय-नीति का उद्घोष? लगता है कि किसी चतुर लेखक की यह सब अत्यन्त प्रभावशाली एवं सजीव कल्पनाएँ हैं जो निरन्तर प्रचार-प्रसार के कारण मूर्तिमन्त होकर हमारे सम्मुख खड़ी हो गई है, वर्ना कोई भी शक्ति ऐसे जुल्म को न देख सकती है और न सह सकती है।".............मुझे इहलोक-परलोक की चिन्ता नहीं। यदि तुम नरक में विश्वास करती हो तो मैं उसकी भयंकर यातनाएँ भी सहने को तैयार हूँ। मैं

यमदूतों के दारुण दुःखों को भी मुस्कान के साथ सहन कर लूँगी। किन्तु उस तारा की बच्ची को जरूर जान से मारूँगी।

जमना उसके इस दृढ़ संकल्प से आतंकित हो गई थी। जमना उसकी धनढ़े हुई आँखों के ताप को नहीं सह सकी। उसने इतना ही कहा, "मुझे तुम्हारी बातों से डर लगता है। मैं ऐसा नहीं कर सकती।"

"मैं किसी को बाध्य थोड़े ही करती हूँ। मेरा प्रतिशोध में विश्वास है। समझौते की नीति मैं कतई पसन्द नहीं करती। मुझे ऐसा लगता है कि समझौता करने वाले इन्सान क्षणिक सुख और सन्तोष पाते हैं और बाद में उन्हें अत्यन्त कष्ट-क्लेश उठाना पड़ता है। भविष्य में उनके समक्ष वही समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं। पाप को बदलने के बजाय मिटाना ही श्रेयस्कर है। जमना, ये नाग हैं, जहरीले नाग; यदि हम एक-एक नाग को किसी भी दण्ड नीति से समाप्त कर दें तो हमारी सन्तानें बड़ा सुख पा सकती हैं।"

जमना ने तब उसके मर्म को समझने की बड़ी चेष्टा की थी, पर अब वह उसके अर्थों को समझ पा रही थी।

इसके लगभग एक माह बाद प्रतिभा ने तारा को गोली से उड़ा दिया और साथ में एक पहरेदार हिजड़े को। उस दिन जनानी ड्योढ़ी में भयानक मायूसी छा गई थी। बाद में खुद उसने गोली से आत्महत्या कर ली, लेकिन उसकी मौत जमना में दुस्साहस भर गई। गोली से फटी उसकी छाती को जमना ने देखा था। उसके चेहरे पर वही अप्रतिम साहस था। पराजय की रेखाएँ जरा भी नहीं थी उसके मुख पर। जमना उसके लिए बहुत रोई थी। उसकी पेटी में कुछ पुस्तकें थीं और कुछ पत्र जो उसने किसी बहिन के नाम पर लिखे थे। उन पत्रों में मार्मिकता और नारी का आर्त्त शब्द-शब्द में भरा था। नारी जीवन के आमूलचूल परिवर्तन का उसमें घोष था। उसमें विद्रोहिणी नारी की प्रभावशाली शैली में लिखे कुछ पत्र थे। ठाकुर ने उन पत्रों को तुरन्त जला दिया और पहरेदार को आज्ञा दी कि इन पुस्तकों को, जिनमें स्वतन्त्रता की बू आती है, किसी जंगल में गाड़ने के लिए भेज दिया जाय।

उसी दिन जमना ने जनानी ड्योढ़ी से भागने का निश्चय किया था।

नैना उसे मिल गई थी।

महल में होली का उत्सव था।

ठाकुर व अन्य रहने वाले 'कसूम्बे' में मस्त थे। ढोलनियों के नृत्य व गीत हो रहे थे। महल के पीछे के भाग में सन्नाटा था। मैना और जमना इस दिन के लिए पहले से ही तैयारियाँ करे बैठी थीं। जैसे ही सभी नाचने-गाने में निमग्न हुए, इन दोनों ने एक हिजड़े पहरेदार को रुपये दिये और भाग चली।.........

"जमनू?"

जमना मूले का स्वर सुनकर चौंक पड़ी। उसे भी ध्यान नहीं रहा कि वह विचारों में निमग्न इतनी देर से खड़ी है।

"क्या है काका?"

"वहाँ खड़ा-खड़ा क्या कर रहा है?"

"यूँ ही विचारने लगा।"

"क्या?"

"यही की आदमी को उद्देश्यहीन होकर नहीं जीना चाहिए। तुम्हें भी कुछ ध्येय बना लेना चाहिए।"

"क्या बनाऊँ?"

"यह जगह सूखी पड़ी है। यहाँ चारों ओर के आदमी आकर विश्राम करते हैं। तुम यहाँ छोटी-सी बगिया लगा दो। कुछ पेड़ लगा दो। उन्हें पोसो और पालो ताकि थके-माँदे यात्री आकर दो घड़ी सुस्ता लें।"

"ठीक कहते हो बेटा, ये काम हो जायगा तो सचमुच में मरने के बारे में सोचूँगा नहीं।" फिर उसके चेहरे पर कोमलता छा गई। वह एक लम्बी साँस लेकर बोला, "तुम्हें भगवान पहले भेज देता तो कितना अच्छा होता!"

जमना निरुत्तर रही।

"दिल से कह रहा हूँ कि तुम कुछ पहले आ जाते तो मैं आज तक निकम्मा नहीं बैठता।"

"अच्छा चलूँ काका?"

"चलने के लिए मैं तुम्हें नहीं कह सकता।"

"लेकिन कपड़े कल पहन लेना!"

"जरूर!"

"मैं आऊँगा, तुम्हें देखने।"

"क्या इन कपड़ों में ?

"हाँ !"

जमना चली गई ।

× × ×

७

जमना जब लौटी तब नैना भोजन बना चुकी थी। वह बच्चे को लेकर झोपड़ी के द्वार पर खड़ी थी। जमना को देखते ही वह बोली, "जहाँ जाते हो, वहाँ मुँह लटका कर बैठ जाते हो, पीछे की फिकर भी नहीं रखते ?"

जमना हँस पड़ी। अपने सिर का साफा नैना के हाथ में देती हुई वह लापरवाही से बोली, "फिकर न होती तो क्या मैं इतनी जल्दी लौट आता !"

"जरा सूरज की ओर देखना तो !"

"यही बजा होगा ग्यारह-बारह।"

"बारह !" जीभ निकाल कर नैना बोली। जमना ने उसे बाँहों में भर कर कहा, "मुझे ऐसा लगता है कि तू पिछले जन्म में मेरी बहू थी। काश, मैं इस जन्म में भी तेरा मर्द ही होता।"

"अब कौन से मर्द से कम हो ? केवल मूँछों की जरूरत है। बातचीत का सलीका, डाँट-डपट ठीक मर्दों जैसी ही है।"

"लेकिन कभी-कभी मुझे डर लगता है। बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है। सदा भय बना रहता कि कहीं भेद न खुल जाय।"

नैना ने कहा, "डर को फेंक आओ खाई में, आओ पहले खाना खा लो।"

तब दोनों खाना खाने बैठे।

बच्चा समीप सोया हुआ था।

कौर लेते-लेते जमना बोली, "एक बात बताऊँ तुम्हे नैना !"

"क्या ?"

"आजकल अपने ठाकुर की पाँचों उँगली घी में हैं ।"

"कैसे ?"

"उसका बड़ा भाई खेतसिंह महाराज बन गया है । उसको भँवरसिंह ने गोद ले लिया है।"

"तू नहीं समझती जमना, जैसे साँपनाथ वैसे नागनाथ !"

वह बात वही पर समाप्त हो गई ।

नैना ने कुछ देर के बाद मौन तोड़ा, "जमींदार साहब की बेटी का विवाह है । परम्परा से उसका सारा खर्च हमें ही देना पड़ेगा, पर जमींदार साहब हम किसानों से आधा ही लेंगे । इसलिए हमें भी उन्हें ५० रुपये देने हैं। साहूकार का कर्ज देने के बाद मेरे पास कुल ३० रुपये बचे हैं, २० रुपयों की और जरूरत है । क्या तुम जाकर कुछ रुपया साहूकार से फिर नहीं ला सकते हो ?"

"ला सकता हूँ ।"

"लाने से बेहतर यही है कि तुम एक बार जाकर जमीदार साहब से विनती करो । वे हमे नया जान कर माफ कर देंगे ।"

"फिर मैं कब जाऊँ ?"

"कल सवेरे चले जाना ।"

दूसरे दिन ही जमना जमीदार के घर जा पहुँची । जमीदार अर्चना-वन्दना में व्यस्त था । उसका नौकर उसी जगह पर बैठा कुत्तों को रोटियाँ खिला रहा था । जमना ने जाकर राम-राम की । नौकर ने कोई उत्तर नहीं दिया ।

जमना ने जोर से कहा, "राम-राम ठाकरां !"

नौकर ने निगाहें उठा कर उसकी ओर देखा ।

"ठाकरां आपके राज्य में हमारी सुनवाई नहीं हो रही क्या ?"

ठाकर के चहरे पर दम्भ नाच उठा ।

"हाँ ठाकरां, जमीदार साहब से मिलना चाहता हूँ ।"

नौकर ने जो जाति का राजपूत था, जिसे 'ठाकुर सा' सुनने में अत्यन्त गौरव का अनुभव होता था, जमना को झिड़कते हुए कहा, "तू सवेरे-सवेरे

क्यों आता है ? तेरा मुँह देखने पर मुझे सारे दिन लुगाइयाँ-ही-लुगाइयाँ मिलती हैं। क्या मूरत पाई है ? एक बच्चे के बाप हो गये, पर न दाढ़ी है और न मूंछ। भगवान से मैं हर घड़ी यही प्रार्थना करता हूँ कि वे तेरे लड़के को तुझ पर न करें।"

"ठाकुर सा ईश्वर पर किसी का क्या अधिकार हो सकता है ?"

"हाँ भाई, ठीक कहते हो ! नही तो क्या मैं इस ब्राह्मण के यहाँ नौकरी करता !" ठाकुर सा सुनते ही वह पिघल गया।

"ठाकुर सा, ईश्वर जो भी करता है, अच्छा ही करता है।.........क्या जमींदार सा घर मे हैं?"

"हैं और पूजा कर रहे हैं।"

"जरा मेरे आने की खबर पहुँचा दीजिए।"

"पहुँचाता हूँ।"

नौकर चला गया और चन्द ही क्षणों में वापस लौट कर बोला, "तुझे बैठकखाने में बैठने के लिए जमीदार साहब ने कहा है।"

"जो हुक्म ठाकुर सा !"

शायद नौकर जमना के कथन का मर्म समझ गया हो, इसलिए उसके चेहरे पर क्षण भर के लिए कठोरता आई, पर उसने उस कठोरता को मन ही मन दबा लिया। वह गम्भीर मुद्रा में हवेली में चला गया।

जमना दामोदर की प्रतीक्षा करती रही। लगभग आधा घण्टे के बाद दामोदर ने बैठकखाने मे प्रवेश किया।

जमना ने उसके चरण-स्पर्श किये।

दामोदर ने उसे आशीर्वाद दिया।

"क्या बात है बेटा ?" स्नेह से पूछा दामोदर ने।

"एक प्रार्थना लेकर आया हूँ।"

"क्या ?"

"मेरे पास आजकल रुपये नही हैं। कुछ कर्ज था, उसको देने के बाद मेरे पास कुल तीस रुपये बचते हैं। मैं चाहता हूँ कि आप मुझसे तीस रुपये ले लें। वैसे आपकी बेटी मेरी बहिन के समान है। बहिन को जितना भी दूँ

थोड़ा है, पर मजबूरी मेरे सामने है। साहूकार ब्याज में कमर तोड़ देता है।"

दामोदर ने क्षण भर जमना के चेहरे के भावों को पढा, फिर मधुर स्वर में वह बोला, "मैं तुम्हारी मजबूरी जानता हूँ, मैं मुनीमजी को कह दूँगा कि वह तुमसे तीस रुपये ही ले लें।.......और हाँ, आजकल खेती का क्या हाल-चाल है ?"

"सब आपकी दया है। इस बार मैं समझता हूँ कि कच्चा मकान बना ही लूँगा।"

"भगवान सब शुभ ही करेगा।" कह कर जमींदार भीतर चला गया।

जमना ईश्वर को दुआएँ देती हुई मूले के पास गई। मूले ने झोंपड़ी के आगे बीस-पच्चीस मटकियों का ढेर लगा रखा था। आज उसने जमना का गमछा और बगलबन्दी पहन रखे थे। सदा की अपेक्षा आज वह बड़ा ही प्रसन्न दीख रहा था। वह एक फावड़ा और एक कुदाल ले आया था।

जमना को देखते ही उसकी स्थिति उस छोटे बालक की तरह हो गई जिसकी वर्षगाँठ हो और वह पहले-पहल नये वस्त्र पहन कर अपने बुजुर्गों के समक्ष खड़ा होता हो। मूले की दृष्टि जमीन की ओर गड़ गई।

"काका, आज तुम पहचाने भी नहीं जा रहे हो !"

"आज मेरे बेटे ने मुझे नये कपड़े पहनाये हैं न !"

"और इन मटकियों का क्या करोगे ?"

"इनमें पानी भर कर रखूँगा। कल शाम को मैं जमींदार साहब के पास गया था। मैंने उन्हें अपनी योजना बताई। वे बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने मुझे कहा कि हर सुबह-शाम हवेली का माली आकर तुम्हारे पेड़-पौधे देख जायगा और नये पेड़ भी लगा जायगा। सँभालना काम तुम्हारा है।.......मैंने उनको आश्वासन दे दिया है।"

तभी आ गया मघला मोची। उदास और चिन्तातुर।

आकर मूले के पास चुपचाप बैठ गया।

"क्या बात है मघला ?" मूले ने उससे पूछा।

"काका, आज तुझे मेरी लाज रखनी होगी !"

"कहो बात क्या है ?" मूला गम्भीर हो गया।

"मुझे छोरी की ससुराल जाना है। पास में पैसा नहीं है।"

"पैसा यहां कहां रखा है !"

"मैं तुमसे पैसा मांगने नहीं आया हूं !"

"फिर क्या चाहते हो ?"

मैं तुम्हारे कपड़े चाहता हूं। मुझे नये कपड़े चाहिए। समधी के घर जाना है। सुना है— मेरी बेटी के बेटा हुआ है। यदि ठाठ-बाट से नहीं जाऊँगा तो समधी जरूर मेरा अपमान करेगा। वह बड़ा गरूर वाला है। उसके पास थोड़े पैसे हैं न !"

कह कर वह उत्तर की प्रतीक्षा में अपलक देखने लगा।

अचानक मृत्यु के क्षणिक आघात से प्राणी का चेहरा पीला हो जाता है, ठीक उसी प्रकार की स्थिति मूले की हो गई। वह जड़वत् खड़ा-खड़ा दूरस्थ धोरों को कुतूहल भरी दृष्टि से देखता रहा मानो इसके पहले उसने उन धोरों को कभी देखा ही न हो। उसकी आँखों में शनैः-शनैः कुतूहल की जगह अतुल पर अवसाद छाता गया।

जमना ने उस असह्य मौन को भंग किया, "यह कपड़े इनको मैंने दिये हैं मघले ! भला किसी की भेंट को दूसरों को कैसे दिया जा सकता है ?"

"किसी चीज पर मेरा अधिकार नहीं है ?" मघला उठ कर जाने लगा।

"ठहर मघले !" कह कर मूला झोंपड़ी के भीतर गया। उसने वापस अपने पुराने कपडे पहने और उन नये वस्त्रों को उसने जमना के देखते-देखते मघले को दे दिया।

जमना ने विरोध किया, "यह क्या किया काका ! क्या मैं इसीलिए यह कपड़े लाया था ?"

ऐंद्रिजालिक प्रकाश की तरह प्रभावशाली मुस्कान मूले के सूखे होठों पर दौड़ी। वह आदेश देने वाले साधुओं की भाँति बोला, "दान की हुई चीज पर दाता का कोई अधिकार नहीं होता है।"

तब वह उद्विग्न-सा जंगल की ओर चला गया।

× × ×

८

...

साहूकार ने जमना के लिए एक नया संकट खडा कर दिया।

बात यह हुई कि जमना ने कर्ज के जो रुपये साहूकार को दिये थे, उन्हें वह इन्कार कर गया और उसने इसकी शिकायत जमींदार को कर दी। जमींदार ने अपने आदमी को भेजा। जमना वहाँ गई। जमींदार अपनी बैठक खाने में बैठा था। उसके हाथ में गोमुखी थी। उसके अधर अभ्यनार्थ तड़प रहे थे। उसके पास साहूकार बैठा था, काला-कलूटा। दानवी क्रूरता उसकी बिच्छू सी आँखों मे चमक रही थी। बड़े-बड़े साहूकारों के विपरीत एक बात उसमें थी कि उसका पेट मोटा नही था। उसके शरीर पर अधिक चर्बी नही थी।

जमना पा-लागी करके बैठ गई।

थोड़ी देर बाद जमींदार ने अपना हाथ गोमुखी से निकाला और पश्चात्ताप से आँखें मिचमिचा कर बोला, "जमनू, साहूकार क्या कह रहा है ?"

"क्या ?"

"कह रहा है कि जमनू ने मेरे कर्ज के रुपये नही दिये।"

"हैं ?" जमना की आँखे विस्फारित हो गईं।

"यह ठीक नहीं है। न्यायसंगत भी नही। लिया है तो देना भी चाहिए।"

जमना ने अपने आपको सयत करके कहा, "मैंने इसकी पाई-पाई चुकता कर दी है। यह झूठ बोलता है।"

"मैं कसम खाकर कहता हूँ······।"

जमना उग्र हो उठी, "सेठजी, कसम आपके लिए हलुवे के समान है। जब इच्छा हुई तब खा ली, पर हम गरीबों के लिए उसका बड़ा महत्व है। माई-बाप, मैं आपके चरणों की सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि मैंने इसके सारे रुपये चुका दिये। आपको विश्वास न हो तो मेरे हाथ में भगवान की मूर्ति रख दीजिए।"

"तुमने इससे रसीद क्यों नहीं ली ?"

"मैंने इससे रसीद माँगी थी, पर इसने मुझे नही दी। इसने मुझे कहा कि गाँव में बेईमान नहीं बसते।"

"हुं: !" एक कठोर भावना जमींदार के चेहरे पर उत्पन्न हुई। उसकी गर्दन का हिलाना इतना यंत्रवत् था मानो वह कोई गम्भीर बात सोच रहा हो। साहूकार हवेली की मोटी दीवारों को निर्विकार भाव से देख रहा था। उसकी भंगिमा से ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उसे उन दोनों की बातों से कोई सरोकार नही है।

"लेकिन व्यापार, वह भी सूदखोर के साथ किया व्यापार, बड़ी सावधानी से करना चाहिए, क्योंकि इनका अपना कोई ईमान और धर्म नहीं होता। इनके जीवन का सत्य है—पैसा और इनकी आत्मा का सन्तोष और सुख है पैसा।" वह क्षण भर के लिए चुप रहा और फिर आधुनिक नेता की तरह अपने शरीर को, विशेषत: ऊपर के हिस्से को, कड़ा करके धीरे-धीरे बोला, "इनका विश्वास अगर इनके अपने बेटे भी कर लें तो यह उनसे भी दो पैसे ठगने का प्रयास करेंगे।"

साहूकार चौंक कर आगे बढ़ा। उसने जमींदार के चरण स्पर्श किये और अत्यन्त नाटकीयता से बोला, "नही-नही माई-बाप, आप मुझे इतना नीच और ओछा मत समझिए, यदि आपको मुझ पर विश्वास नही आता है तो मैं इसके सारे रुपये छोड़ता हूं।"

"क्यो ?"

"धर्म की बात है। मैं थोड़े से रुपयों के लिए आपके सामने बेईमान नही बन सकता।"

"प्रमाण के बिना मैं फैसला नही कर सकता।" जमींदार जमना की ओर उन्मुख हुआ, "तुम्हें इसके रुपये देने ही पड़ेंगे।"

जमना जोर से चिल्लाई, "दुहाई, अन्नदाता दुहाई !"

"फैसले के बाद दुहाई उचित नहीं लगती। क्या तुम्हें मेरे फैसले में सत्य नहीं दीखता ?"

"अन्नदाता !"

जमींदार ने जोर से पुकारा, "मुनीमजी !"

मुनीमजी हाथ जोड़ कर चुपचाप हुजूर के दरबार में खड़े हो गये।

"बाई सा के विवाह मे साहूकार कितना रुपया दे रहा है !"

"[illegible] !"

"इससे एक हजार रुपये वसूल करना।"

साहूकार की मुद्रा ऐसी हो गई जैसे उसके सिर पर पहाड़ टूट पड़ा हो। वह गिड़गिड़ाता हुआ बोला, "माई-बाप, यह क्या ? मैं····!"

"साहूकार, तुमने मेरे गाँव को किसी अन्यायी का गाँव समझ रखा है, जहाँ न्याय और धर्म राठौड़ी जूती से होता है ! जहाँ अच्छे-बुरे की पहचान नहीं है ! जहाँ इन्सान की कीमत एक कीड़े-मकोड़े से अधिक नहीं है !"

साहूकार ने कुछ कहना चाहा, पर जमींदार ने उसे रोक दिया, "तुम फिर अपने आपको धोखा देने की चेष्टा कर रहे हो ! क्या मेरी आँखें सच्चे को नहीं पहिचान सकतीं ? मैं सब जानता हूँ कि तुम·······!"

साहूकार का मुँह रुग्ण आदमी की तरह पीला पड़ गया।

"तुम सौ-पचास रुपये बचा सकते हो, पर मैं तुमसे सात सौ रुपये वसूल करूँगा।"

अब साहूकार के पाँवों के तले की जमीन खिसक गई।

गिड़गिड़ा कर बोला, "मुझे क्षमा कर दीजिए अन्नदाता, मैं अब कभी भी झूठ नहीं बोलूँगा। मुझे जमनू ने रुपये दे दिये थे।"

"आया रस्ते पर !"

साहूकार ने उनके पाँव पकड़ लिये।

"जाओ जमनू ! भविष्य में कभी किसी सूदखोर का विश्वास न करना।"

"ठीक है !" जमना चली आई।

इसके उपरान्त साहूकार बहुत रोया, तब जमींदार ने उसके पाँच सौ रुपये छोड़ दिये।

जमना जीवन के प्रति और सजग हो गई।

× × ×

९

"नैना !"

"………।" वह नहीं बोली।

"मैं पूछता हूँ कि ओ शिव की माँ, तेरे मुँह मे जबान है या नहीं ?"

नैना ने करवट लेकर जमना की ओर देखा। उसकी आँखों मे प्यार था।

"वाह री, तेरे नखरे भी पूगलगढ़ की पद्मिनी से कम नहीं है ! सवेरे के के चार बज रहे हैं और तू भैंस की तरह पड़ी है। उठ, जल्दी से नहा-धोकर तैयार हो जा। मुझे शिव को मन्दिर लेकर जाना है।"

"अरे ! मैं बिसर ही गई।" उसने हाथ लम्बे किये। जमना ने उसे बाँहों में भरा।

"औरत का दिमाग ही ऐसा होता है। दिन की बात रात को याद नहीं रहती और रात को दिन को।"

नैना ने उसे धुँधलके में प्यार भरी दृष्टि से देखती रही। उस दृष्टि में वैसा ही उलाहना था जैसा पति-पत्नी की मीठी झड़प पर होता है। नैना उसके गाल को खींच कर बोली, "अरे ! जा रे मर्द के बच्चे !"

जमना तन कर बैठ गई। उसने नैना को बाँहों में भर कर फिर चूम लिया। नैना 'हाय-हाय' करके भाग खड़ी हुई। जमना हँस कर बोली, "देखी मेरी मर्दानगी, मिजाजण गोरी का भागते पता ही नहीं लगा।"

नैना अपना गाल कुछ देर तक मलती रही, फिर उसके पास आकर बोली, 'मैं भी तेरे साथ मन्दिर चलूँगी। शिव की दसवीं वर्षगाँठ है। जरूर चलूँगी। मेरे न चलने से देवता नाराज हो जायेंगे।"

"चली चलना। पत्नी के साथ ही पति की यात्रा सफल होती है।"

फिर दोनों घर का काम-काज करने लगी।

इन वर्षों में जमना और नैना ने अपने जीवन का निर्माण बहुत सुन्दर ढंग से कर लिया था। उनके पास १२ बीघा जमीन अपनी हो गयी थी। झोंपड़ी की जगह कच्चा मकान था। सौ-दो सौ रुपये पास रहते थे। शिव जमींदार द्वारा संचालित स्कूल मे पढ़ता था। वह अत्यन्त सुशील और चरित्रवान लड़का था। नैना उसे हर समय अच्छी बातें बताया करती थी और जमना उसे शौर्य और त्याग की कथाएँ सुनाया करती थी। शिव जमना को काका कह कर पुकारता था। क्षण भर की देर हो जाती तो वह खेत की ओर दौड़ जाता और और काका को घसीटता हुआ ले जाता था कि माँ तुम्हारा इन्तजार कर रही है।

जमना उस बालक का आग्रह कभी नहीं टालती। उसके कहने भर की र होती कि उसकी इच्छा को पूरा कर दिया जाता। शिव में नैना की कोमलता और दृढ़ता थी। उग्रता उसे छू तक नहीं गई थी। आज वह दस वर्ष का हो या था। उसकी वर्षगांठ के उपलक्ष्य में मन्दिर में बड़ी पूजा का आयोजन ा। नैना और जमना दोनों इसे सफल बनाने में संलग्न थीं। उन्होंने एक थाल र पूजा का सामान सजाया, एक रुपया भेंट का रखा और चल पड़ीं।

मन्दिर का कार्य पूरा करके जमना शिव को लेकर जमींदार के घर गई। प्रशस्त भाल की दिप्ति के उपरान्त भी जमींदार के नेत्रों की ज्योति मद्धिम ड़ गई थी। हाथों में कम्पन सा आ गया था। आजकल उसकी आत्मा भगवान्-भजन में लवलीन रहती थी। वह गांव के दरिद्रता-पीड़ित प्राणियों को धैर्य बंधाया करता था, येनकेन प्रकारेण मदद दिया करता था।

शिव ने जमींदार को साष्टांग प्रणाम किया।

जमींदार के अन्तस् से आशीर्वचन प्रस्फुटित हुए, "जीते रहो बेटा, और अपने माँ-बाप के नाम को उजागर करो।"

शिव ने उठ कर जमींदार के कुलदेवता प्रलयंकर को नमस्कार किया। जमींदार ने पुजारी की भांति शिव को भगवान का चरणामृत पिलाया और प्रसाद खिलाने के साथ उसने एक बार पुनः उसके चिरायु होने की शुभकामना की।

वहाँ से जमना शिव को लेकर मूले के पास आई।

मूले की झोंपड़ी के समीप हरे-भरे वृक्ष लहलहा रहे थे। चतुर्दिक हरीतिमा का साम्राज्य था। आजकल मूले का ध्यान सभी बातों से हट कर अपनी इस छोटी सी दुनिया को बसाने में केन्द्रीभूत हो गया था। सुबह से शाम तक वह इन वृक्षों की रक्षार्थ उद्यम किया करता था। वस्तुतः अब उसकी कल्पना सृष्टि में इस बगिया का स्वर्गीय रूप देखने का संकल्प था। सुन्दर से सुन्दरतम रूप में वह इसे बनाना चाहता था। पता नहीं, उसमें ऐसे सृजन की शक्ति कहाँ से आ गई थी। इस कार्य से जमींदार उससे प्रसन्न था, फलस्वरूप दोनों समय का भोजन उसे जमींदार के यहाँ से मिलता था।

जमना को देखकर वह विहँस उठा। उसके झुर्रियोंदार चेहरे पर एक

ऐसी अलौकिक दिप्ति का आविर्भाव हुआ जो देखने वालों में भी आनन्द र
संचार कर देती थी ।

"जमनू ! मैंने तुम्हें अभी-अभी याद किया था । सच, तुम्हारी उम्र बं
है । मरते समय मैं इस बगिया का स्वामी तुम्हें ही बना कर जाऊँगा।"

"अभी काका तू थोड़े ही मरने वाला है ।"

शिव का तीव्र महीन स्वर बीच में ही गूँज उठा, "काका, राम-राम, ब
मैं दस वर्ष का हो गया हूँ ।

मूला का रोम-रोम खिल उठा । आत्मिक-स्नेह से बोला, "जीते रहो, दु
हजार वर्ष के हो । तुम्हें मेरी उम्र लग जाय ।" कहकर वह शिव को चूमने
लिए आगे बढ़ा । किन्तु उसके चरण अज्ञात शक्ति से रुक गये । आहत अन्त
की तीक्ष्ण व्यथा से वह मन ही मन चीख पड़ा, "ओ ! परमात्मा, मुझ पर य
अन्याय क्यों ?"

जमना उसके हृदय का भाव समझ गई । लेकिन किसी आन्तरिक आ
से वह विवश-सी खड़ी रही । फिर भी उसके संस्कारों से आक्रान्त मन में ह
चल-सी मच गई, मानो वह अपने आप से प्रश्न कर रही है कि आखिर य
देवता रूपी हरिजन इस बच्चे का प्यार क्यों नहीं कर सकता ?

शिव काका की बगिया में मुक्त पवन-सा विचरण कर रहा था ।

जमना के मानस-पटल कर एक चित्र नाच उठा । मूले के शब्द दे
"मेरी बहू चाहती थी, हमारे बच्चे होंगे, एक सुखी परिवार!" आह!
के अन्तस् मे कितना पीड़ित हाहाकार है !

"अच्छा काका, मैं चलूँ ?"

"जाओ बेटा, पर मुझे वचन दो, मेरी मौत के बाद तुम इस बगि
सँभाल लोगे, इसे उजड़ने नहीं दोगे । तुम विश्वास रखो कि मौत के बाद मैं
तुम लोगों को इस बगिया में मिलूँगा । मेरी आत्मा यहाँ से कभी नहीं ज
सकती ।"

जमना चल पड़ी ।

काका अतृप्त-सा देखता रहा ।

शिव कूद-कूद कर चल रहा था ।

१०

....

उस दिन खेत से लौटते-लौटते नैना को बुखार आ गया। सर्दी लग कर हाथ-पांव इतने जोर से दुखने और टूटने लगे कि शिव घबरा गया। नैना 'ओय मां, हाय राम' चिल्ला रही थी। उसकी आँखें लाल सुर्ख हो रही थी। वह बार-बार वेदना भरे स्वर मे कह रही थी—"मेरे पाँव टूट रहे हैं, मेरे पाँव टूट कर बिखर रहे हैं।"

शिव कभी उसके पांव दबाता और कभी सिर। कभी वह नैना को पानी की दो-चार घूँट पिलाता। अन्त में वह मूले के पास भागा और काका को बुलाने का अनुरोध किया। मूला लकड़ी लेकर खेत की ओर चला। शिव वापस आकर माँ के पास बैठ गया। वह परेशान और चिन्तित था। उसकी नजर बार-बार द्वार की ओर उठ जाती थी।

अप्रत्याशित गाँव में कोलाहल उभरा। कोलाहल दूरागत था।

तभी नैना का पड़ौसी छगन आया। वह घबराया हुआ-सा प्रतीत होता था। उसने आते ही अचेतावस्था में पड़ी नैना को कहा, "गजब हो गया नैना बहिन!"

नैना ने उसकी बात का कोई जवाब नहीं दिया। वह केवल अभिप्राय भरी दृष्टि से छगन को देखती रही।

"गाँव में खून हो गया। केवलचन्द ब्राह्मण ने ठाकुर हरीसिंह के बेटे प्रीतमसिंह का खून कर दिया। भरे बाजार में हँसिये से उसकी गर्दन धड़ से अलग कर दी।"

शिव की आँखों में जिज्ञासा भरा भय नाच उठा।

"मैं वहाँ खड़ा था। बात करते-करते वे आपस में गर्म हो गये और गर्म होकर गाली-गलौज करने लगे। प्रीतम ने केवल धक्का दिया। केवल ने उसे आगाह किया। उसे बार-बार समझाता रहा, पर प्रीतम मान ही नहीं रहा था। केवल को गुस्सा आ गया। तुम जानती ही हो कि शरीर का वह पहलवान है ही। एक ही चोट में प्रीतम का काम तमाम कर दिया। लेकिन अब बात बिगड़ती नजर आ रही है। प्रीतम के नाना महाराजा खेतसिंह के दरबार में चाकर हैं। यह भी सुनने मे आया है कि हरिसिंह अपने ससुर से मदद माँग कर

केवल को फांसी की सजा दिलायेगा।" छगन अपने आप कह कर
प्रकट करने लगा।

नैना बुखार में तड़प रही थी। उसने छगन की बात अच्छी तरह
सुनी। शिव अवश्य ध्यानपूर्वक उसकी बात सुन रहा था। जब उसने
कथन का कोई प्रभाव नहीं देखा तब चलता बना।

मूला जमना को लेकर आ गया। मूले ने जमना से परामर्श भरे स्वर
कहा, "तुम तांत्रिक जीवानन्द के पास चले जाओ। वह तुम्हें 'एक पैसा'
का देगा, इसे पहना देना। सियोदाऊ (सर्दी लगकर आने वाला बुखार)
मन्त्र से ऐसे हवा-सा उड़ता है जैसे तोप के गोले के सामने से आदमी!"

"मैं उसके पास जाता हूँ, तुम यहीं रहना काका!"

"हाँ-हाँ!"

"शिव बेटा, माँ को जो जरूरत हो, वह उसे देते रहना।"

नैन बार-बार पानी माँग रही थी।

छगन मूले को देख कर अपने घर से वापस लौट आया था।

मूले से दूर बैठता हुआ वह बोला, "ऐसी घटना मैंने जीवन भर
देखी। बात-बात में खून-खराबी कर देना शैतानों का ही काम हो सकता है।

मूले ने छगन की बात का कोई उत्तर नहीं दिया।

"मूलिया, तूने अपनी आँखों से किसी की गर्दन को धड़ से अलग होते
देखी है?" छगन के स्वर में बड़प्पन था।

"नहीं!" मूले ने गर्दन हिला दी।

"मैंने आज अपनी जन्मपत्री में जूता मार ही लिया। सच मूलिया,
ने प्रीतम को पहले नीचे पटका, बाद में एक ही झटके में गर्दन को इस
अलग किया जैसे मूली को उसके पत्तों से।"

"मूर्ख आदमियों के काम हैं यह सब!"

"महामूर्खों के!"

"नहीं तो उसे किसी की जिन्दगी लेने का क्या अधिकार था? जब
किसी को जिन्दगी दे नहीं सकते, फिर हमें लेने का क्या अधिकार है?"
ने कहा।

वे दोनों बातचीत कर रहे थे, तभी आ गई जमना।

जमना के हाथ में लाल कपड़े में बंधा एक पैसा था। उसने उस पैसे पर
ूप की और नैना को पहना दि[illegible]
नैना 'हाय-हाय' कर रही थी।
बात को दोहरा रहा था [illegible]

मूला उठा और चलता हुआ बोला, "जमनू बेटा, अगर मेरी जरूरत पड़े तो बुला लेना। अभी मैं बाजार की ओर जा रहा हूँ।"

मूला बाजार की ओर गया।

वहाँ बड़ी भीड़ थी।

स्वयं जमींदार उपस्थित था। उसने खून से लथपथ जमीन को साफ करवा दिया था। साथ ही अपने निजी आदमियों की संगीनों की छाया में प्रीतम की लाश को जलाने का हुक्म दे दिया था। अपने विश्वस्त आदमियों को उसने गाँव के चारों ओर तैनात कर दिया था कि कोई भी राजपूत गाँव से बाहर न जाने पाये, जाने वाले को तुरन्त गिरफ्तार कर लिया जाय।

हरिसिंह और केवल के घरों के आगे भी जमींदार के आदमी तैनात थे। हरिसिंह अपने बेटे की लाश को महाराजा के सम्मुख पेश करना चाहता था, पर जमींदार ने इसकी आज्ञा नहीं दी। जमींदार ने केवल इतना ही कहा "यह मेरे गाँव का मामला है, इसलिए इसे मैं ही सुलझाऊँगा।" तब हरिसिंह ने उस पर सीधा लांछन लगाया कि "मैं अपना न्याय आपसे नहीं करवाना चाहता, क्योंकि आप ब्राह्मण हैं, इसलिए आप ब्राह्मण का पक्ष लेंगे।" इससे जमींदार हरिसिंह से रुष्ट हो गया और उसने उसके प्रति कड़ा रुख लेने की प्रतिज्ञा कर ली।

दोपहर तक यह मामला ठण्डा-सा पड़ गया।

लाश जला दी गई।

उसके दो सप्ताह बाद जब शिव को शहर के स्कूल में दाखिल कराके जमना लौटी तब उसी रात एक भयानक घटना घटी। केवल का पता नहीं था। हरिसिंह को जमींदार ने आश्वासन दिया था कि यदि यह शान्त रहेगा तो वह 'केवल' को मृत्यु का ही दण्ड देगा, किन्तु केवल कहीं भाग गया था। उसका पता नहीं लग रहा था। हरिसिंह प्रतिशोध की आग में जल रहा था। उसने किसी तरह अपने ससुर को यह खबर पहुँचा दी। जाति-गौरव-मदान्ध

उसके ससुर और दस सालों ने बदला लेने की ठान ली। बदला कब और कैसे लिया जायगा, इसकी खबर किसी को नहीं लगी।

तारों भरी रात थी।

उसके धुँधलके अन्धेरे में नैना अपने पुत्र की मधुर स्मृति में डूबी हुई थी। उसके बिना घर में शून्यता छा गई थी। रह-रह कर उसे ध्यान आता था। उसका शिव यहीं कहीं खेल रहा है।

आखिर उसने जमना से पूछा, "जब तूने उसे अकेले को छोड़ा तो वह रोया होगा?"

"हाँ, उसकी आँखें आँसुओं से भर आई थीं।"

"अब वह कब वापस आयेगा?"

"एक साल के बाद।"

"इतनी जल्दी?"

"लेकिन वह दो महीनों के लिए ही आयेगा। शहर के मदरसों (स्कूलों) में गर्मियों की छुट्टियाँ होती हैं। समझी!"

"नहीं, नहीं, वह अब मेरे पास सदा-सदा के लिए कब आयगा?"

"छः साल बाद, छः साल में वह दसवीं पास कर लेगा। दसवीं पास करने के बाद वह हाकिम बन सकता है।"

"सच?"

"हाँ!"

"लेकिन छः वर्ष में मैं उसके लिए रोती-रोती थक जाऊँगी।"

"औरतों की तरह हिम्मत न तोड़। थोड़े दिनों के बिछोह के बाद सुख कितना मिलेगा? लोग तुझे हाकिम की माँ कहेंगे।" जमना अकड़कर बोली।

"मेरा जी नहीं लगता है।"

"क्यों?" कहकर जमना उसके पास आ गई। उसने नैना को बाहुओं में भर लिया। अत्यन्त प्रेमपूर्वक बोली, "मेरे होते हुए तेरा जी क्यों नहीं लगेगा? अब मैं तेरे संग ही सोऊँगा। उसके होते हुए तेरे संग सोने में मुझे लाज लगती थी।"

"अरे जा!"

"आज मैं अकेला नहीं सोऊँगा।"

यह बातचीत हो ही रही थी कि 'धांय-धांय' की आवाज सुनाई पड़ी। सन्नाटे में भयकर आवाज ने जमना और नैना के मन में भय उत्पन्न कर दिया। वे डर के मारे एक-दूसरे से लिपट गई। तभी आवाज आई कि गांव में डाकू आ गये हैं। सब चौकन्ने हो गये। जमना ने भी लाठी सँभाली।

नैना ने उसे रोका। उसने आगे बढ़ कर कहा, "कहाँ जाता है ?"

"अपने घर के आगे।"

"नहीं, मैं तुझे नहीं जाने दूंगी।"

"क्यों ?'

"कह दिया न !"

अँधेरे में गोलियाँ आग उगल रही थीं। लगभग पन्द्रह-बीस मिनट तक गोलियाँ चलती रही। इसके बाद जमादार संगीनों से लैस होकर आ गये। उन्होंने डाकुओं का सामना किया, डाकू भागे। वे पूरब की तरफ से आये थे और पश्चिम की ओर जमना के घर के आगे से भागे। वे निरन्तर गोलियाँ चला रहे थे। अचानक एक गोली जमना के, जो द्वार के आगे खड़ी थी, आ कर लग गई। वह चीख कर गिर पड़ी। नैना उसकी चीख सुन कर आई। जमना के गोली गर्दन के पास लगी थी। नैना ने झट से दीया जलाया। देखा जमना खून से लथपथ है। उसकी आँखें बाहर निकल आई हैं। उसके चेहरे पर भयानक पीलापन छा गया है।

नैना चिंघाड़ पड़ी। उससे लिपट गई। बोली, "यह क्या हुआ, तू बाहर क्यों गई थी ?"

जमना ने संकेत से उसे शान्त रहने को कहा। नैना के आँसू नहीं रुक रहे थे। उसने रोते-रोते पूछा, "क्या ?"

"मैं मर रही हूँ, मरते हुए मैं शिव को नहीं देख सकी। पर तू वायदा कर कि तू शिव को ऐसा आदमी बनायेगी जो हम दोनों का नाम उजागर करेगा। तू उसे यह कभी न बताना कि मैं उसकी कोई नहीं लगती थी। मैं यह भी चाहती हूँ कि तू मूले को बुलाकर मुझे अभी की अभी जला दे। यह भेद प्रकट हो गया तो शिव मुझे अपना काका नहीं समझेगा। तब इस ससार

में मेरा अपना कोई नहीं होगा। वचन देती है न? बोल..............
बोल.............!"

जमना पत्त बनी।

जमींदार के आदमी डाकुओं का पीछा करते-करते आ गये थे। सरहद की ओर वे बढ़ रहे थे। उनके पीछे जमींदार खुद आ रहा था। जमींदार को देखते ही नैना उसके कदमों में लिपट गई। वह दहाड़ मार कर रो पड़ी। जमींदार उसके रोने का तात्पर्य नहीं समझा। उसने नैना को उठाया और स्नेह से हाथ फेर कर पूछा, "सब कुशल-मंगल है न?"

नैना जमींदार का हाथ पकड़ कर लाई और जमना का निर्जीव शरीर दिखा दिया। दीये की हल्की लौ में जमना का विकृत मुख भयावह लग रहा था। रक्त की बूंदें बिखर गई थीं। खून की एक लघु धारा उसके पास से बह चली थी।

"यह सब कैसे हुआ?"

"इन्हें डाकू की गोली लग गई!"

"राम-राम!"

जमींदार नैना को एक किनारे खींच कर ले गया। वह अत्यन्त स्नेहिल-पीड़ित स्वर में बोला, "जो हो गया, उसके लिए मैं तुमसे क्षमा चाहता हूँ, पर मैं चाहता हूँ कि इस लाश को अभी इसी वक्त जला दिया जाय। क्योंकि सवेरे महाराजा के आदमी जाँच-पड़ताल करने आयेंगे और अधिक खून-खराबी देख कर वे मेरे विरुद्ध कठोर कदम भी उठा सकते हैं।"

नैना ने विनीत-रुँधे स्वर में कहा, "आपका हुक्म सिर आँखों पर।"

"फिर मैं अभी चार आदमी भेजता हूँ, वे सब प्रबन्ध कर देंगे।"

रात में पाँच मुर्दे जला दिये गये। जमना, केवल का बाप, माँ, भाई और उसकी पत्नी।

दरअसल वे हत्यारे डाकू नहीं थे, वे हरिसिंह के साले व ससुर के नौकर थे। प्रतिशोध में उन्होंने केवल के परिवार को मार डाला। केवल के घर में सिर्फ उसका आठ वर्ष का बच्चा बचा था। जमींदार बच्चे को अपने घर ले गया।

गनीमत यह हुई कि महाराजा तक यह रिपोर्ट नहीं जा सकी। नैना

भी जमींदार ने प्रसन्न कर दिया। पर सातवें दिन महाराजा का एक हरकारा आया और उसने जमींदार को महाराजा के हुजूर में पेश होने का हुक्म सुनाया। जमींदार को एक सोने की मोहर लेकर जाना पड़ा। वहाँ से जब वह लौटा, तब वह बहुत रोष में था। वह बार-बार हरिसिंह पर झल्ला रहा था। महाराजा ने सारी घटना का उल्लेख करके कहा, "तुम्हें सौ सोने की मोहरें देनी पड़ेंगी अन्यथा हम तुम्हारी जमींदारी को जब्त कर लेंगे।"

उन्होंने उस पर यह इल्जाम भी लगाया कि "इस परिवार को खत्म कराने में तुम्हारा ही हाथ है।"

जमींदार बूढ़ा था ही। सन्तानहीन और शान्त। उसने दूसरे ही दिन चुपके से अपने सारे जेवर और नगदी अपने भतीजे को देकर वृन्दावन भेज दिया। तब वह हरिसिंह के पास गया। उसने उसके ससुर की सारी बेईमानी बखान की। उसे गालियाँ तक दे डाली। आवेश में उसने सभ्यता का उल्लंघन भी कर दिया। हरिसिंह को गुस्सा आ गया। उसने तत्काल कहा, "जमींदार साहब, मुझसे टक्कर न लीजिए, केवल की तरह मैं आपकी सात पीढ़ी को भी समाप्त करा दूंगा। यहाँ राजपूतों का राज्य है।"

जमींदार तुरन्त समझ गया कि इस हत्याकाण्ड में किसका हाथ है।

लेकिन केवल चुप थोड़े ही बैठने वाला था! उसने ठीक बीस-पच्चीस दिन बाद हरिसिंह के घर के नौ सदस्यों को मार डाला और फिर उसके ससुर के गाँव गया। पहली बन्दूक में केवल ने उसके ससुर को उस लोक पहुँचा दिया। उसके बाद इधर सिर्फ अकेला केवल और उधर हरीसिंह के सारे साले। दोनों ओर से बन्दूकों का खुलकर प्रयोग हुआ। अन्त में केवल उसके मँझले साले को मार कर वीर-गति को प्राप्त हो गया। परिणामस्वरूप महाराजा ने दामोदर की जमींदारी अपने दखल में कर ली और उसे राज्य से निकल जाने का आदेश दे दिया। जमींदार तुरन्त चला गया। उसने कोई विरोध नहीं किया। वह जमींदारी से थक चुका था, फिर उसके अपनी सन्तान भी नहीं थी।

× × ×

११

...

नया प्रबन्धक महाराजा का कोई रिश्तेदार था। राजसी सामन्त था। नाम था—उल्लाससिंह। उसने आते ही गांव में लाग के नये कानून बनाने शुरू किये। उसने गांव के समस्त किसानों को एकत्रित करके यह घोषणा की—(१) आजम खर्च

(२) कुंवरजी का कलेवा

(३) बाईजी का हाथ

(४) कारज खर्च

(५) पड़वा मेंग

(६) धुंवा पांछ

(७) खटबन्दी

(८) हलबेठिया

(९) ठाकुर साहब का नाई

(१०) सफाई खर्च

(११) रंगमहल का खर्च

—इतनी लाग किसानों को हर बरस देनी पड़ेगी। इसके साथ उल्लाससिंह ने यह भी कठोर शब्दों में कहा, "मेरे खेत की जुताई और कटाई के समय हर घर से एक आदमी काम करने आयगा। जो इन आज्ञाओं को नहीं मानेगा, उसके साथ कठोर व्यवहार किया जायगा।"

इस नई घोषणा से ग्रामवासियों में हलचल मच गई। राजपूतों को ऐसा विश्वास था कि हमें इन लाग-बाग से मुक्ति मिलेगी, पर उल्लाससिंह ने किसी का भी लिहाज नहीं रखा। उल्टे जब राजपूत टोली उसके पास गई, तब वह बोला, "न्याय-अपना पराया कुछ भी नहीं देखता, मैं आपका ठाकुर हूं और आप मेरी प्रजा। प्रजा सब बराबर है।" इससे राजपूत टोली में रोष की लहर दौड़ गई। किन्तु कुछ करना उनके बस के बाहर की बात ठहरी।

उल्लास ने मूले की बगिया को भी सहायता देनी बन्द कर दी। उसने एक दिन यह हुक्म जारी किया कि "इस बगिया का मालिक आज से वह

भंगी नहीं, मैं रहूँगा।" और तब उसके दो आदमियों ने आकर बेचारे मूले को उसकी बगिया से धक्के मार कर बाहर निकाल दिया।

उस समय दोपहर थी।

मूला मिट्टी की टूटी मटकी से अपनी बगिया के पेड़ों को पानी दे रहा था। वह अत्यन्त प्रसन्न और खुश था। उसकी आँखों में अपने हाथ के लगाये वृक्षों को देखकर एक अलौकिक चमक उत्पन्न होती थी। लगता था, इस बगिया के विभिन्न हरे-भरे पेड़, उसके अपने वंश-वृक्ष हों। वह धीरे-धीरे कोई लोक-गीत भी गुनगुना रहा था।

एकाएक उल्लासिंह के कारिन्दों ने जोर से उसे ललकारा।

मूला तुरन्त सिर झुका कर उन दोनों के सामने हाजिर हो गया।

"क्या है अन्नदाता ?" उसने विनम्र शब्दों में कहा।

"आज तुझे इस बगिया को खाली करना होगा !"

जैसे बिजलियाँ गिर पड़ी हों मूले पर—ऐसी भंगिमा हो गई उसकी।

"ठाकुर की आज्ञा है कि तू यहाँ नहीं रहेगा !"

"आखिर क्यों ?"

"यह तू उनसे पूछना।"

"लेकिन मैं यहाँ से नहीं जाऊँगा।"

दोनों कारिन्दे उसके दृढ़ स्वर और निश्चय के भाव को देख कर सहम गये। सहसा उनका साहस नहीं हुआ कि वे उसकी ओर बढ़ें। हल्की जड़ता के वशीभूत वे उसे अर्थभरी दृष्टि से निहारते रहे।

अचानक बड़ा कारिन्दा सावधान होकर कठोर स्वर में बोला, "तुझे यह जगह इसी घड़ी खाली करनी होगी, अन्यथा हमें लाठियों से काम लेना पड़ेगा।"

मूले ने इधर-उधर देखा जैसे उसे लग रहा था कि वह कोई स्वप्न देख रहा हो। भावावेश में उसके होठों पर हल्के उन्माद की हँसी बिखर गई, मानो यह स्वप्न अभी-अभी टूट जायगा और ये दो काल्पनिक यमदूत एकदम से गायब हो जायेंगे। जाग्रतावस्था में भी उसकी अर्ध-चेतना कह रही थी—"कैसे विचित्र सपने आते हैं !"

"ओ बूढ़े, अपना बोरिया-बिस्तर गोल करेगा या लाठी को सँभालूँ ?"

चेतना उसकी तेज आवाज सुनकर सजग हो गई। मूला आँखें फाड़-फाड़ कर उन दोनों को देखने लगा।

"क्या हमें नही जानता ? हम दोनों ठाकुर के कारिन्दे हैं।"

"जान गया, जान गया !"

"फिर इस वगिया को छोड़ कर भंगी वस्ती में चला जा।"

"क्यों ?"

"ठाकुर सा का हुक्म है।"

"मैं इसे किसी के हुक्म से नही छोड़ सकता। इस वगिया का मालिक मैं हूँ, तुम्हारा ठाकुर नही।"

"वदतमीज, जवान लड़ाता है।" कह कर एक आदमी आगे बढ़ा, पर दूसरे ने उसे रोक दिया, "अरे रे रे रे……किसको छूता है, जात का भंगी है, तू खुद भ्रष्ट हो जायगा।"

पहला आदमी एकदम रुक गया। फिर उसने लाठी का धक्का देकर मूले को नीचे गिरा दिया। मूला उठने लगा, पर दूसरे ने उसकी पीठ पर एक लकड़ी की चोट ओर की। वृद्ध शरीर। वर्षों से श्रान्त और टूटा हुआ। दूसरी चोट से मुँह के बल गिर पडा। नाक से खून बहने लगा।

तभी आ गई नैना। उसके हाथ में दो बाजरी की रोटियाँ थी और उन पर नमक। जब उसने मूले को पिटते देखा तो वह भौंचकी-सी चीखती हुई बस्ती की ओर भागी। बस्ती वालों ने जब यह सुना, तब वे सबके सब लाठियाँ लेकर वगिया की ओर भागे आये और उन्होंने आव देखा न ताव, उन दोनो कारिन्दों को पीट कर भगा दिया।

धीरे-धीरे राजपूत, ब्राह्मण, वैश्य चले गये। हरिजन भी अनागत आशंका से भयभीत होकर चलते बने। केवल रह गई नैना। वह कुछ देर जमीन पर पड़े मूले को देखती रही, जिसका मुँह पीला पड़ गया था, जिसकी आँखों में मृत्यु की भयावह छाया तैर रही थी। वह इस तरह सिसक-सिसक कर लम्बी साँस ले रहा था जैसे गर्मी के मौसम में कोई हारा हुआ पशु लेता है।

उसने पुकारा, "काका !"

मूले ने धीरे से करवट बदली।

"पानी !"

"हां, बेटा पानी नहीं, मुझे छूना मत, तुम्हें मेरी सौगन मेरे हाथ मत लगाना।" नैना अजीब स्थिति से घिर गयी।

नैना ने इधर-उधर देखा और फिर वह भंगी बस्ती की ओर भागी। वहाँ से वह एक लड़के को लेकर आई और उसने मूले को पानी पिलाया। मूला अपना हाथ-मुँह धोकर बैठ गया। उसकी आँखों से आँसू बह रहे थे। तब वह नैना की ओर न देखकर अपने आप से बोला, "सचमुच अब मुझे यह गाँव छोड़ना ही पड़ेगा, कौन ऐसी दुष्ट आत्मा की छत्रछाया में रहेगा जो अगुणों का भण्डार है। जो आदमी को सूखी हुई डाल समझता है।"

"लो काका, खाना खा लो!"

"खाना अब मैं मर कर ही खाऊँगा।"

"काका, तुम्हे मेरी कसम है। खाना तुम्हें खाना ही पड़ेगा।"

"बेटी तंग न करो। मन के ऊपर से किया गया कोई काम ठीक नहीं होता।"

नैना का ध्यान उसके घुटनों की ओर गया। घुटनों से लहू बह रहा था। मूले ने उस लहू को क्षण भर के लिए करुणा भरी दृष्टि से देखा, फिर उसने अपनी हथेली मे घूल ली और उसे साफ करके अपने घुटनो पर चिपका दी।

"जब तुम्हारी इच्छा हो तब रोटियाँ खा लेना। हाँ, शहर में कौन से मदरसे मे शिव पढ़ता है?"

"क्यों?"

"मैं उसे घर लाना चाहती हूँ।"

"लेकिन क्यों?"

"मैं अकेली हूँ। मुझे डर लगता है!"

"फिर तुम किसी पड़ोसिन के यहाँ क्यों नही चली जातीं? उसको यहाँ ले आओगी तो उसकी पढ़ाई अधूरी रह जायगी। इससे जमनू की आत्मा को बड़ा दुःख पहुँचेगा।"

"आत्मा का दुःख इस जीवन से अधिक नही है। कल कोई रात के अँधेरे में घर में घुस आया और मुझे ही कत्ल कर दे तो?" नैना की आँखों में भय की रेखाएँ नाच उठी।

"तुम अँधेरे से डरती हो ? नया ठाकुर न्याय-अन्याय के भेद को नहीं समझता है, फिर भी इस ठाकुर के अन्याय के थोड़े से अँधेरे के डर से तुम अपने बेटे के जीवन मे उम्र भर के लिए न मिटने वाला अँधेरा पैदा कर दोगी ! फिर वह इन जालिमों का सामना कैसे करेगा ? फिर वह बड़ा होकर इनसे लड़ेगा कैसे ? हम लोगों के सपने कैसे पूरा करेगा ?"

"लड़ने के लिए उसे तलवार कौन उठाने देगा ! जाट का बेटा है वह ! फिर राजपूत जब चाहे, उसे शूली पर चढ़वा सकते हैं ! मैं अपने बेटे को तलवार की धार पर चलने नहीं दूँगी ।" कहकर नैना चलने लगी ।

उसे नाराज होते जाते देखकर मूला बोला, "सुन, बेटी सुन । शहर में एक मदरसा है—जैनियों का । वहीं पढ़ता है तुम्हारा बेटा ।"

नैना ने जाते-जाते कहा, "मैं उसे ले आऊँगी ।"

वह घर आ गई और सामान बाँधने लगी; त्योंही ठाकुर के घर का बुलावा आ गया । वह गई । ठाकुर के दरबार मे गाँव के बड़े-बड़े पंच और बूढ़े लोग बैठे थे । एक ऊँचे सिंहासन पर ठाकुर बैठा मूँछों पर ताव दे रहा था । नैना को देखते ही ठाकुर ने कहा, "जानती है, मैंने तुझे क्यों बुलाया है ?"

नैना आगे बढ़ी । उसने घूँघट निकाल लिया । सबसे पहले उसने ठाकुर के चरण-स्पर्श किये । बोली, "मैं नहीं जानती, अन्नदाता !"

"सच-सच बता, मेरे आदमियों को किस-किस ने पीटा ?"

"मैं कुछ नहीं जानती !"

"झूठ बोलने की सजा बड़ी बड़ी होती है ।"

"आपके चरणों की सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि मैं कुछ भी नहीं जानती। मैं उस समय बिलकुल हक्की-बक्की हो गई थी ।"

ठाकुर ने कड़क कर कहा, "मुझे लगता है कि इस मामले पर सारे गाँव वाले एक हो गये हैं । किन्तु नतीजा इसका अच्छा नहीं निकलेगा । फिर मैं धर्म के विरुद्ध जरा भी नहीं चल सकता । मूले को कल तक वहाँ से हटना ही पड़ेगा ।"

चौधरी तोताराम खड़ा होकर बोला, "अन्नदाता ने समझा, यह न्याय नहीं है । वह नीची जाति का भले ही हो, पर है देवता के समान ।"

"थू है !" ठाकुर के चेहरे पर घृणा नाच उठी। वह सबको फटकारता हुआ बोला, "तुम लोगों की अक्ल पर पत्थर पड़ गये हैं। एक भंगीड़े को देवता कहते हुए तुम लोगों को लज्जा नहीं आती ? आप ब्राह्मणों का धर्म क्या यही कहता है कि आप अपने ईश्वर के समान ठाकुर की आज्ञा की अवज्ञा करो ? मैं कहता हूं कि उस बगिया को मूला कल तक खाली कर दे ! जाओ तुम सब !"

सब चले गये।

नैना को वहाँ रोक लिया गया।

सबके चले जाने के बाद ठाकुर ने उसके बारे में सारी जानकारी हासिल की और उसे हुक्म दिया, "रात को तुम्हे ठकुराणी के पास दो घण्टे के लिए आना पड़ेगा।"

"क्यों ?"

"ठकुराणी सा की सेवा के लिए।"

नैना ने हाँ भर ली, क्योंकि उसे डर लग रहा था कि अगर ठाकुर ने उसके विगत जीवन का गम्भीरतापूर्वक अन्वेषण किया तो उसका जीवन पुनः उसी नाटकीय यातनाओ से युक्त ड्योढ़ियों मे बन्द हो जायगा। फिर भी उसे अन्देशा हुआ कि उसके जीवन की मुक्ति के क्षण अब समाप्त हो रहे हैं। अब वह पुनः ठाकुरों के अत्याचारों को सहने के लिए दुर्भाग्य के हाथों सौपी जा रही है।

वह लौट आई और वेदना मे तड़पती रही।

× × ×

उसे आज जमना की बड़ी याद आयी। वैसे भी उसका स्वभाव बन गया था कि वह जमना के बिना इस जीवन को बंजर धरती महसूस करे। वर्षों पति के रूप में उसे समझ कर नैना उसके अभाव में अपने को सचमुच विधवा समझने लगी। उसे रात को नींद नहीं आती थी। उसको बार-बार जमना का व्यवहार, बर्ताव, उसकी अकड, उसका प्यार, आलिंगन······ओह ! वह सच-मुच उसके बिना अपने आपको खुश नही रख सकती। वह जीवन अब उसके उसके लिए एक शाप है। उससे अच्छा नैना को पति नहीं मिल सकता।

नैना को महसूस हुआ कि जमना उसके समीप सो गयी है। उसके गालों पर उँगलियां दौड़ रही हैं। उसे अपने में भीच कर उस पर चुम्बनों की वर्षा

कर रही हैं। उसकी दोनों टाँगों को अपनी टाँगों में जकड़ उसे मसोस रही हैं।······सच जमना उसे कितना प्यार करती थी। क्या कोई पति भी अपनी पत्नी को करता होगा ? बेहद प्यार !

और इधर उसके बिना सब नीरस-नीरस हो गया था। उसने 'काला' ओढ़ लिया था और अपने आपको उतनी सीमा में रहने दिया जैसे उसका असल पति मर गया हो।

सच नैना अपने आपको विधवा समझती है। उसे इस अनुभूति के साथ एक अज्ञात आनन्द का आभास होता था। और यह सही भी है कि वह जमना के बिना अपने आपको काफी असुरक्षित समझने लगी थी।

जमना लोगों की सन्देह का पात्र अवश्य रही पर भोले ग्रामवासियों ने उसे बिना मूँछ और जनानिया मर्द समझ रखा था। कुछ भी हो, उसके बिना नैना का जीवन अन्तहीन कथा की व्यथा लेकर गुजर रहा था।

× × ×

१२

शिव आ गया।

जब उसने अपनी माँ को देखा, तब वह भौचक्का-सा उसे देखता रहा। काले वेश में नैना का गोरा रंग हालांकि प्रिय लग रहा था, फिर भी बालक की प्रखर बुद्धि ने यह समझते देर नहीं लगाई कि काले वस्त्र अशुभ के सूचक होते हैं। उसने वात्सल्य से परिपूर्ण आँखों से माँ को देखकर कहा, "तू काले कपड़े क्यों पहनती है ?"

नैना का गला भर आया। उसके नयनों में अश्रु छलछला आये।

"तूने मुझे बताया नहीं; और काका कहाँ है ?

नैना अब अपने को नहीं रोक सकी। वह फूट-फूटकर रो पड़ी। उसने

र को सीने से लगाकर कहा, "तेरा काका हमें सदा-सदा के लिए छोड़कर ा गया ।"

शिव के मानस-पटल पर काका के साथ गुजारे हँसी-खुशी के दिन नाच । वह दहाड़ मारकर रोया नहीं, पर उसकी अश्रु भरी आँखों में झाँकती पुन-वेदना स्पष्टतया पहचानी जा सकती थी । वह बहुत देर तक वहीं बैठा ा और अन्त में माँ के बड़े अनुरोध पर स्नान आदि करने चला ।

स्नानादि से निवृत्त होने पर माँ ने उसे छींट का रंग-बिरंगा कुर्ता पहनाया। सके बालों में इतना तेल डाला कि वह ललाट पर बह निकला । काजल सकी आँखों में डाला और ललाट के दोनों कोनों में उसने बालों की ओर न्मुख दो अर्ध-चन्द्राकार बनाये ताकि उसके बच्चे को नजर न लगे ।

तब उसने मूर्तिमन्त सौन्दर्य के समान अपने पुत्र के चेहरे पर झलकती ाभा और सुषमा को देखा । और भावावेश में उसके गालों पर कई चुम्बन ांकित कर दिये । शिव का वर्ण गोरा था । वर्ण में कान्ति थी । आँखों में हराई के कारण दूसरों को मोहने वाला एक विचित्र आकर्षण था । उसके ाल गहरे काले थे । हालाँकि गाँव में कोई भी बाल नहीं रखता था, लेकिन सने शहर में अन्य लडकों की तरह बाल कटवाये थे ।

"माँ, मैं बाहर जाऊँ ?"

"हाँ बेटे, पर पहले शिवजी के दर्शन कर लेना और हाँ चौधरीजी को तूने कोई कष्ट तो नहीं दिया ?"

"नहीं ।"

चौधरी तोताराम ही उसे लेकर आया था—शहर से ।

शिव बाहर घूमने चला गया ।

वह गाँव के मैले-कुचैले लड़कों में राजकुमार की तरह लग रहा था । सारे लड़के उके घेरे हुए थे और शहर की बातों को सुनने के लिए उत्साह दिखा रहे थे । वह स्वयं भी अभिमान भरी भावनाओं से भरकर छोटी-छोटी बातों की नमक-मिर्च लगाकर अपने मित्रों के सामने पेश कर रहा था ।

अभी वह घूम ही रहा था कि एक रथ उसके सामने से गुजरा ।

रथ को देखते ही गाँव के सारे लड़के हतप्रभ से खड़े हो गये । उन्हें इस तरह खड़ा देखकर शिव ने पूछा, "इसमें कौन बैठी है ?"

"वाई सा ?"

"कौन बाई सा ?"

"अपने नये ठाकुर की बेटी ?"

शिव उस लड़की को बहुत देर तक देखता रहा।

जब वह घर लौटा तब तक साँझ हो गई थी। नैना अपने घर के

काम-काज निपटाकर ठाकुर की हवेली की ओर चलने को उद्यत हुई। शि

उसकी कमर के सहारे लटकते हुए कहा, "माँ, कहाँ जा रही हो ?"

"ठाकुर के घर !"

"क्यों ?"

"आज से मैं कुछ देर के लिए वहाँ हर रोज जाया करूँगी ?"

"पर पहले तो तू नहीं जाती थी !"

"पहले की बातें पहले अन्नदाता के साथ चली गईं। अब नई बातें।

यदि हम उनके कहे अनुसार नहीं चलेंगे तो कष्ट ही पायेंगे।"

"फिर मैं भी चलूँगा।"

"न-न !"

"नहीं माँ, मुझे अकेले को यहाँ डर लगता है।"

नैना ने उसे अपने साथ ले लिया।

ठकुराणी मखमली शैया पर सोई हुई थी। उसने अनेक कीमती अँगूठि

पहन रखी थी तथा अफीम का नशा भी करती थी। उसे ढोलनियों का श

शौक था। हर रात वह अपने आगे ढोलनियों का नाच-गाना कराया करती

थी। जब वह नशे में मस्त हो जाती, तब वह अपनी अनेक दासियों के सा

दुर्व्यवहार भी कर बैठती थी।

नैना ने जाकर ठकुराणी सा को नमस्कार किया।

ठकुराणी ने तुरन्त कहा, "तू नयी है क्या ? हाय राम, यह इस ह

हवेली में नहीं आ सकता। नाथी, इसे कह दे कि जिस पग आई हो, उसी प

वापस लौट जा।"

ठकुराणी की खास दासी नाथी आई और उसने बड़ी उपेक्षा से बिना कु

बोले, हाथ के संकेत से कहा कि तू चली जा। नैना ने सोचा कि चलो, उन

टूटी। तभी ठकुराणी की बेटी केसर कुँवर ने शिव का हाथ पकड़ कर कमरे में प्रवेश किया।

"माँ सा, माँ सा, इसे कहो कि यह हमारे साथ खेले।"

ठकुराणी सा चौकन्नी हो गईं। गाव-तकिए के सहारे अकड़ कर बैठकर वह गम्भीर-भारी स्वर मे बोली, "यह कौन है छोरा ?"

नैना रावले (अन्त.पुर) के समस्त कायदे-कानून जानती थी। एक इस्लामी ढंग का अभिवादन करके वह बोली, "यह लड़का आपकी दासी का है।"

"तू क्या काम करती है ?"

"मैं खेती-बाड़ी करती हूँ।"

"घर में और कौन-कौन है ?"

"इस बच्चे के सिवाय कोई नहीं।"

"विधवा हो !" और ठकुराणी अट्टहास करके बोली, "मैं भी कैसी मूर्ख हूँ। काले कपड़ों को देखा ही नहीं।" वह नाथी की ओर मुखातिब होकर बोली, "इसे कह दो कि यह हमारा पखा झला करे, पर इतना ख्याल रहे कि वह ठाकुर सा से बातचीत न करने पाये। अगर कभी हमने इसे ठाकुर सा से बातचीत करते देख लिया तो हमसे ज्यादा कोई बुरा नहीं होगा।"

नाथी ने फिर पहले की तरह मौन रहकर ही उसे सकेत किया।

"ओ छोरे, बाई सा के साथ खेल।"

शिव उसके साथ चल दिया।

ठाकुर की गोलियों के अनेक बच्चे केसर की हाजिरी मे थे। वे गुलाम जो अर्ध-नंगे थे अथवा बच्चियाँ जिन्होने केसर के फेंके हुए वस्त्र पहन रखे थे, सभी से अपने अस्तित्व को मार कर केसर के लिए खिलौने बने हुए थे। केसर उनका खिलौनों की तरह उपयोग करती थी। कभी किसी को घोड़ा बनाती और कभी चार-चार बच्चों को एक-दूसरे पर सुलाकर उन पर बैठ जाती। शिव को यह सब अच्छा नहीं लगा। वह निश्चल-सा खड़ा रहा।

केसर ने आकर पूछा, "तू चुपचाप क्यूँ खड़ा है ?"

शिव ने कहा, "मैं तुम्हें·······।"

बीच में ही एक दासी क्रोधित होकर आई और बोली, "तुम नहीं 'आप'! इन्हें 'जी' कह कर पुकारा करो—आदर के साथ।"

शिव सँभल गया, "मैं आप का खेल देख रहा हूँ।"

तभी एक बच्ची चिल्लाई, "बाई सा, बाई सा, घोड़ा तैयार है।"

एक लड़का घोड़ा बन गया। केसर ने उसकी पीठ थपथपाई। अपने साथियों को बुलाया और तीनों जने उस पर चढ़ गये। घोड़ा बना हुआ लड़का कमजोर था। तीनों का बोझ वह नहीं सह सका। दब गया। उसके दबते सवारियाँ गिर पड़ीं। केसर को गुस्सा आ गया। वह उसे डाँटने लगी। समीप में पड़े बेंत को उठाकर उसने लड़के को पीटना शुरू कर दिया। लड़का चीख पड़ा। शिव से उसका रोना नहीं सुना गया। उसने तुरन्त केसर के हाथों से बेंत छीन ली।

दासियाँ अभी पत्थर की तरह निश्चल खड़ी थीं, बेंत को छीनते ही उन्होंने शिव को पकड लिया और उसे डाँटने लगीं। केसर को भी गुस्सा आ गया। उसने बेंत छीन कर तड़ाक से शिव की पीठ पर जमा दी। शिव ने विरोध ही कहा, "मुझे और मार लो बाई सा, पर इसे मत मारो। यह बड़ा दुबला है। लो, मारो न !....नहीं तो आप मुझे घोड़ा बना लीजिए। मैं सबका बोझ उठा लूँगा !"

केसर उसे देखती रही—स्नेहपूरित भावों से।

फिर उसने खिड़की से उस बेंत को बाहर फेंक दिया।

दासी ने दूध का गिलास उसके सामने हाजिर किया। ठकुराणी सा की आज्ञा थी कि जब केसर कुँवर को दूध पिलाया जाय तो उसके पास कोई बच्चा न रहे। धीरे-धीरे बच्चे भी यह सब समझ गये थे। दूध का गिलास देखते ही वे बाहर चले गये। केवल शिव खड़ा रहा।

दासी ने कहा, "बाहर निकल !"

शिव बाहर की ओर जाने लगा।

केसर ने आज्ञा भरे स्वर में कहा, "यह नहीं जायगा।"

दासी ने अनुरोध किया, "ठकुराणी सा ने मना कर रखा है।"

केसर ने पाँव पटकते हुए हठपूर्वक ऊँचे स्वर में कहा, "मैं कहती हूँ, यह नहीं जायगा, नहीं जायगा ! यह चला जायगा तो मैं दूध नहीं पीऊँगी !"

लाचार दासी ने शिव को वहीं पर खड़ा रखा।

आधा गिलास दूध पीने के बाद केसर ने शिव की ओर गिलास करके कहा, "ले यह दूध तू पीले !"

शिव ने गर्दन हिलाकर कहा, "नहीं !"

"क्यों ?"

"दूसरे के हिस्से का और उसका जूठा दूध नहीं पीना चाहिए। ऐसा करने से पाप लगता है।"

उसके उत्तर को सुनकर केसर बोली, "पाप नहीं लगता है। मेरा जूठा सब खाते हैं। मेरे कपड़े सब पहनते है। फिर तू क्यों नहीं खाता ?"

कमरे की दीवार पर एक चित्रावली लगी थी। उस चित्रावली के नीचे कहानी भी खुदी थी कि एक शेर था। उसे माँस नहीं मिला। वह रात-दिन माँस की टोह में रहता था। अन्त में वह भूखा ही मर गया।

शिव उसकी ओर देखता रहा और अन्त में बोला, "मैं जाट का बेटा हूँ। मैं किसी का झूठा नहीं खाता।"

केसर ने हठ पकड़ लिया। शिव नहीं माना। केसर रोने लगी। शिकायत ठकुराणी के पास पहुँची। ठकुराणी ने शिव को पकड़ कर दो चाँटे मारे। नैना का रोम-रोम सिहर उठा। उसकी इच्छा हुई कि वह ठकुराणी के गाल पर चाँटे मार दे, पर वह जहर का घूँट पीकर खड़ी रही।

"पी दूध !"

"नही पीऊँगा !"

"नाथी !" ठकुराणी ने आज्ञा दी, "इसे जबरदस्ती दूध पिला दे।"

चार-पाँच दासियों ने मिलकर उसे दूध पिलाना चाहा। शिव ने उसका जबरदस्त विरोध किया। दूध उसके मुँह में डाला। उसने उसे वापस थूक दिया।

ठकुराणी रणचण्डी बनी हुई बोली, "राँड अपने बाप को समझाती है या मैं इसे दिन के तारे दिखलाऊँ ?"

नैना ने सोच लिया कि अब परिणाम अत्यन्त अशुभ हो सकता है, अतः वह शिव के पास गई। उसने उसे अपनी गोद में लेकर कहा, "बेटा, दूध पी ले ! दूध नहीं पीयेगा तो तेरी माँ को कोई न कोई कष्ट हो जायगा !"

शिव मौन रहा।

नैना ने अश्रु भर कर कहा, "क्या तू चाहता है कि तेरी माँ...?"

शिव ने झट से गिलास उठाकर दूध पी लिया।

रात चल रही थी।

ठाकुर की घड़ी ने दस बजाये।

ठकुराणी ने जम्हाई लेते हुए कहा, "कल से इस छोरे को मत लाना।"

तभी केसर बोली, "यह कल भी आयगा। मैं इसके साथ हर रोज खेलूंगी। अगर आपने इसे नहीं बुलाया, तो माँ सा मैं आप से रूठ जाऊँगी।"

"नैना इसे भी साथ ले आना।"

नैना ठकुराणी के चरण-स्पर्श करके चल दी। वह रास्ते भर शिव को यह समझाती रही कि हमारा भला इसी में है कि हम ठकुराणी का हुक्म मानते रहें।

नैना ने उसे करुण-स्वर में कहा, "तू नहीं जानता है कि मैंने तुझे कैसे-कैसी आफतें सहकर पाला है। तेरे बाप ने तेरे सुख के लिए रात-दिन एक कर दिये थे। वह तुझे एक बड़ा आदमी बनाना चाहता था। इसलिए अब हमें अपने आपको जीने के काबिल बनाने के लिए पत्थर के प्राणी की तरह सब कुछ सहते रहना चाहिए।"

नैना का घर आ गया था।

घर के आगे मूला बैठा था।

"काका! तू यहाँ क्यों बैठा है?"

"मेरी बगिया ठाकुर सा ने छीन ली।"

"राम-राम, ऐसे दुष्ट पर बिजली क्यों न गिर पड़े!" नैना ने बद्दुआ दी।

मूले ने कहा, "इसे जीवन में मेरी तरह कभी सुख और शान्ति नहीं मिलेगी। यह मेरी तरह अपनी सबसे प्यारी वस्तु के लिए पागल हुआ घूमेगा?"

× × ×

धान पक रहा था।

मतवाले किसान खेतों की झुरमुट में राजस्थानी लोक गीत 'तेजा' गाते थे। नैना ने दो खेतिहारों से बातचीत कर ली थी कि वे कटाई के वक्त आकर मदद कर दें। नियामनुसार जो भी देना होगा, वह उन्हें दे देगी।

नैना ने मूले से भी अनुरोध किया कि वह उसके खेत में रहना शुरू कर दे। इससे उसका मन भी बहलता रहेगा और उसके खेत की भी रखवाली हो जायगी। किन्तु मूले ने उसके अनुरोध को स्वीकार नहीं किया। उसने अतुल व्यथा से आँखें भर कर कहा, "मैं इस बगिया के सामने भूखा-प्यासा मर जाऊँगा। मुझे मेरी बगिया चाहिए। देखो न उसके लहलहाते पेड़, उसके फूल और उसकी कलियाँ। न बेटी न, मैं अपना जीवन छोड़ कर जीना नहीं चाहता।"

शिव का मन भी अशान्त था। वह दिन भर गुमचुप-सा बैठा रहा। वह खेत भी गया, पर वहाँ भी वह अपने समवयस्कों से नहीं बोला। उन्होंने उसकी कबड्डी खेलने के लिए अनेक मिन्नतें कीं, पर वह राजी नहीं हुआ। उसके सामने वही हठीली और गर्वीली केसर नाच रही थी। उसकी इच्छा होती थी कि वह उसके दो-चार थप्पड़ मारकर अपने पाँवों को धोया पानी पिलाये।

वह बार-बार अपने गाल को मलता था जिसके गोरे रंग पर नील जम गई थी। वेदना का ज्वार उसके विद्रोही मन में रह-रह कर उठता था और उसकी इच्छा होती थी कि वह ठकुराणी को लाठी मार दे जब वह भरपूर नींद में सोई हुई हो। ईसी तरह की विद्रोहात्मक बातें सोचता हुआ वह अपने खेत से साँझ को घर लौटा।

माँ गृह कार्य से निवृत्त होकर रावले में जाने के लिए तैयार हो गई थी। शिव को देखते ही उसने कहा, "ले झट से तैयार हो जा, समय हो गया है।"

"मैं वहाँ नहीं चलूगा।"

"क्यों ?"

"कह दिया न, मैं वहाँ नहीं चलूंगा।"

"अच्छे बेटे हट नहीं करते। चल, जल्दी से रोटी खा ले।"

"कह दिया न मुझे भूख नहीं है।" शिव के स्वर में हठ था।

"हठ छोड़ बेटे तू क्या जाने कि गरीब को कैसे जीना पड़ता है ? फिर हमारे संग कोई बोलने वाला भी नहीं है। काका तेरा मर गया। अगर झगड़ा भी करें तो कौन अपनी फरियाद लेकर राजाजी तक जायगा ?"

"लेकिन यह अन्याय है।"

"न्याय-अन्याय को वडे लोग नहीं देखते। बड़े लोग देखते हैं, अपना स्वार्थ, अपना लाभ। इसलिए बेटे हमे जैसे-तैसे दिन गुजारने पड़ेंगे। चल, जल्दी से खा-पी ले।"

लेकिन शिव ने नहीं खाया। उसने नैना की कोई भी विनती नहीं मानी, वह भूखा ही चला पड़ा।

ठकुराणी के चारों ओर विलास का सागर लहरा रहा था।

वह अफीम के नशे में उन्मत्त थी और ढोलनियाँ नृत्य कर रही थीं। समय वे कोई कामोत्तेजक गीत गा रही थीं। इस गीत का कोई-कोई इतना अश्लील था कि नैना को लाज आने लगी, पर ठकुराणी और दासियाँ वाह-वाह कर रही थीं। नैना एक कोने में खड़ी होकर पंखा लगी।

शिव केशर के पास चला गया था।

केसर उसे लेकर झरोखे में गई।

एकान्त।

केसर ने विनम्र शब्दों में कहा, "शिव, तू मुझे माफ कर दे, अब मैं तुझे कभी भी तंग नहीं करूंगी। अब मैं तुझे कभी भी झूठा खाने के लिए नहीं कहूंगी।"

शिव निरुत्तर रहा।

"तुम्हारे जी की सौगन्ध। सच, तुम मुझे बहुत अच्छे लगते हो! इतने अच्छे जितना मुझे मेरा अपना जी।"

तनिक रोष के साथ वह बोला, "तुम्हारे जी का क्या भरोसा? पहले प्रेम करता है, बाद में रीस "गुस्सा" करेगा। मैं ऐसा भायला (दोस्ती) नहीं रखता। इससे लाभ ही क्या!"

"नहीं-नहीं, ऐसा अब कभी भी नहीं होगा। मैं तुमसे नहीं झगड़ूंगी। नहीं लड़ूंगी।"

शिव ने उसकी ओर देखा।

केसर की आँखों में स्नेह था, जो सजलता बनकर दीप्त हो गया था।

"और मैं तुम्हारा जूठा भी नहीं खाऊंगा।"

"मत खाना।"

"और तुम्हें अपनी माँ को यह भी कहना पड़ेगा कि वह मुझे कभी भी नहीं मारेगी।"

"कह दूँगी।"

"फिर मैं तुम्हारा पक्का भायला हो जाऊँगा।"

केसर ने शिव को देखा—वह उसे देखती रही। अत्यन्त गोरा और आकर्षक। उसे मन ही मन उसका रूप-सौन्दर्य भा गया। उसने शिव का हाथ अपने हाथ मे ले लिया। दोनों जने उसी कमरे मे आये। अन्य बच्चे उसे देखते ही उछल-उछल कर नाचने लगे।

एक ने कहा, "आँख-मिचौनी खेलो।"

सब ने उसमें हाँ मिलाई। खेल आरम्भ!

डाई आई छग्गू में।

शिव ने उसकी कसके आँखें बाँधी।

केसर ने मुस्कराते हुए कहा, "और अच्छी तरह बाँधो। देखो न, उसे नीचे से दिख रहा है।" केसर ने आकर उसे हट्टी का चोर बताया। शिव ने उसे दुबारा बाँधा। बच्चे इधर-उधर दौड़ने लगे। संयोग समझिए कि छग्गू ने केसर को ही पकड़ा।

शिव ने केसर की आँखें बाँध दीं।

वह इधर-उधर दौड़ती रही, पर उसके कोई भी हाथ नहीं आया।

घड़ी ने नौ बजाये।

ढोलनियों का गीत एक बारगी बन्द हो गया था।

केसर ने अपनी पट्टी खोल कर कहा, "मेरे तो कोई हाथ ही नहीं आता।"

तब शिव ने उसकी डाई खुद ले ली। केसर के चेहरे पर प्रसन्नता भरी मुस्कान थिरक गई। उसने उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, "सच तुम मेरे पक्के भायले हो!"

खेल पुनः आरम्भ हो गया।

तभी ठाकुर ने उस कमरे के आगे से प्रस्थान किया। उसकी दृष्टि शिव पर पड़ी। दृष्टि पड़ते ही ठाकुर ने कहा, "यह छोरा कौन है?"

खेल रुक गया।

कमरे में सन्नाटा छा गया।

शिव ने अपने आंखों की पट्टी खोल दी और वह भय मिश्रित दृष्टि से ठाकुर की ओर देखने लगा।

"अन्नदाता ने खम्मा !" दासी ने सिर झुकाकर कहा "यह नैना का बेटा है।"

"नैना का बेटा ?" विस्मित प्रश्न ठाकुर की आंखों में चमक उठा। वह चलता हुआ बोला, "जैसी मां, वैसा ही बेटा। अरे तुम इस तरह क्यों खड़े हो, खेलो-खेलो।"

एक घण्टा और बीत गया।

ठकुराणी कामोत्तेजक बातों से खिलखिला कर हँस रही थी।

तभी दासी ने आकर कहा, "ठाकुर सा, नैना को बुला रहे हैं।"

ठकुराणी की हँसी रुक गई। त्यौरियाँ चढ गई। वह भड़क कर बोली, "कह दो कि नैना नही आ सकती !" फिर वह रुक कर बोली, "ठहरो, मैं खुद चलती हूँ।"

ठकुराणी चली।

ठाकुर शराब के नशे में धुत था। ठकुराणी को देखकर वह आधा गिलास और पी गया। लड़खडाता हुआ वह बोला, "तू आ गई नैना ?"

ठकुराणी ने कोई उत्तर नही दिया।

ठाकुर ने उसे अपनी गोद में बिठा लिया। ठकुराणी भी उन्हें प्यार करने लगी। ठाकुर को बहुत देर तक यह पता भी नही लगा कि जो उसको सान्निध्य-सुख दे रही है, वह वस्तुतः कौन है। अप्रत्याशित ठकुराणी के हाथ का तीखा कंगन ठाकुर के चुभा। ठाकुर चौंक पड़ा। तीव्र पीड़ा की भावना ने उसकी चेतना को सजग कर दिया। जैसे कुत्ता कान फड़फड़ा कर उठता है, ठीक उसी तरह यह अपनी आँखें मलता हुआ उठा और दीदे फाड़-फाड़ कर ठकुराणी को देखने लगा।

"तुम !"

"हाँ ठाकुर सा !"

ठाकुर के होठों पर भेद भरी मुस्कान दौड़ गई। मधुर स्वर में बो[illegible] "सचमुच तुमने एक आला दिमाग पाया है। मुझे शराब सीने के बाद तु[illegible]

बहुत याद आती हैं। बस कल से जब मैं शराब में मस्त होऊँ, तब तुम आ जाया करो।"

"जो हुक्म !"

जब ठकुराणी लौटी तब रात के बारह बज गये थे। उसकी दासियाँ ज्यों की त्यों उसके कमरे में बैठी थी। ठकुराणी ने आकर नैना के अतिरिक्त सबको अपने कमरे के बाहर भेज दिया।

कमरे मे कुछ देर सन्नाटा छाया रहा।

नैना अज्ञात भय से पीली पड़ गयी। जाल में फँसी हिरणी की तरह उसकी दशा थी। भयाक्रान्त-सी वह कमरे के एक कोने में खड़ी हो गई उसके अधर स्वत: ही ईश्वर की अभ्यनार्थ फड़क उठे।

"नैना, मेरे हुक्म को भूल गई हो या याद है ?"

"याद है।"

"एक बार फिर याद दिला रही हूँ कि तू ठाकुर से नहीं बोलेगी। उनके साथ रंगरेलियाँ नही मनायेगी। इस पर भी तूने मेरा कहना नहीं माना तो फल अच्छा नही निकलेगा। जो कोख ठाकुर को लुभायेगी, उसी कोख में एक दिन उनकी ही आज्ञा से अंगारे भरवा दूँगी। मै किसी सौत को नही सह सकती।

नैना झर-झर रो पड़ी।

उसने ठाकुराणी के पाँव पकड कर कहा, " आप मुझे मुक्त कर दीजिए, मैं यहाँ आना भी नहीं चाहती हूँ। अकेली हूँ। खेती-वाड़ी का काम-काज भी मेरे पास बहुत ही रहता है। लेकिन ...?"

"ओह ! तो तू यह चाहती है कि मैं तुझे सेवाओं से मुक्त कर दूँ ? ऐसा नही हो सकता। लेकिन कल से तू सवेरे आकर मेरी गायों का काम कर दिया करना।"

"जो हुक्म !"

"अँधेरे-अँधेरे आना और काम खत्म करके चली जाना।"

नैना ने बाहर निकल कर नाथी से कहा कि वह शिव को बुला दे।

शिव केसर से अभी बातचीत कर रहा था। नाथी ने उसे चलने के लिए कहा। केसर ने कहा, "कल जरूर आओगे न ?"

"हाँ !"

"भूलना मत ।"

"नही-नही ।"

केसर उसे द्वार तक जाते देखती रही ।

रास्ता सुनसान था ।

नैना ने शान्ति को भंग करते हुए पूछा, "तू इस हवेली मे नही आना चाहता है ?"

"नही ।"

"फिर कल से सुबह ही आ जाया करूँगी ।"

घर आ गया था ।

पर नैना की नीद कहाँ ? अँधेरे के गहरे और भयावह आवरण में डू
अपने सुखी जीवन को भूली-भटकी किरणें ढूँढ रही थी । वह करे तो क्या
करे ? आखिर वह भी जनानी ड्योढी से भागी हुई एक अपराधिन है । कहीं
इसकी खबर राजाजी को मिल गई तो ? कहीं उसने फरियाद की और उसके
विगत जीवन का पता लग गया तो ? तो ठाकुर उल्लास उसे केसरीसिंह की
जनानी ड्योढ़ी मे भेज देगा और इस बार जरूर उसे कठोर दण्ड दिया जायगा।
काला मुँह करके, नंगी करके उसे सारी जनानी ड्योढ़ी घुमाया जायगा और
और फिर उसे अन्धेरी कोठरी में सड़ने के लिए फेंक दिया जायगा ।

अनागत अत्याचारों के बारे में वह रात भर सोचती रही । कब रात ढली
और कब भोर का तारा उगा, यह विचारों के तीव्र प्रवाह मे उसे अंगड़ा
जैसा लगा ।

वह शिव को सुषुप्तावस्था में छोड़कर ठाकुर की हवेली को वापस चली।
उसके पाँव थके यात्री की तरह बहके-बहके मे लगते थे । उसके मस्तिष्क की
विचारधारा भी पहाड़ी-ढलान मे बहती पानी की धारा की तरह असन्तुलित
और टेढ़ी-मेढ़ी थी । वह आन्तरिक तीव्रता मे इतनी तन्मय थी कि उसे रात
के सन्नाटे और भय की खबर ही नही लगी । वह जाकर अन्य गुलामों के
साथ काम मे लग गई । सवेरे के इस काम मे दो स्त्रियाँ और दो पुरुष थे।
ठाकुर के आठ गाये और छः भैंसे थी; बारह बैल और तीन ऊँट थे । निरन्तर
तीन घंटे तक काम करके वह वापस लौट आई ।

लेकिन रात को जब वह निश्चिन्त होकर शिव को नानी की कहानी सुना रही थी, तब ठाकुर के रावले से हरकारा आया और उसने कहा, "शिव को ठकुराणी बुला रही है।"

"क्यों ?"

"मैं नही जानता, उन्होंने हुक्म दिया और मैं हाजिर हो गया।"

'अकेले शिव को बुलाया है ?"

"हाँ !"

"चला जा, बेटा !"

"मैं नहीं जाऊँगा।"

"फिर वही हठ।" कहकर दीप की लौ मे नैना ने उसे गहरी करूणा से देखा। वह अवर्णनीय करुणा, जिसके प्रचुर प्रभाव ने शिव को चलने के लिए मजबूर कर दिया। वह उस हरकारे के साथ चल पड़ा।

रावले में केसर अपने कमरे के झरोखे से उसकी प्रतिक्षा कर रही थी। उसकी मुद्रा किसी विरहणी से कम उदास और सन्तप्त नही थी। उसने ज्योंही शिव को देखा त्योंही वह भागती हुई उसके सामने दोड़ी और उसका हाथ पकड़ कर रुआँसे स्वर मे बोली, "तुमने मुझसे पक्का मायला किया था न ! कहा था न कि मैं हर रोज आऊँगा। फिर आज क्यों नही आया ? मेरी उडीक रखते-रखते मेरी आँखें ही थक गई। बोल न, बोल........।" केसर निरन्तर बोल रही थी, पर शिव मौन था। वे दोनों चलते-चलते उसी झरोखे में आ गये थे। झरोखे में कोई नहीं था। एक दीया जल रहा था। उसका मद्धिम प्रकाश उन दोनों पर पड़ रहा था।

"तुम बोलते क्यों नही ?"

"मुझे यह अच्छा नही लगता कि मुझे कोई तुम्हारा आदमी बुलाने आये।"

"क्यों ?"

"पता नहीं, माँ क्यों उदास हो जाती है ? उसने तुम्हारे आदमी को ज्योंही देखा त्योंही उसका मुँह उतर गया। सच, तुम्हारे आदमी को देखते ही माँ का खून सूख जाता है।"

केसर ने विवशता भरे स्वर में कहा, "अब मै तुम्हारे लिए आदमी नहीं

भेजूँगी। पर तुम्हें भी वचन देना होगा तुम हर रोज आओगे। इस गाँव में मुझे एक तुम ही अच्छे लगते हो। सबसे सुन्दर, सबसे भले।"

"मैं हर रोज आऊँगा।" दोनो के हाथ एक-दूसरे के हाथ में थे।

× × ×

१३

दुर्भाग्य के पख दानव की तरह क्रूर और विशाल होते हैं।

हरे-भरे खेतों पर टिड्डी दल आ पड़ा। किसान प्रति रोध के लिए अपने खेतो के चारों तोर खाइयाँ खोदने लगे। पर सुरक्षा के साधनों के का नितान्त अभाव होने के कारण उनके खेतों को टिड्डियाँ इस तरह चट कर गईं, जैसे वहाँ वर्षो से सूखा पड़ रहा हो दीन-हीन किसानों की दशा बिगड गई। वे सब ठाकुर के सामने फरियाद लेकर गये। ठाकुर ने उन्हें स्पष्ट मे कह दिया कि वह कुछ भी करने मे असमर्थ है। उसने यह बताया कि महाराजा को अकाल की सूचना दे दी है, वे जो भी हुक्म देंगे उसे वह पूरा करेगा।

यह टिड्डियाँ पूरे प्रान्त पर आई थी। सारे प्रान्त मे हाहाकार मच गया। दरिद्र और साधनहीन किसान गावों को छोड़-छोड़ कर राजधानी को आने लगे और महाराजा खेत सिंह के समक्ष प्रार्थना करने लगे। हजारो किसानों की सम्मिलित आवाज को वे भी अनसुना न कर सके। विवश होकर उन्होंने एक आज्ञा-पत्र जारी किया कि इस वर्ष का लगान किसानो को छोड़ दिया जाय और गरीबो की रोजी-रोटी के लिए उन्होने दो महलो का निर्माण कराना शुरू कर दिया।

चौधरी तोताराम महाराजा की आज्ञा लेकर गाँव आया।

उसने सारे गाँव वासियों को यह खबर दी। वे सब ठाकुर सा के समीप अर्ज लेकर गये। ठाकुर ने सारी बाते सुन कर कहा, "महाराजा का हुक्म सिर-आँखो पर, लेकिन हम किसानों का लगान नहीं छोड़ सकते। ऐसा करें

तो हम खायेंगे क्या ? महाराजा के आय के साधन हजारों हैं । करोड़ों रुपये उनके पास हैं । इसलिए वे ऐसा हुक्म दे देते हैं, पर ऐसा नहीं करेंगे ।"

बेचारे किसान अपना मुँह लेकर वापस लौट आये ।

धीरे-धीरे किसानों की दशा बिगड़ती गई ।

गाँव का चौधरी अपने परिवार को लेकर किसी बड़े दूरस्थ शहर में चला गया। अंत में किसानों की दशा इतनी खराब हो गई कि वे अपनी सौ-सौ रुपयों की गायें-भैसें एक-एक रुपये में बेचने लगे । प्रान्त के सांड-साधू उनके भूखे-नंगे बच्चों को खरीदने लगे। सूखे खेतों में मरे पशुओं के कंकाल अत्यन्त भयानक लग रहे थे ।

मूले की बगिया के छोटे-छोटे फूलों के पौधे एवं बेलें टिड्डियों की भेंट चढ़ गई थी । वह एक गड़े वृक्ष के नीचे चिर मौन धारण करके बैठ गया था। लोग उसे कुछ कहते थे, पर वह किसी का भी कोई उत्तर नहीं देता था।

एक दिन सवेरे-सवेरे यह खबर फैली कि मूला मर गया है ।

नैना अपने को नहीं रोक सकी ।

वह भागी-भागी वहाँ गई । मूले की मृतक शरीर पड़ा था और दो कौव ने उसकी आँखों को कुरदे लिया था । नैना रो उठी । उसे लगा कि क्या ऐसे देवता की ऐसी ही दर्दनाक मौत विधाता ने लिखी थी ! तब वह रोती-रोती हरिजन-बस्ती में गई ।

हरिजन-बस्ती सूनी थी। सिर्फ दो घर जो ठाकुर की हवेली साफ किया करते थे, वे ही आबाद थे। उसने आवज लगाई । एक बुढ़िया बाहर आई । धँसी हुई आँखो मे चमक और दन्तहीन मुँह। जब वह उसके आगमन पर निष्प्रयोजन ही हँसी तब नैना भयभीत हो गई । उसे लगा कि यह कोई बुढ़िय नहीं, कथाओं में वर्णित डायन है ।

"क्यों बेटी ?"

"दादी, मूला काका मर गया है, जरा उसके जलाने का प्रबन्ध करा दो ।"

बुढ़िया निर्विकार भाव से एक सुने मकान की ओर बढ़ी । उसमें से एक मरे हुए बच्चे को उठा कर लाई और उसे नैना को बताती हुई बोली, "यह लावारिस नहीं है, यह अनाथ नहीं है, फिर भी सुबह से मरा पड़ा है । अब में

जाऊँगी और इसे गाड कर आऊँगी । हालांकि हिन्दू मुर्दों को गाड़ते नहीं लेकिन
मजदूरी में सब ठीक होता है । फिर उस मूले को कौन गाडेगा ? जा, यदि
तुझे उससे इतनी हमदर्दी है तो खुद जला आ । ऐसे खराब समय मे सब बले
होते हैं और सत पराये होते हैं ।" कह कर बुढ़िया अपने घर में घुस गई ।

नैना वहां खड़ी की खड़ी रही ।

चन्द ही क्षणों मे बुढ़िया वापस लौटी । उसके हाथ में नमक की एक
थैली थी । तब वह बच्चे को कन्धे पर डाल कर बिना नैना की ओर देखे श्म
सान की ओर चल पड़ी ।

नैना का भावुक मन कराह उठा । उसे लगा कि उसका कलेजा मुँह को
आ रहा है । वह उन्ही पांवों लौट पड़ी ।

वह पागलो की तरह घूमी और अपने उजड़े गांव को देखती रही । चन्द
समर्थ घरों के अतिरिक्त सारा गांव खाली हो गया था ।

एक गरीब किसान अपने बेटे को दादूपंथी साधू को बेच रहा था । नैना ने
अवरोध उत्पन्न किया, "अपने बेटे को क्यो बेचता है भाई ?"

साधू ने उसे तीक्ष्ण दृष्टि से देखा जैसे वह अभी उसे शाप दे देगा । वह
निश्चल-अटल खडा रहा । तभी उसकी माँ आ गई ।

पुत्र को बेचने वाली माँ आर्द्र स्वर में बोली, "नहीं बेचूँगी तो यह भूखा
ही मर जायगा । मैं अपने लाडले को अपनी आंखो के आगे भूखा मरते नहीं
देख सकती । मुझे इसे बेचने दो ! बेचने दो !"

"नही-नही !" उसने कांपते स्वर मे कहा ।

"फिर तू इसे अपने घर ले जा ।"

नैना के तन से क्षण भर के लिए प्राण निकल गये ।

"मैं इसे नही बेचूँगी, कौन अपनी सन्तान को बेचता है ! ऐसा नीच
काम कौन कर सकता है । बेटी, इसे तू अपने घर ले जा । मुझे इससे खुशी
होगी । ले जा.........खड़ी क्यों है ?"

नैना पूर्ववत् खड़ी रही, फिर वह आहिस्ते-आहिस्ते कदम उठाती हुई चल
पड़ी ।

पुत्र को बेचने वाली माँ एक बार भाग कर उसके सम्मुख फिर आई
और रोती हुई बोली, "यह मुझे पचास रुपये दे रहा है, तू मुझे कुछ भी मत

। पर मेरे बच्चे को इस साधु से बचा ले। न जाने बाद में उसका क्या हाल होगा ?"

नैना ने उसकी फैली हुई झोली को हाथ के झटके से तोड़ते हुए व्यग्रता से कहा, "मेरे पास भी धन कहाँ है जो मैं इसकी भूख मिटा सकूँगी !"

तब वह हवा के वेग से चली गई।

शिव उसकी घर में प्रतीक्षा कर रहा था।

"रोटी !"

नैना के मस्तिष्क मे 'रोटी' का आराम घूम गया। उसे याद आया की उसका अपना बेटा भी तो छून से भूखा है। वह कांप उठी

वह ठाकुर के द्वार गई। ठाकुर ने उने कमरे मे बुलाया और उसके सतीत्व के बदले उसे झोली भर के धान दे दिया।

इसके पश्चात् नैना घर आई। अस्मत-फरोशी से मिले अनाज के दानों को पीस कर उसने रोटियाँ बनाई और शिव को खिलाकर वापस बगिया पहुँची।

मूले की लाश के चारों ओर कौवे जमा थे।

नैना ने एक फावड़ा लिया और बगिया के बीचों-बीच उसने एक कब्र खोदी। कब्र खोदते-खोदते उसकी आंखों मे आँसू बहते रहे। अन्त मे उसने मूले को उस कब्र मे गिरा दिया और ऊपर से धूल डाल दी। जब कब्र धूल से भर गई तब उसने उस पर कांटे बिछा दिये ताकि लाव को बदमाश कुत्ते न निकालें।

× × ×

१४

सन्नाटा, दूरागत भयावह सियारों की हुआँ-हुआँ !

सूखी और सहसा सुहाग उजड़ी विधवा धरित्री !

शिव अपने खेत की पाल पर अन्यमनस्क-सा बैठा था। उसके चारों ओर टिड्डियों का मरा हुआ समूह था। कुछ टिड्डियाँ अब भी उसमें रें रही थी। कुछ टिड्डयाँ अब भी बालों के सूखे डण्ठलों से लिपटी पड़ी थीं।

शिव के खेत के समीप तोताराम की भैंस मरी पड़ी थी। उसका अ हिस्सा जंगली जानवरों और गिद्धों की भेंट चढ़ चुका था। उसके समीप नंगा-भूखा इन्सान एक पेड की छाल को काट रहा था। शिव उसके पा जाकर बोला, "तुम इस पेड की छाल को क्यों काट रहे हो ?"

आदमी ने पैनी नजर से शिव को देखा। निरन्तर क्षुधा से उसके चे की हड्डियाँ उभर गई थी, जिससे उसकी मुखाकृति की कोमलता एक भ व भयप्रद कठोरता मे बदल गई थी। आँखों के नीचे काली लकीरें खिंच थी। इन लकीरो ने उसकी धँसी हुई आँखों की गहराई को बढा दिया था।

"तुम पेड़ को काट रहे हो, पेड काटना पाप होता है।"

आदमी विचित्र व्यंग्यभरी मुस्कान के साथ बोला, "पेट को न भरना भी पाप होता है, ऐसा पाप जो सातों जन्मो मे भी नहीं छूटता। इसलिए पहले मैं पेट भरूँगा।"

शिव को उसकी दर्शन भरी यह बात समझ मे नहीं आई।

वह घर की ओर चल पडा।

रास्ता सुनसान था।

दो आदमी रास्ते मे झगड़ रहे थे।

शिव उनके समीप खडा हो गया।

दोनों नंगे थे। बस केवल एक-एक चिथड़े से उन्होंने अपनी लाज ढक रखी।

एक आदमी ने दाँत पीसकर कहा, "पहले मैंने इस जमीन को देखा। इस लिए इसे मैं खोदूँगा।"

दूसरे ने अहम् से हुंकार भर कर कहा, "देखा है तो मैं क्या करूँ? इसमें छिपा अनाज मैं ही लूँगा।" उसने एक बार अपने पुष्ट बाजुओं पहलवान की तरह देखा और फिर बड़बड़ाया, "जिसकी लाठी उसकी भैंस।"

बात यह थी—

ग्रामीणों का ऐसा अनुमान होता है कि जहाँ चींटियों के घर होते हैं,

नाज अवश्य होता है। संग्रह की भावना रखने वाली चीटियाँ निरन्तर अनाज
ोरे बे एक बड़ा ढेर जमा कर लेती हैं।

ये दो व्यक्ति इसी टोह में थे और दोनों ही एक जगह पर इकट्ठे हो
ये। पहला आदमी पहले आया था। मानवीय नियम और कानून के अनुसार
इस जगह पर उसका ही हक होना चाहिए।

दूसरा व्यक्ति जो ताकत मे पहले से कहीं अधिक था और जिसकी अंगारों
सी जलती आँखों में क्रूरता स्पष्ट झलकती थी, जिसके इरादे भाव-भंगिमा से
अच्छे नहीं लग रहे थे, जो यह चाहता था कि यह आदमी मुझ से झगड़ पड़े
और मैं इसे पीटूँ और फिर एक विजेता वीर की तरह इस धरती में छिपा
चीटियों का अनाज ले लूँ।

वे दोनों कुछ देर तक चुप रहे।

शिव उन दोनों को देखता रहा—भोली दृष्टि से।

तब पहले ने जमीन को खोदना शुरू किया। दूसरे पूर्ववत् हुंकार भरी
और समीप आकर पहले को कन्धों से पकड़ा। उसे खड़ा किया। फिर एक
जोर का घूँसा मारा। पहला आदमी मुँह के बल गिर पड़ा। दूसरा पैशाचिक
हँसी के साथ चुनौती देता हुआ बोला, "क्यों, सीधे-सीधे जायगा या पसलियाँ
तोड़ूँ।"

लाचार पहला आदमी दीनावस्था में हौले-हौले चल पड़ा।

दूसरे ने जमीन खोदनी शुरू की।

जमीन खोदकर उसने अनाज निकाला और उन कच्चे दानों को वह
आतुरता से चबाने लगा।

शिव अभी तक उसे देख रहा था।

भूख उसे भी थी, इसलिए उसने अपने होठों पर दो-चार बार जीभ फेरी
और चलने को उद्यत हुआ।

दूसरे आदमी ने जब उसे जाते हुए देखा, तब एक मुट्ठी भर अनाज उसे
देते हुए कहा, "नजर मत लगाना।"

शिव चल पड़ा।

पथहीन यात्री की तरह वह टेढ़े-मेढ़े रास्तों से गुजर रहा था। ठाकुर
की हवेली के समीप पहुँचते ही उसे अपनी माँ मिल गई। वह कीचड़ से सनी

थी और उसके तमाम शरीर में गोबर के दाग लगे थे। वह अपनी माँ को दया दृष्टि से देखता रहा।

"कहाँ गया था ?" नैना ने प्यार से पूछा।

"खेत की ओर !"

"क्यों ?"

"यूँ ही !"

"भूख लगी है ?"

"नहीं !" उसने नकारात्मक-सूचक सिर हिलाकर पूछा, "माँ, आज खेत के पास एक आदमी पेड़ की छाल छील रहा था। क्या आदमी का पेट इससे भर जाता है ?"

नैना की आँखें भर आईं।

"तुम रोने क्यों लगीं ?"

"रोती हूँ अपने दुर्भाग्य पर। कैसा प्यारा गाँव था अपना। आज उसी गाँव की दुर्दशा देखकर मेरी आत्मा भर आई है। बेटा, भूख जब तेज होती है तब पत्थर भी अच्छे लगते हैं। तब पेट की आग पत्थर को भी हजम कर लेती है।"

दूर से एक महीन आवाज ने शिव को पुकारा, "शिव, ओ शिव !"

शिव ने अपनी नजरें ऊपर कीं।

केसर उसे हाथ के संकेत से बुला रही थी।

नैना ने कहा, "चला जा, वह क्या कहती है !"

शिव चला गया।

वह झरोखा।

शिव को देखते ही केसर दौड़ी-दौड़ी आई। उलाहने भरे स्वर में बोली, "तू दो दिन फिर क्यों नहीं आया ?"

"ऐसे ही।"

"देखो शिव, ऐसा करोगे तो ठीक नहीं रहेगा। वचन भंग करना महापाप होता है। फिर मैं भी नाराज हो कर कहीं कुछ कर बैठूँगी।"

"क्या कर बैठोगी ?"

"शिवजी की पार्वती की तरह चिड़ी बन कर उड़ जाऊँगी।"

"पार्वती शिव की लुगाई (पत्नी) थी।"

"मैं………।"सहसा केसर चुप हो गई। अबोध अवस्था में भी अन्तस् के कौन से संस्कार ने उसकी वाणी को अवरुद्ध कर दिया, यह वह खुद भी नहीं जान सकी। लज्जा से उसकी पलकें झुक गईं।

"तुम कहती-कहती चुप क्यों हो गई ?"

केसर ने बात को बदलते हुए कहा, "मैं तुम्हारी अडीक रखती हूँ। इस झरोखे में दीया जला कर बैठ जाती हूँ। मेरी आँखें इसी रास्ते पर जमी रहती हैं। सोचती हूँ कि तुम आओगे, जरूर आओगे। पर तुम नहीं आते। तब मैं गुस्से में भर आती हूँ। अपनी बात अपने मन में रखकर मैं खिलौनों को तोड़ देती हूँ और दूसरों बच्चों को पीटती हूँ।"

"ऐसा तुम्हे नहीं करना चाहिए।"

"फिर तुम आ जाया करो।"

"अब बराबर आऊँगा।"

वे दोनों कुछ देर तक चुपचाप बैठे रहे।

एकाएक केसर बोली, "खाना खाओगे ?"

"नहीं।"

"क्यों ?"

"अपने घर अपनी माँ के साथ खाऊँगा। हम दोनों ने कल रात से कुछ नहीं खाया है ?" उसने सत्य भाषण किया।

"क्यों नहीं खाया ?"

"घर में अनाज नहीं है। क्या तुम्हें मालूम नहीं कि गाँव में अकाल पड़ गया है। सारे खेतों को टिड्डियाँ खा गई हैं। लोग भूख के मारे पेड़ की छालें तक खा रहे हैं।………गरीब किसान गाँव छोड़कर भी चले गये हैं।"

"मुझे मालूम है।"

"यह कितना बुरा है !"

"मैं क्या करूँ ?"

"तुम्हें अपने बाप से कहना चाहिए कि कोठरियों में पड़ा हुआ धान वे भूखे आदमियों में बाँट दें।"

"क्यों मेरे कहने पर वे धान बाँट देंगे ?" उसने बाल-सुलभ भाव से आँखें

मटका कर कहा, "तुम्हें एक बात बताऊँ, हमारे पास बड़ी-बड़ी कोठियाँ धान से भरी पड़ी हैं। हम कभी भी भूखे नही सोते।"

शिव चुप हो गया।

"अच्छा, मैं ठाकुर सा के पास जाती हूँ। मैं जाकर जरूर कहूँगी कि इतना सारा धान रखकर क्या करेंगे? उन्हें थोड़ा धान भूखे आदमियों को देना चाहिए।"

शिव झरोखे से अपनी माँ के पास आ गया। माँ अपने कार्य से निवृत्त हो चुकी थी। वह अपने हाथों को धो रही थी। हाथ-मुँह धोकर वह ... के पास गई और खाने के लिए कुछ मांगा। ठकुराणी ने रात की बासी ... उसे दे दीं। तब वे दोनों जने वहाँ से चल पड़े।

रास्ते में ठाकुर के कारिन्दे दो किसानों को पकड़ कर कर ला रहे थे। ... किसान के माथे से खून बह रहा था। दूसरा एकदम मौन था।

शिव ने माँ से पूछा, "इन्हें कहाँ ले जा रहे हैं?"

"ठाकुर सा के पास।"

"क्यों?"

"लगान वसूल करने के लिए।" माँ ने आहिस्ते से कहा, "खेत उजड़ गये हैं, लोगों के खाने के ठिकाने नहीं हैं, पर ठाकुर सा को लगान चाहिए ही। उसका बस चले और यदि आदमी की खाल बिकती हो तो वह आदमी की खाल से भी अपने रुपये वसूल कर ले।"

शिव ने अपने दिमाग पर जोर लगा कर कहा, "माँ, फिर तुम लगान कैसे दोगी?"

"ठाकुर सा कह रहे थे" माँ ने उसकी ओर बिना देखे ही कहा, "कि मेरे पास रुपये नहीं हैं इसलिए मैं तेरे खेतों को अपने कब्जे में कर लूँगा। मैंने कहा कि फिर मेरा गुजारा? ठाकुर सा ने कहा—मेरी हवेली में काम करो और खाओ।"

"मैं वहाँ नही रहूँगा।"

"कौन वहाँ रहना चाहता है; पर मजबूरी क्या कुछ नही करा देती?

शिव के मुख पर व्यथा छा गई।

× × ×

उसके कुछ दिनों बाद ही नैना पुनः ठाकुर की हवेली में सदा-सदा के लिए आ गई। जिस भयावनी जनानी ड्योढ़ी से एक दिन वह और जमना जान की बाजी लगाकर भागी थी, उसी में वह पुनः दुर्भाग्यवश चली आई। जब वह अपना घर का सारा सामान ढो रही थी, तब उसकी बड़ी-बड़ी आँखों से खून के आँसू टपक पड़े। उसे लगा कि वह किसी कसाई से कम हृदयहीन नहीं है जो एक बकरे को पालता-पोसता है, और बाद में उसको अपने हाथों से कत्ल कर देता है। एक दिन इस घर को उसने अपने हाथों से बनाया था और आज उसे ही सदा-सदा के लिये छोड़ कर जा रही है।

शिव के चेहरे पर भी गम्भीर उदासी छा गई। उसके हृदय में घृणाजनित प्रतिहिंसा थी जो मनुष्य में शत्रु के प्रति ही उत्पन्न हो सकती है। उसके रोष में पड़ते हुए भारी कदम उसकी विनाशक भावना के प्रतीक थे।

हवेली की चहार-दीवारी के किनारे-किनारे कच्ची मिट्टी की मजबूत कोठड़ियाँ बनी थी। इन कोठड़ियों के पीछे एक छोटी खिड़की थी, फिर भी इनमें रहने वालों का दम घुटता-सा रहता था।

इन्हीं कोठड़ियों में से एक कोठड़ी नैना को मिल गई। नैना ने उस कोठड़ी में अपना सामान तरतीब से रख लिया। शिव मौन था। उसका मन ग्लानि से भरा था और वह शक्ति के बाहर ठाकुर के प्रति हिंसात्मक कार्यवाहियों की रचना किया करता था। उसका बाल-विश्वास कभी-कभी चलचित्र के हीरो की तरह सैकड़ों आदमियों से लड़ने का असंगत प्रयास कर बैठता था।

अब वह भी पहले की तरह आजाद नहीं था।

उसे भी अपनी माँ के साथ काम करना था और बाद में उसे कुए से पानी भरना पड़ता था। शिव निरन्तर पानी भरते-भरते परेशान हो जाता था और अन्तर्वेदना के कारण उसका मुख विवर्ण और विकृत हो जाता था। तब उसकी इच्छा होती थी कि वह घड़े को फोड़ दे। पर वह ऐसा नहीं कर सकता था। ऐसा करने से उसे ठाकुर के कारिन्दे का अमानुषिक दण्ड भोगना पड़ता था।

ठाकुर का कारिन्दा जिसका असली नाम जालिमसिंह था और जिसने आज-कल अपना नाम दयालुसिंह रख लिया था [हम भी उसे दयालुसिंह के नाम से ही सम्बोधित करेंगे] शिव को धूप में उकडू बना देता था और उसकी कमर पर बोझ रख देता था अथवा उसे गर्म पत्थरों पर खड़ा कर देता था। उसकी मुकृति में तनिक भी करुणा नहीं झलकती थी।

रात को शिव केसर के पास जाता।

केसर उसे छुप-छुप कर स्वादिष्ट मिठाइयाँ खिलाती और उसे आश्वासन देती कि वह उसे शीघ्र ही दयालुसिंह के अत्याचारों से मुक्त करा देगी। शिव ने इधर अपने आपको बाह्य रूप से नितान्त भिन्न बना लिया था। उसके हृदय में गहरी घृणा थी, पर ऊपर से वह चतुर चाकर की तरह रहता था और केसर से रात-दिन विनती करता था कि वह उसकी माँ को जरा भी कष्ट न होने देगी।

एक दिन बातों ही बातों में शिव ने केसर से कहा, "मैं तुम्हें चोखा लगता हूँ न ?"

"बहुत चोखे लगते हो, चन्दा से भी चोखे।"

"फिर अपने पिताजी से कहकर मेरी माँ को अपनी माँ की खासी दासी बनवा दो न !" उसकी आकृति पर वेदना की रेखाएँ नाच उठीं, "उसे बहुत काम करना पड़ता है ! फिर दयालुसिंह उसे घड़ी भर भी सुख की साँस नहीं लेने देता।"

"ना बाबा, ना।" भय मिश्रित स्वर में केसर बोली, "एक बार मैंने तुम्हारे कहने से ठाकुर सा को धान बाँटने के लिए कहा था, जानते हो, उसका फल मुझे क्या मिला ? ठाकुर सा ने मुझे तड़ातड़ पीटा और कहा कि जरूर किसी शैतान ने तुम्हें ऐसा सिखाया-पढ़ाया है। उन्होंने मुझे उस शैतान का नाम बताने के लिए बहुत धमकाया और डाँटा, पर मैंने तुम्हारा नाम नहीं बताया। ऐसा करने से मुझे उस रात का खाना भी नही मिला। मुझ भूखी को नींद नहीं आई। मैं रात भर तारे गिनती रही। सवेरे माँ ने आकर मुझे बचाया।...अब मैं तुम्हारा कहना नही मानूंगी। तुम नहीं जानते कि मैं कितनी डरपोक हूँ। कभी भूल से तुम्हारा नाम मुँह से निकल गया तो तुम्हारी खैर नही।"

और शिव ने फिर केसर को कहना उचित नहीं समझा।

तत्पश्चात् वह कोल्हू के बैल की तरह अपने काम में लगा रहता था। "वह न किसी से अधिक बोलता था और न ही वह चांचल्य से गाता था। अब उसके जीवन में उदासी आ गई। ठहरे हुए पानी की तरह चिर शान्ति। वह समझता है कि उसका जीवन दुःखों की प्रतिच्छवि है और ऐसे नाजुक समय में उसे अपनी माँ के कहे अनुसार धैर्य और विवेक से काम लेना चाहिए।

नैना का ठाकुर से अब वासनात्मक सम्बन्ध समाप्त हो गया था, जिसमें उसकी कई उदारताएँ समाप्त-प्राय: हो गई थीं। अब उसके साथ एक गोली से अधिक अच्छा वर्ताव नहीं होता था। ठाकुर ने उसके घर को बेचकर सारे रुपये लगान के रूप में वसूल कर लिये। नैना ने कोई विरोध नहीं किया। वह अपने आपको एक अपराधी समझती थी। वह चाहती थी कि उसका पिछला इतिहास कोई न जाने!

जनानी ड्योढ़ी मे एक नई (वेश्या) का प्रवेश हो गया था, जो अपने समय की प्रसिद्ध तवायफ थी। आजकल ठाकुर सा उसके प्रेम में डूबे रहते थे।

रात के समय शिव अपने सारे कामों से निवृत्त होकर पुस्तकें लेकर बैठ जाता था। वह रामायण पढ़ता था, महाभारत पढ़ता था और पढ़ता था अनेक कहानियों की पुस्तकें।

पल,
दिन,
रात,
सप्ताह,
महीने,
साल,
गुजरते गये
गुजरते गये।

×

यौवन ने अँगड़ाई ली और सोने का उपक्रम करने लगा।

भारी कदमों की आहट ने उस उपक्रम में बाधा डाली और यौवन पुनः अँगड़ाई लेकर उठ गया। आदाब करके बोला, "लौंडी को हुक्म ?"

"आज हमारे यहाँ कई ठाकुर-उमराव आने वाले हैं। मुजरा होगा।" ठाकुर ने तवायफ गुलबदन को कहा। गुलबदन ने सलाम बजा कर . . . में प्रवेश किया।

ठाकुर ने अपने बैठकखाने को सजाया।

बारह बजते-बजते दस ठिकानों के सरदार आ गये।

महफिल जम गई।

गुलबदन ने कई राजस्थानी गीत गाकर ठाकुर मोहनसिंह की फरमाइश पर मुगलवंश के अन्तिम सम्राट् बहादुरशाह 'जफर' की एक दर्द भरी गज़ल सुनाई—

लगता नहीं है दिल मिरा उजड़े दयार में।
किसकी बनी है आलमे नापाएदार[1] में।
कह दो इन हसरतों से कहीं और जा बसें।
इतनी जगह कहाँ है दिले दाग़दार में।
इक शाखे गुल पे बैठ के बुलबुल है शादमाँ[2]।
काँटे बिछा दिये हैं दिले लालाज़ार में।
उम्रे दराज़ माँग के लाये थे चार दिन।
दो आरज़ू में कट गये दो इन्तज़ार में।
है कितना बदनसीब ज़फर दफ्न के लिए।
दो गज़ ज़मीं भी मिल न सकी कूए[3] यार में।

ठाकुरों में कुछ इन महफिलों की तवायफों के अतिरिक्त उसमें गाई जाने

---

१. नश्वर संसार; २. हर्षित; ३. मित्र की गली।

वाली चीजों के साहित्यिक महत्व को भी समझते थे। वे उन गीतों व गजलों में छिपी शायर की अन्तरचेतना की पीड़ा और उसके अन्तस्तल के मर्म को भी ग्रहण कर लेते थे। जब गुलवदन ने अन्तिम दो पंक्तियाँ दोहराईं तब ठाकुर मोहन की आँखें सजल हो गईं और वह कहने लगा, "है कितना बदनसीब ज़फ़र दफ्न के लिए, दो गज़ ज़मीं भी मिल न सकी कूए-यार में। वक्त भी क्या बला है! फूलों पर सोने वालों को काँटों पर भी जगह नहीं देता।"

ठाकुर उल्लास मोहनसिंह की वेदना समझ गया। इसलिए उसने गुल को कोई फड़कती हुई चीज गाने का अनुरोध किया। गुल सलाम बजा करके लोक-गीत सुनाने लगी।

हवेली के पीछे जनानेखाने के अगले कमरे में शिव केसर से मधुर स्वर में कह रहा था, "मैं तुम्हें चन्द्रावली कहूँगा।"

"वह कौन थी?"

"वह केसर-सी एक खूबसूरत वीरांगना थी।"

"तुम मुझे उसकी कहानी सुनाओगे?"

"सुन लो तो चैन से नहीं बैठोगी।"

"क्यों नहीं बैठूँगी?" उसने बाल-सुलभता से कहा।

"क्योंकि उसने अपनी मर्जी के खिलाफ हुए काम पर अपने आपको बलि-दान कर दिया।"

"तुम मुझे वह कहानी सुनाओ,"......"सुनाओ न!"

"सुनो—

"एक अत्यन्त रूपवती युवती थी। रूप भी ऐसा जो दीपक लेकर ढूँढ़ा जाय तो भी न मिले। अनूठा और अनोखा। अद्वितीय और अनुपम। नाराज न होना—श्रृंगार रस में बह रहा हूँ। नारी-सौन्दर्य का वर्णन करने में मनुष्य डरता भी है, फिर भी करता है। यह उसके मन की बड़ी दुर्बलता है।"

"अच्छा बाबा, जो मन में आये कहो, मैं तुम्हें कुछ भी नहीं कहूँगी।" केसर ने मस्ती से मुस्कराते हुए उसे हाथ जोड़ दिये।

"मैं चन्द्रावली के रूप का वर्णन कर रहा था। मध्यकालीन कवियों की तरह नख-शिख का वर्णन। रंग गोरा—ठीक तुम जैसा। नाराज मत होना। मुझे तुम भी हजारों में एक लगती हो। बाल वासुकी नाग की तरह बल खाये

हुए। ललाट प्रशस्त। भौंहें धनुषाकार। नाक खड्ग की धार की भाँति तीखी।
होंठ रेशम के तार की तरह कोमल। दाँत दाड़िम बीज ज्यूँ। उन्नत उरोज।
पीपल के पत्ते की तरह पेट। जाँघें संगमरमर के स्तम्भों की तरह चिकनी।
छोटे-छोटे पाँव !

"ऐसी चन्द्रावली एक दिन सरोवर पर सखियों सहित पानी भरने गई।

"तभी एक बलशाली मुगल सरदार आया और उसे पकड़ कर ले गया। सखियों ने आकर उसके घरवालों को खबर दी। घरवाले मुगल-सरदार के पास गये। उसने उन सबको डाँट कर भगा दिया। चन्द्रावली ने सोचा कि बल से कोई काम नहीं बनता है तो उसने अक्ल से काम लेने का निश्चय किया। उसने अपने माँ-बाप को समझा कर लौटा दिया और कहा, "अपनी इच्छा के बिना मैं कोई काम नहीं करती। आप निश्चित रहिए, मैं प्राण दे दूँगी पर उसे अपने तन को स्पर्श करने नहीं दूँगी।"

"बेचारे शक्तिहीन घर वाले वापस आ गये।

"इधर मुगल सरदार नशे में उन्मत्त चन्द्रावली के पास आया।

"चन्द्रावली भयभीत नहीं हुई। उसने मुगल सरदार को अर्ज की कि वह बहुत प्यासी है। उसे पानी पिलाया जाय। मुगल सरदार सुराही लेकर स्वयं तम्बू से बाहर निकला। उसके बाहर निकलते ही चन्द्रावली ने मशाल को उठाया और तम्बुओं मे आग लगा दी। देखते-देखते आग ने भयंकर रूप धारण कर लिया।

"बाहर सरदार चीख रहा था। उसके मददगार आग बुझा रहे थे।

"आग तो बुझ गई, पर चन्द्रावली नहीं बची। वह जल कर राख हो चुकी थी, क्योंकि उसे अपने पर हुई जबरदस्ती पसन्द नहीं थी।

"यही कथा है। इसलिए मैं तुम्हें चन्द्रावली कहना चाहता हूँ। चन्दा, चंदा या चन्द्रावली, क्योंकि मैं तुमसे भी उम्मीद रखूँगा कि तुम अपनी इच्छा रहित कोई भी काम नहीं करोगी ! जीवन में अनेक बाधाएँ आती हैं तब हमारा मन, विवेक, हृदय और हमारी विभिन्न प्रवृत्तियाँ लोभ-संवरण नहीं कर सकती। तब मनुष्य अपनी प्रिय वस्तु को छोड़ कर दूसरों के संकेतों पर नाच
है। केसर ! मैं तुम्हारा गुलाम हूँ, और एक गुलाम के प्यार की इच्छा
होगी, नहीं समझ पा रहा हूँ।"

केसर ने फूंक से दिया बुझा दिया।

उसने आगे बढ़कर शिव का हाथ अपने हाथ में ले लिया। वह मधुर विगलित स्वर में बोली, "ऐसा न कहो, मैं तुम्हें प्यार करती हूँ। सच्चे मन से प्यार करती हूँ। तुम गुलाम हो, इसलिए तुम प्रेमी नहीं बन सकते, यह कोई तर्क नही।"

"प्रेम के साथ तुम्हे प्राप्ति के अधिकार ?"

जलता प्रश्न समाधानहीन-सा उन दोनों के सम्मुख खड़ा हो गया।

"मैं इसके लिए भी प्रयास करूँगी।"

"इतने असम्भव को सम्भव करोगी ?"

"आशा बहुत बड़ी चीज है।"

"जिस आशा को अन्धेरा लील चुका है, उस आशा की आश रखना भी व्यर्थ है। वहाँ निराशा है। घोर निराशा।"

"तुम मुझे नहीं समझते !"

"क्या कहती हो ?"

"मैं तुम्हारी ही रहूँगी।"

'यह मेरा सौभाग्य है।"

फिर दोनों अल्पकाल के लिए एक-दूसरे की बाहुओं मे जकड़े रहे। वासनात्मक प्यार की उत्तेजना मे उन्हें यह भी ख्याल नही रहा कि ऊपर की महफिल समाप्त हो चुकी है। पाँवों की निरन्तर आहट ने उन्हें सावधान किया और शिव सजग पहरेदार की तरह तन कर जनानी ड्योढ़ी के आगे खड़ा हो गया।

सब ठाकुरों के चले जाने के बाद ठाकुर उल्लाससिंह ने अपनी पूरी हवेली के चारों ओर चक्कर लगाया। शिव को खड़ा देखकर उसने कहा, "मैं तुम्हारी सेवाओं से प्रसन्न हूँ। मेरी लाडली भी तुम्हारी अक्सर प्रशंसा करती है। कहती है—तुम बड़े स्वामिभक्त हो। जहाँ हमारा पसीना बहेगा, वहाँ तुम्हारा खून बहेगा।......ऐसा होना भी चाहिए। सुनो, कल से मैंने तुम्हारी माँ को केसर कुँवर के पास रख दिया है, क्योंकि आजकल उससे कठोर मेहनत नहीं होती। अवस्था के साथ-साथ वह आजकल बीमार भी रहती है।"

"यह आपकी कृपा है।"

"देखो, मैंने तुम्हारा मकान वापिस तुम्हारे नाम से कर दिया है। त
तुम्हारी माँ ने मेरे सामने झोली फैलाई थी। उसकी झोली मैं खाली नहीं र
सका।···और हाँ, तुम शादी क्यों नही कर लेते ?"

"बाद मे करूँगा।"

"क्यों ?"

"ऐसे ही ठकुर सा, जीवन में अनेक कठिनाइयाँ है, अभाव हैं, परेशानि
हैं। अभी मुझे शादी एक झंझट सी लगती है। सोचता हूँ—बेचारी को लाक
इन आफतो मे क्यों फँसाऊँ ?"

ठाकुर को उसकी यह बात रुचिकर नही लगी।
उसने अपने स्वर को कठोर करके कहा, "यहाँ तुम्हें आराम नहीं है ?"

"बहुत आराम है।"

"फिर ?"

"मैं शादी करना नही चाहता। मुझे आज का जीवन एक जंजाल लगत
है। यह जीवन भी कोई जीवन है !"

"फिर मर क्यों नही जाते ?" ठाकुर जहर उगल कर चलता बना।
ठाकुर के जाते ही शिव फिर अपनी बीट पर चक्कर निकालने लगा।
दो कदमों की आहट उसके समीप आई।
आहट उसके पास आकर खत्म हो गई। उसका हाथ अपने हाथ मे लेते
हुई केसर बोली, "तुम शादी क्यों नही करते ?"

"मेरी मर्जी।"

"देखो, शादी नही करोगे तो तुम्हारा वंश कैसे चलेगा ? फिर तुम्हारी माँ
भी बूढ़ी हो रही है। उसकी सेवा कौन करेगा ?"

"मेरा वंश चलेगा, जरूर चलेगा।"

"लेकिन·····।"

शिव ने केसर को अपनी बाँहों मे भरकर चूम लिया, "आशंका करने की
जरूरत नही है। मेरा वंश तुम चलाओगी, जरूर चलाओगी।"

केसर कुँवर ने भी उत्तेजना के वशीभूत होकर शिव के गालों पर चुम्ब
की वर्षा कर दी और वह भाग गई।
···क्षणों की स्मृति में विस्मृत-सा खड़ा रहा।

भोर का तारा उगा।

शिव अपनी कोठरी में आया और चुपचाप बैठ गया।

नैना बिस्तरे पर पड़ी थी। उसे हलका बुखार था। शिव कुछ देर तक विचारामग्न बैठा रहा। अन्त में वह उठा और माँ के ललाट को छूता हुआ बोला, "तुम्हें बुखार है।"

"नही तो।"

"फिर शरीर जल क्यों रहा है?"

"गरमी से।"

"आज तुम आराम कर लो।"

नैना ने कहा, "मैं पहले ही सोच चुकी हूँ। चलो अच्छा हुआ कि हमें ठाकुर ने अपना घर लौटा दिया।"

"कोई अहसान नही है।"

"धीरे बोला करो।"

शिव चुप हो गया। धीरे-धीरे उसे नीद आ गई।

उसे सोये दो घण्टे भी नहीं हुए थे कि हवेली में जोर का शोरगुल मचा। नैना ने शिव को जगाया। शिव ने हवेली में जाकर पता लगाया कि ठाकुर सा की माँ की तबीयत एकाएक गड़बड़ा गई। वैद्य जी उनकी नाड़ी पकड़े बैठे हैं। ठाकुर सा, ठकुराणी और केसर कुंवर व अन्य नौकर-चाकर उनके चारों ओर जमे हुए हैं।

शिव जब तक शौचादि से निवृत्त हुआ तब तक ठाकुर की माँ के प्राण-पखेरू उड चुके थे। ठाकुर सा ने उनकी अर्थी निकालने के लिए हुक्म दिया। हवा की तरह यह समाचार सारे गाँव मे फैल गया।

ठाकुर ने नियम बना रखा था कि जब कोई उसके परिवार मे मरे, तब सारे गाँव को उसकी अर्थी मे शामिल होना पड़ेगा।

गाँववासी इकट्ठे हो गये।

एक पालकी में ठाकुर की माता के शव को बिठाया गया और बड़ी धूम-धाम से वह अर्थी निकली। अर्थी से लौट आने पर सारे गाँव के बूढ़े, जवान व बच्चों का मुण्डन कराया गया। जिसने मुण्डन नही कराया, उसे ठाकुर ने

गद्दार आदि कहा और उसे ऐसी धमकी दी कि बेचारे को हार कर अपने
के बाल मुड़ाने ही पड़े।

औरतें हवेली में आ-आकर रोती थीं।

रोने वाली औरतों का मुंह उघाड़-उघाड़ कर ठाकुर की विशेष दा
देखती थी कि उनकी आंखों में आंसू हैं या नहीं ? बाहर की स्त्रियों के
उदारता वरती जाती थी, किन्तु हवेली की दासी की आंखों में अगर आंसू
आते तो उसकी खैर नहीं। उसे ठाकुर के सामने पेश किया जाता
कभी ठाकुर उस दासी के नगे वदन पर कोड़े तक लगवा देता था।

शिव को भी मुण्डन कराना पड़ा।

नैना बारह दिन तक बैसक (बारह दिन तक स्त्रियां रोती हैं; उसे
स्थानी में बैसक कहते हैं) में बैठी। तेरहवें दिन शिव को किसी खास
शहर भेज दिया गया। श्रीखेतसिंह का लड़का जवान हो चुका था।
था—पद्मसिंह।

उस दिन राजाजी शहर के किसी मंदिर में जाने वाले थे।

सड़कें भीड़ से भरी थी। जहां-तहां पुलिस वाले खड़े-खड़े प्रजा की भी
को सँभाल-रहे थे। शिव भी एक ओर खड़ा हो गया। लगभग आधे घण्टे के बा
सवारी निकली।

पहले पुलिस बाजा, फिर रथ, फिर सजे हुए घोड़े और इसके बाद मोटर
पर राजाजी। उनके पीछे युवराज पद्मसिंह। और उसके पीछे केसरीसिंह
बेटा अनूपसिंह।

शिव ने अपने पास खड़े एक व्यक्ति से पूछा, "राजाजी की सवारी क
पधार रही है ?''

"मंदिर।"

"क्यों ?"

"सुना है कि वहां कोई दादूपंथी साधू आया है। वह बहुत ही चमत्
है। वह बीमार को दैवी-शक्ति से ठीक कर देता है।"

"राजाजी को क्या हो गया है ?"

"आप बाहर के हैं ?"

"जी !"

"तभी आपको मालूम नहीं है कि राजाजी को आजकल कम दीखता है र उनके भतीजे अनूपसिंहजी बचपन से ही अपंग हैं। उन्हें दो साल की आयु ही लकवा मार गया था।"

शिव के मन पर झटका-सा लगा। वह कुछ क्षण अपने साथी को देखता हा और अन्त में बोला, "राजाजी साधू को अपने यहाँ भी बुला सकते थे।"

"साधु महाराज कहीं भी नहीं जाते।"

शिव और कुछ पूछना चाहता था, लेकिन सवारी जा चुकी थी। और सका साथी कहीं खो गया था। शिव भी दिन भर ठाकुर के लिए सामान त्यादि खरीदता रहा। सन्ध्या होते ही वह ऊँट पर सवार हुआ और चल पड़ा।

वह रास्ते भर केसर के बारे मे सोचता रहा। उसने कई बार यह भी सोचा कि केवल केसर के प्यार के सम्मोह में वह अपने आपको ठाकुर की हवेली में कैदी की तरह सड़ा रहा है। कभी-कभी वह भागने की भी सोच लेता था, किन्तु माँ का ध्यान भी उसे दुर्बल कर देता था। वह यह भली-भाँति जानता था कि उसके बाद उसकी माँ का जीवन नारकीय यातनाओं से भर जायगा। वह दाने-दाने को मुँहताज हो जायगी।

केसर उसे हृदय से प्यार करती है। उसे विश्वास भी है कि वह आजीवन उसे प्यार करेगी। वह उसके लिए सब कुछ करने को तत्पर है। वस्तुतः केसर शिव को चाहती थी। आतंक और रूढ़ियो के बीच रहते हुए भी केसर के मन-मन्दिर में शिव की मूर्ति थी और वह येन-केन-प्रकारेण शिव को प्रसन्न रखने का प्रयास करती थी।

ऊँट धोरे पर था।

एकाएक ऊँट का पाँव बिदका। शिव चौंक गया।

देखा—अन्धेरा घना होकर छा गया है।

दूर-दूर से धोरों की चोटियाँ प्रेत छायाओं-सी लग रही हैं।

तब वह कोई गीत गुनगुनाने लगा। वह गीत अधिक देर तक नहीं गुनगुना पाया, क्योंकि उसके मन मे केसर सम्बन्धी बातें छाई हुई थीं।

एक दिन की बात है—

ठाकुर ने गाँव की एक युवती को जो अपने पति की आज्ञा की अवज्ञा करती थी, अपनी हवेली में बुलाया। दोपहर का समय था। ठकुराणी पीहर थी।

इसलिए ठाकुर की विलासिता में एकदम स्वतंत्रता थी। शिव ठाकुर की हवे
के अनाज की देखभाल कर रहा था।

नाथी ने आकर उसे पुकारा। वह धूल से भरा हुआ था। नाथी ने उसे
आँचल से उसका मुँह पोंछा। दुलार से कहा, "ठाकुर सा तुम्हें बुला रहे
हैं।"

शिव उनके सामने हाजिर हो गया।

ठाकुर ने उसे आज्ञा दी, "इस युवती के कोड़े लगाओ।"

शिव उसे प्रश्न भरी दृष्टि से देखता रहा।

"मैं कहता हूँ कि इस छिनाल को नंगी करके कोड़े लगाओ। यह
अपने खसम की बात नहीं मानती है।"

युवती रेखड़ी ने ठाकुर के पाँव पकड़ लिये।

वह बोली, "यह झूठ है, सरासर झूठ है। मैं अपने पति का हुक्म मानती
हूँ।"

शिव ने अनुनय भरे स्वर में कहा, "रेखड़ी ठीक कहती है ठाकुर सा,
दरअसल इसकी सास खुद कंजर है। यह आग उसीकी लगाई हुई है।"

शिव की यह बात ठाकुर को ठीक नहीं लगी। वह शिव को समीप बड़े
कमरे में ले गया और उसने उसके गाल पर चाँटा मारा और उसे हिदायत दी
"तू मेरी हाँ में हाँ नहीं मिलाता, तर्क करता है। अब कभी साले कुछ
गडबड़ की तो मुझसे बुरा कोई नहीं होगा।" और ठाकुर ने एक साथ हजारों
गालियाँ शिव को सुना दीं। शिव कुछ नहीं बोला।

ठाकुर वापस अपने कमरे मे आया। उसने रेखड़ी के सतीत्व का हरण
किया। रेखड़ी कुछ नहीं बोली, लेकिन उसका गोरा और प्रकाशवान चेहरा
स्याह हो गया। उसकी आँखों मे अपराध झलक उठा। वह कमरे से बाहर
निकली। उसके कदम भारी थे।

शिव उसे हवेली के द्वार पर खड़ा मिल गया।

रेखड़ी ने उसकी ओर दयापूर्ण दृष्टि से देखा पर वह एक शब्द भी नहीं
बोली। शिव ने उसका पीछा किया। थोड़ी दूर चलकर उसने शिव को टोका,
"तुम मेरा पीछा न करो। अच्छा होता कि तुम मुझे नंगी करके पीट लेते!
जानते हो, बाद मे उस नीच ने मेरे साथ क्या किया?"

"जानता हूँ ।"

"एक स्त्री के लिए इसके बाद मृत्यु के सिवाय क्या शेष रह गया ?"

शिव ने उसको मजबूती से पकड़ लिया, "जुल्म सहकर अपने आपको मिटा [illegible]ा कायरता है । जुल्म जिन्दा रहना चाहिए । उसकी जिन्दगी से ही विद्रोह [illegible]ता है । तुम्हारी जिन्दगी मुझ मे और गाँव वालो में शाश्वत घृणा को उत्पन्न [illegible]रती रहेगी । हमे इस बात के लिए आगाह करती रहेगी कि यह इस नीच [illegible]े सताई हुई मानवी है ।"

"लेकिन समाज और गाँव की उपेक्षा, घृणा, लांछन मैं कैसे सहूँगी ?"

"सहना ही मनुष्य का सर्वोपरि गुण होता है । रेखड़ी यह बे-इज्जती [illegible]म्हारी नही, तुम्हारे परिवार की विशेषत. उस सास की है जिसके घर की तुम [illegible]ह-लक्ष्मी और कुल-वधू हो ।"

किन्तु रेखड़ी पर शिव की बातों का कोई प्रभाव नही पड़ा । उसने रात [illegible]ो ही अफीम घोल कर पी ली और सवेरे मर गई । गाँव में चर्चा थी कि [illegible]ास-बहू के झगड़े में बहू ने आत्म-हत्या कर ली ।

शिव को उसकी मृत्यु का सख्त अफसोस हुआ । उसने रात के समय [illegible]ेसर पर गुस्सा उतारा और कसम खाई कि वह सुबह होते-होते इस गाँव को [illegible]ोड़ कर चला जायगा । बाद में उसे फाँसी ही क्यों न लग जाय !

केसर सुनकर सन्न हो गई ।

बाहर क्षीण चाँद चमक रहा था ।

झरोखे के नीचे चाँद की किरणें खेल रही थी ।

केसर शिव को खींच कर झरोखे के नीचे उस हिस्से की ओर ले गई जहाँ [illegible]ोर अँधियारा था । उस अँधियारे में उसने बेकली से शिव को अपनी बाहुओं [illegible]ें जकड़ लिया । उसका उठता-गिरता वक्ष स्पर्श कर रहा था । वह बावली-[illegible]ी गर्दन हिलाकर बोली, "नहीं-नहीं, ऐसा नही हो सकता, तुम नही जा सकते, तुम नही जा सकते ।" उसकी साँसों में ज्वालाएँ जलने लगी और आँखों से अश्रु प्रवाहित हो गये ।

"मैं जाऊँगा जरूर, मैं ऐसे पिशाच के साथ नहीं रह सकता, नहीं रह सकता । गाँव का ठाकुर होकर गाँव की बहू-बेटियों से······।"

"लेकिन इसमें मेरा क्या कसूर है ?"

"तुम्हारा कोई कसूर नहीं है।"

दूसरे दिन सचमुच केसर ने ठाकुर के समक्ष कठोर शब्दों में विरोध किया। रेवड़ी की मौत को लेकर उसने ऐसा तूफान खड़ा किया कि स्वयं ठाकुर को विस्मय हुए बिना नहीं रह सका। उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि उसे ही गाल में काले नाग पल रहे हैं। फिर भी वह कुछ नहीं बोला, क्योंकि मानता था, इसलिए इस बात का अधिक अग्रसर होना शुभ नहीं लग रहा था। उसने अपनी बेटी को कोई उत्तर नहीं दिया। शिव को इससे बड़ी प्रसन्नता हुई।

रात को चाँद कल से अधिक प्रकाशवान था।

शिव से केसर कह रही थी, "मैंने तुम्हारे कहने पर ही विरोध किया ताकि तुम यह समझ सको कि मैं तुम्हें हृदय से चाहती हूँ। तुम मुझको इस सन्देह की दृष्टि से देखते आये हो, पर शिव मैं तुम्हें बहुत चाहती हूँ।"

इस तरह शिव उसके प्यार में जकड़ता गया।

ऊँट तेज गति से भाग रहा था।

अन्धेरा बढ़ गया।

रात ढल रही थी।

एक बैलगाड़ी ऊँट के पास आई। बैलगाड़ी में कोई जाट बैठा था। वह बोला, "भाई दियासलाई है?"

शिव ने उत्तर दिया, "नहीं।"

गाड़ीवान बड़बड़ा उठा, "बीड़ी के बिना दिमाग भी ठीक नहीं रहता है।"

शिव उससे दूर निकल गया था।

× × ×

१७

पन्द्रह दिन बीत गये।

ठाकुर राजधानी से लौटा, वह बड़ा प्रसन्न था।

दोपहर का खाना खाकर वह शय्या पर पड़ा था। एक दास पंखा झल था। उसने उसे जाने का संकेत किया। उसके जाते ही उसका स्थान दासी ने ग्रहण कर लिया, पर ठाकुर ने उसे हुक्म दिया कि वह नैंना भेज दे।

नैंना आकर पंखा झलने लगी।

ठकुराणी ने आकर ठाकुर को पान बना कर दिया।

पान खाकर ठाकुर ने अपने विस्तरे के नीचे से एक छोटी-सी मखमल के ड़े की बनी पेटिका निकाली और ठकुराणी से पूछा, "बता सकती हो कि में क्या है ?"

"मैं क्या जानूं !"

"बताने की कोशिश करो।"

"होगा कोई गहना।"

"केवल गहना नहीं, हमारी किस्मत।"

"सच ?"

"हां !"

"कैसे ?"

'मैं अपनी' बाई सा का विवाह तय कर आया हूं।"

"कहां ?" विस्मित हो गई ठकुराणी।

"सुनोगी तो मन उछल जायगा। आँखों पर विश्वास नहीं होगा।"

ठाकुर ठकुराणी की उत्सुकता बढ़ाते ही जा रहे थे। अब वह ठाकुर पास आ गई थी। नैंना ने क्षण भर के लिए अपने नयन बन्द कर लिये। कुराणी ठाकुर से छीना-झपटी करने लगी। ठाकुर के हाथ से वह टिका छिन गई। ठाकुराणी ने उसे खोला—पेटिका में दो हीरों के सुन्दरतम ार थे। ठकुराणी उन्हें देखती रही, देखते-देखते वह बोली, "कितने दाम ; हैं ?"

"एक है तीन लाख का और दूसरा एक लाख का।"

"किसने दिये हैं ?"

"राजाजी ने।"

"क्यों ?"

"उन्होंने हमसे हमारी बेटी अपने भतीजे केसरसिंहजी के पुत्र अर्जुन
लिए माँग ली है। ठकुराणी, हम उन्हें इन्कार नहीं कर सके। उन्होंने हमें
'ठिकाना' दिया, इज्जत दी, और आज अपना समधी बना कर हमारी इज्
चार चाँद लगा दिये हैं।"

ठकुराणी के चेहरे पर प्रसन्नता नाच उठी।

नैना का मुख एकदम पीला पड़ गया।

ठाकुर ने विहँस कर कहा, "उन्होने तीन लाख रुपये का हार बाई
सा को दिया है और यह आपको।"

'लेकिन ?" ठकुराणी अपना हार पहन कर सहमते हुए बोली, "...
को लकवा है। वे चल-फिर नही सकते !"

ठाकुर हँस कर बोले, "उन्हें सिर पर उठाकर ले जाने वाले जिन्हें
हैं। हजारों नौकर-चाकर और गाडियाँ हैं। फिर हमारी बेटी इतने बड़े ठि
की मालकिन बनेगी। हमारा मन आकाश को छूने लगेगा। इतने ठि
होना कोई मामूली बात नही है। सैकड़ों ठाकुर अपनी बेटी उन्हें देने
तैयार हैं।"

ठकुराणी फिर भी विचारती रही।

नैना न चाहते हुए भी बोल पड़ी, "अन्नदाता खम्मा करें, नमक खाना
इसलिए छोटे मुँह बडी बात कर रही हूँ। आप जरा बाई सा को भी पूछ लेते
"गोली !" ठाकुर सा गरज कर बोले, "जबान कटवा डालूंगा।
हैसियत से अधिक बोलना ठीक नही है। मेरी बेटी मेरे खानदान के
रिवाजों को जानती है। मैं खुद अपना भला-बुरा समझता हूँ।"

कमरे मे सन्नाटा छा गया।

नैना मुँह नीचे किये खड़ी रही।

ठाकुर ने भारी स्वर में कहा, "इस रिश्ते के तय होते ही कुछ
हम से चिढ गये। क्योंकि यह सम्मान हमारी लगातार विनती पर
और श्री श्री पूज्य राजाजी ने हमें पाँव में सोने का गहना भी
तीन खून माफ के हुक्म दिये हैं।"

"अच्छा।"

"और मुझे उम्मीद है कि वे बाद में मुझे अपना दीवान भी बना ते हैं।"

नैना कुछ नहीं बोली। वह मन ही मन विचार कर रही थी कि यह सब ा के महल हैं। मैं उस राक्षस को जानती हूँ। मैं उस बच्चे को पहचानती हूँ। भौंडा है, बदसूरत है, काला है। ऐसे को केसर जैसी बेटी देकर महापाप गा।

सांझ तक ठाकुर ठकुराणी को इस रिश्ते के लाभ समझाता रहा और द में विवाह की तैयारियाँ करने का हुक्म देकर खुद घूमने चला गया। भी-कभी वह अपनी रैयत के बीचों-बीच अपने अहम् की तुष्टि के लिए ला जाया करता था।

और नना भागी-भागी केसर के पास गई।

केसर स्नान करके बाहर निकली थी। उसके सद्यःस्नात यौवन और नुपम रूप ने नैना को क्षण भर के लिए विस्मृत कर दिया। उस समय सर बहुत प्रफुल्ल दीख रही थी। उसके रेशमी अधरों पर मादक मुस्कान ी। उसकी आँखों में तरुणाई की झांकती एक अनिश्चित भावना थी।

नैना को एकदम चुप देखकर बोली "काकी, क्या बात है ?"

नैना कुछ नहीं बोली, वह प्रश्न भरी दृष्टि से केसर को देखती रही, पर सकी अनावेदना और अन्तर्द्वन्द्व केसर की आंखों से न छिप सका। वह उसके ास आकर बोली, "क्या बात है, तुम कुछ कहना चाहती हो ?"

काकी ने कृत्रिम हँसी के साथ कहा, "तुम बड़ी भाग्यवान हो, भगवान् तुम्हारे होठों पर यही मुस्कान रखें।"

केसर गम्भीर हो गई।

"तुम्हारा विवाह भी बहुत बड़े ठिकाने में हो रहा है। तुम रानी से कम सुख नहीं भोगोगी। वहाँ तुम रानी कहलाओगी।"

नैना यह कहकर चलती बनी।

केसर किंकर्तव्यविमूढ़ बनी खड़ी रही। नैना उसके सोचते-सोचते उसकी आंखों से ओझल हो गई।

नैना अपनी कोठरी में आकर बैठ गई।

शिव पुस्तक पढ़ रहा था। वह पुस्तक पढ़ने में इतना तन्मय था कि उसे यह भी पता नहीं चला कि माँ कब आई और कब वह इस तरह ... सोई। वह बीमार सी लगती थी। जब उसने पुस्तक का अध्याय समाप्त किया, तब वह उठा और पुस्तक को रखते हुए पूछा, "माँ, आज तुम ... क्यों हो?"

नैना के तप्त हृदय से एक दीर्घ उसाँस निकली और वह टूटे ... स्वर में बोली, "आज बड़ा अनर्थ हो गया है।"

"कौन-सा अनर्थ?" शिव ने पूछा।

"केसर का विवाह तय हो गया है।"

ज्वालामुखी फूट पड़ा हो और धरती के छोटे-छोटे अनेक टुकड़े ... हों, ऐसा ही शिव को अनुभव हुआ। जैसे उसके स्वप्न-लोक का संसार ... खण्ड हो गया हो। वह कुछ क्षण तक अपने मुँह से शब्द नहीं निकाल सका। अन्त में वह बड़ी कठिनता से बोला, "तुम्हें किसने कहा?"

"खुद ठाकुर सा ठकुराणी सा को कह रहे थे। विवाह ठाकुर केसरीसिंह के बेटे से निश्चय हुआ है। वह लड़का अपंग है। उसे बचपन में ही ... मार गया था।"

"क्या कहती हो?"

"ठीक कहती हूँ बेटा, तुम्हारा बाप ठाकुर केसरीसिंह के जुल्मों की कहानियाँ खूब सुनाया करता था। वह आदमी नहीं, पूरा राक्षस है। उसने ... में इन्सानियत को सदा अपनी शैतानियत से दबाया है। उसका बेटा ... नहीं सकता, बदसूरत है और अगर बाप के रक्त से उसकी रचना हुई ... अत्यन्त आवारा भी होगा।"

शिव को अपनी माँ की बात का विश्वास नहीं हो रहा था। वह ... विचलित हो कर हवेली की ओर चला। हवेली में यह खबर हवा की तरह ... चुकी थी। दास-दासियों में इसकी चर्चा जोरों पर थी।

शिव शीघ्र ही केसर के पास गया।

केसर अपने खुले बालों को सँवार रही थी। खुले कुन्तलों में वह ... में वर्णित अप्सरा-सी लगती थी। शिव को देखकर वह और अनजान बन ...

राव उसके सम्मुख खड़ा हो गया। उसकी आकृति उदास थी और दृष्टि में रोष की स्पष्ट रेखाएँ।

"क्या बात है? आज मुँह फुलाकर क्यों खड़े हो?"

"बधाई है तुम्हें!"

"बधाई, किस बात की, जरा हम भी सुनें।" केसर ने नाटकीयता से कहा।

"तुम्हारी सगाई हो गई है।"

केसर को विश्वास नहीं हुआ। वह शिव का हाथ उत्तेजना से पकड़ कर बोली, "यह तुम क्या कहते हो? यह झूठ है, झूठ है।"

"मुझे झूठ बोलने की आदत नहीं। मैंने जो कुछ सुना है, वह तुम्हारे सामने वैसा का वैसा रख दिया। प्रमाण के लिए अब तुम्हें स्वयं अपनी माँ से पूछ लेना चाहिए।"

"मैं जाकर अभी पूछती हूँ।" वह हवा की तरह बाहर गई।

शिव वहाँ से वापस अपनी कोठरी में आ गया।

दीवार पर घूमती छिपकली ने मक्खी को दबोच लिया। मक्खी तड़पती रही। उसके छोटे-छोटे पंख फड़फड़ करते रहे, पर छिपकली के जबड़ों से वह नहीं छूट सकी। देखते-देखते वह मक्खी को निगल गई।

छिपकली और ठाकुर।

मक्खी और वह, उसकी माँ, सैकड़ों दास-दासियाँ और ग्रामीण रैयत।

विषाक्त प्रहार और मृत्यु।

छिपकली का मुँह अभी भी हरकत कर रहा था।

शिव ने एक पत्थर उठाया और छिपकली पर दे मारा। छिपकली तुरन्त भाग गई। वह गुस्से से ऐंठकर रह गया। आत्म-पीड़ा में वह जल उठा।

अभी दो क्षण भी नहीं बीते थे कि छिपकली एक बिच्छू को अपने मुह में दबाये हुए आई। शिव उसे देखने लगा। देखता रहा। बिच्छू भी मक्खी की तरह अपने प्राणों को छुड़ाने के लिए प्रयास कर रहा था, पर छिपकली उसे लिए दीवार से चिपकी हुई थी।

शिव ने फिर सोचा—जहर को जहर ही काटता है। जो जहर जितना तेज होगा वह उतना ही भयंकर होगा। ठाकुर गाँव की बेटियों को अपने जुल्म का शिकार बनाता है और राजाजी उसकी बेटी को सदा के लिए जीवित मौत

दे रहा है। उसकी आन्तरिक घृणा फुफकार उठी। उसकी इच्छा हुई। जोर का अट्टहास करे। वह जोर से उछले-कूदे।

छिपकली = राजाजी !

बिच्छू = ठाकुर !

मौन अट्टहास !

"शिव है ?" बाहर से केसर ने उसे पुकारा।

शिव ने प्रत्युत्तर नहीं दिया।

केसर कोठरी में आई।

"मैंने तुम्हें पुकारा था।"

"मैंने नही सुना।"

"झरोखे में चलो।"

"नही !"

"क्यों ?"

"जाना ठीक नही है।"

"मैं तुमसे विनती करती हूँ। थोड़ी देर के लिए वहाँ चलो।"

"चलने से कोई लाभ नही होगा। अब खेल खत्म हो चुका है।"

"नहीं हुआ है। मैंने माँ से कह दिया है कि यह विवाह नहीं होगा अगर मेरा विवाह उस लूले-लँगड़े से जबरदस्ती कर दिया तो मैं अपने प्राण त्याग दूँगी।

"तुम्हारी माँ ने क्या कहा ?

"कहा, यह बात सच नहीं है।"

"तुम्हें धोखा दिया है माँ ने।"

केसर को यह बात बुरी लगी। वह जानती थी कि माँ उसे हृदय से प्यार करती है। वह उससे मिथ्या भाषण नही कर सकती। माँ केसर-ठाकुरानी छल-प्रपंच नहीं कर सकती। अतः वह तनिक रुष्ट होकर बोली, "मेरी माँ मुझे कभी भी धोखा नहीं दे सकती। मैं उसकी इकलौती बेटी हूँ। वह अपनी इकलौती बेटी को किस तरह नरक में झोंक सकती है !"

शिव को केसर पर तरस आ गया। बोला, "मनुष्य की तृष्णा बड़ी ... है। तृष्णा का भूखा इन्सान अपनी इकलौती सन्तान को ही नहीं

ल्कि अपने आपको स्वार्थ के लिए दाव पर लगा देता है। तुम्हारा बाप दूसरी गह अपमानित और बेइज्जत होकर आया। संयोगवश इस गाँव में कई त्याएं हो गई, फलस्वरूप उस जमींदार को यह गाँव छोड़ना पड़ा। वस्तुतः एक ाह्मण का सुखी सम्पन्न घर चन्द स्वार्थी राजकीय सामन्तों से देखा नहीं गया। ाज वह जमीदार हरिद्वार में अपने जीवन के शेष दिन गुजार रहा है और म्हारा बाप अपना सर्वस्व बलिदान करके इस प्रान्त के ठाकुरों को नीचा दखाना चाहता है। लेकिन इन ठाकुरों के आपसी द्वेष को तुम नहीं जानतीं। ोठों पर हँसी लिये हुए ये आदमी को जान से मरवा देते हैं। तुम्हारा बाप ब तुम्हें दाँव पर लगाना चाहता है। उसे उम्मीद है कि वह इस रिश्ते से स राज्य का दीवान बन जायगा।"

केसर ने कहा, "मैं अभी ठाकुर सा के पास जाती हूँ।"

केसर चली गई।

ठाकुर घूम कर आ गया था। वह भोजन करके हवेली की छत पर टहल रहा था। केसर उसके सम्मुख खड़ी हो गई। ठाकुर देखकर उसके समीप आया। सिर पर हाथ फेर कर वह बोला, "क्या बात है लाड़ो, कुछ कहना चाहती हो?"

"हाँ!"

"कहो?"

"आप गुस्सा न होइएगा।"

"क्यों, क्या कोई बुरी बात कहने जा रही हो?"

"शायद वह आपको बुरी लगे।"

"मुझे तुम्हारा कहा कुछ भी बुरा नहीं लगेगा।"

केसर की आँखें पहले ही सजल हो गईं। कण्ठ अवरुद्ध-सा हो उठा। वह साहस बटोर कर बोली, "मैंने सुना है कि आप मेरा विवाह कर रहे हैं।"

ठाकुर के कान खड़े हो गये। कड़क करके बोले, "ऐसे सवाल खानदानी लड़कियों को नहीं करने चाहिए। लड़की के विवाह के बारे में उसके माँ-बाप सोचते हैं। जाओ, भविष्य में ऐसी गुस्ताखी नहीं होनी चाहिए।"

केसर आगे नहीं बोल सकी। ठाकुर की आग बरसाती आँखें वह नहीं सह सकी। पराजित-सी आकर झरोखे में खड़ी हो गई। शिव वहाँ नहीं था। वह

वापस चला गया था। उसे रात को तैयार होकर जनानी ड्योढ़ी के ...
आना था। केसर झरोखे की दीवार का सम्बल लिये खड़ी थी।

धीरे-धीरे रात घनी हो गई थी।

नाथी ने आकर उसे खाने को कहा। केसर चिल्ला पड़ी, मानो ...
देर से अपने मन के उद्वेग को दबाये हुए बैठी थी। उसका चिल्लाना ...
था। नाथी के अंग-अंग में सिहरन दौड़ गई। वह एकटक केसर की ...
लगी, जैसे वह कुछ जानना चाहती है कि आज केसर को क्या हो गया है!

"तू मुझे इस तरह क्यों घूर रही है ?"

"आपकी तबीयत ठीक है न !"

"क्या मैं तुझे बीमार लग रही हूँ ?"

"बीमार तो नहीं, पर मुझे भ्रम हो रहा है कि आपको कोई छाया (भूत) लग गई है। एकाएक इस तरह चीखना और अजीब आँखों से घूरना, उसी लक्षण हैं।"

केसर को गुस्सा आ गया, "क्या बकती है !"

"राम-राम !" नाथी बड़बड़ाई, "जरूर इसमें कोई बदमाश छोकरी है!"
वह बहुत आतंकित लग रही थी।

केसर से अब नहीं रहा गया। वह अपना धैर्य खो बैठी। उसने नाथी के ... पकड़ कर धकेल दिया। वह गिर पड़ी। भागी और उसने जाकर ... ठकुराणी को खबर कर दी। ठकुराणी तुरन्त आई। केसर ने चिढ़ते हुए ...
"इस रांड को मेरे पास मत भेजा करो, इसका माथा खराब हो गया है।"

ठकुराणी ने नाथी को वहाँ से हटा दिया। खुद केसर के पास बैठ गईं। उसे पुचकार कर पूछा, "क्या तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है। वैद्य जी को बुलाऊँ ? ओझा जी से मंत्र का पानी मँगवाऊँ ?"

"नहीं माँ, मैं बिलकुल ठीक हूँ। मुझे किसी तरह का तन का रोग ... है। मन अवश्य खराब है। ठाकुर सा के पास गई थी। उन्होंने मुझे ... दिया। माँ सा आपको मेरी सौगन्ध है अगर मुझसे कुछ छुपाया तो !"

ठकुराणी पुनः गम्भीर हो गई। उसने दीया जलाने को कहा।
झरोखे में दीया जल गया। दीप के प्रकाश में ठकुराणी ने केसर का ...
हुआ मुँह देखा। ठकुराणी को लगा कि उसकी बेटी कई रोज से बीमा...

ा का सौन्दर्य युक्त मुख पीला पड़ गया है। उसके अन्तस् में एक टीस-सी ी। स्नेह से बोली, "मैं तुम से कुछ भी नहीं छुपाऊँगी, सच-सच कहूँगी।"

"क्या मेरा होने वाला पति लकवे का मरीज है?"

"हाँ!" माँ का सिर नीचा हो गया।

"और आप मुझे......।"

"तुम्हारे पिता जी विवश हैं। तुम जानती हो कि जब तुम्हारे बाबा ने मे अपने राज्य से निकाल था तब महाराजा श्री खेतसिंह ने हमें ठिकाना और म्मान बख्शा था। अब उन्होंने ही तुम्हारे बाप से तुम्हें माँग लिया है, फिर वे ाजाजी को कैसे इन्कार कर सकते! एक बात और है कि टाँगों पर लकवा ोने से क्या अन्तर पड़ेगा। उनके सैंकड़ों नौकर-चाकर है, बेटी, मैं भी तुम्हारे ामने झोली फैलाती हूँ कि तुम अपने बाप को नाराज न करना। उनका ुस्सा बड़ा तेज है।" वह कुछ देर चुप रही। दीपक की लौ पर एक पतंगा आकर जल गया। पवन का हल्का झोंका लौ में कम्पन उत्पन्न कर रहा था।

"भविष्य भी देखना पड़ता है। आने वाली पीढ़ी के लिए भी सोचना हमारा कर्त्तव्य है। क्षत्राणी वर की श्रेष्ठता नहीं, कौटुम्बिक गौरव को देखती है। तुम ठाकुर श्री केसरीसिंह के सुपुत्र की पत्नी बनोगी। क्या यह हमारे लिए कम गौरव की बात है?"

"लेकिन भविष्य और आने वाली पीढ़ी.......।"

बीच में ही माँ बोली, "लाज आती है पर कहे बिना रहा भी नहीं जाता। निरन्तर ओझा जी के आशीर्वाद से मुझे 'पेट' रह गया है। महादेव जी की कृपा हुई तो इस बार बेटा ही होगा। तुमसे राखी बँधाने वाला भाई।"

"माँ सा?"

"हाँ बेटी मैं १८ बरस के बाद माँ बन रही हूँ।"

केसर का सिर भन्ना गया।

"अब दूसरा पहलू तुम्हारे सामने रख रही हूँ। अगर तुमने जहर खा लिया तो हम दर-दर के भिखारी हो जायेंगे। इस संसार में हमें पानी पिलाने वाला भी नहीं मिलेगा। मेरी दुर्दशा उन अभागिनों से कम नहीं होगी जिनके बच्चे गलियों में ही पैदा होते हैं, ठोकरें खाकर बड़े होते हैं और अभावों में ही मर जाते हैं। तुम इतना जरूर जानती हो कि राजा, योगी, अग्नि, जल, इनकी

उल्टी रीति है। जब राजा प्यार करते हैं, खूब करते हैं। इनके दिमाग में कि-ने किसी के खिलाफ कोई बात बिठा दी तो फांसी पर चढ़वाते देर नी लगाते। अब तुम खुद समझदार हो। अपना और अपने कुटुम्ब का भला सोच सकती हो।"

केसर आंसू बहाती रही।

"मुझे भी लूला-लंगड़ा जँवाई पसन्द नहीं है। क्या कोई माँ इतनी नि-हो सकती है कि वह अपनी इकलौती बेटी का पति अपंग लाएगी? आखि उसके भी अपने अरमान होते हैं, लालसा और उमंग होती है। किन्तु मजबू-के सामने सबको चुप रहना पड़ता है।" ठकुराणी उठ गई थी और चलती वह बोली, "तुम मेरी बेटी हो। क्षत्राणी हो। वह जहर भी हँसते-हँ-पी जाती है। कृष्णा कुमारी का नाम सुना होगा। उदयपुर की ... थी। माँ-बाप की रक्षा के लिए अपने हाथों से जहर पी लिया था।"

ठकुराणी चली गई।

केसर अकेली रह गई। आज उसे दीपक का प्रकाश अच्छा नहीं लगा उसने फूँक मार कर उसे बुझा दिया। झरोखे में घोर अन्धकार छा-तारों का मद्धिम प्रकाश पड़ने लगा। केसर ने अपने नयन बन्द कर लिये।

कल्पना लोक में सागर की लहरों पर उसने अपने आपको ... हुए पाया।

कहीं भी किनारा नहीं। कोई भी सहारा नहीं।

एक परिचित दूरागत ध्वनि—

वह सिहर कर कांप उठी। हड़बड़ा उठी। अपने आपको झरोखे में दे-उसे असीम धैर्य व सान्त्वना मिली।

उसने नीचे झांक कर देखा—शिव निश्चल खड़ा हुआ पहरा लगा रहा है।

कुँवारी रात धीरे-धीरे पाँव बढ़ा रही थी।

केसर सोच रही थी, "क्या सोच रहा होगा यह? क्या मैं फिर इसके सामने जा सकूँगी? नहीं! कौन-सा मुँह लेकर जाऊँगी शिव के-जिसको मैंने प्रेम का वचन दिया। जो मुझे चन्द्रावली के रूप में देख चाहता था। अब वह मुझे पराई बनते देखकर क्या सोचेगा? वह यह

कि मैं गुलाम हूँ और गुलाम का जीवन मालिक के मन की खुशी के लिए ही होता है, ठीक एक खिलौने की तरह।" वह विचलित हो गई। सबकी दृष्टि बचा कर वह शिव के पास आई। भरे हुए स्वर में बोली, "मुझे क्षमा कर दो शिव, मुझे पता नहीं था कि जीवन इतना जटिल है! एक के पीछे कइयों की खुशी जुड़ी है, यदि यह पहले जान पाती तो मैं तुमसे प्यार नहीं करती। इतने भरोसे नहीं देती।"

शिव ने उसे उठाकर कहा, "दुःख क्यों करती हो। माँ-बाप के लिए सन्तान को बलिदान होना ही चाहिए। यही हमारी परम्परा और धर्म है। चाहे माँ-बाप अनर्थ ही क्यों न करें!"

"जब परिस्थिति उत्सर्ग कराती है तब हमारे इरादे टूट जाते हैं। शिव मेरे शब्दों को तुम भावुकता समझ कर आत्मसात् भले ही न करो, लेकिन इतना जरूर कहूँगी कि मुझे तुम्हारे बिना कभी भी सुख नहीं मिलेगा।"

शिव ने उत्तर नहीं दिया।

"तुम दुःखी हो। शायद अब तुम्हें जीना ही गवारा नहीं हो सकेगा, किन्तु इतना ध्यान रहे कि मैं जो कुछ भी कर रही हूँ, मजबूरी से कर रही हूँ।"

केसर चली गई। शिव पत्थर की मूरत की तरह खड़ा रहा।

× × ×

१८

ठाकुर ने अपनी बेटी के विवाह के लिए अत्यन्त अनुचित तरीके से गाँव वालों से रुपये वसूल किये। इस वसूली में बेचारे कई किसान साहूकार के कर्जदार हो गये और दो-चार को अपने खेत भी गिरवी रखने पड़े। एक बार कई किसान ठाकुर के पास फरियाद लेकर गये भी, पर उससे कोई लाभ नहीं हुआ। उल्टा ठाकुर ने उन्हें नमकहराम और गद्दार कहा। दो-तीन जनों

ने देने मे अनाकानी की तो ठाकुर के आदमियों ने उन्हे खूब मारा-पीटा, इतना
विरोधात्मक रवैया खत्म हो गया। हालांकि शिव ने तोताराम के बेटे मुन्ने
को शहर भेजा था कि वहाँ जाकर कांग्रेस के नेता आत्मारामजी से मिले,
क्योंकि आत्मारामजी ने राज्य की कुव्यवस्था के प्रति राजाजी के विरुद्ध
आन्दोलन छेड़ने की धमकी दी थी।

इस वसूली मे ऊमले जाट की घटना अत्यन्त हृदय-विदारक थी।
एक दिन अचानक ठाकुर के चार- पाँच आदमी ऊमले के घर आये। उन्ने
का बेटा उस समय सख्त बीमार था। ऊमले ने उनसे प्रार्थना की कि बखेर
एक पैसा भी नही दे सकता। हाँ, दो-चार दिन में व्यवस्था करके अवश्य दे दूँ
देगा। पर ठाकुर के आदमी नही माने। उन्होंने ऊमले को धमकाना शुरू कर
दिया। ऊमले ने उन्हें कोई जवाब नहीं दिया। बल्कि उसी समय भीतर।
उसकी लुगाई की भयभीत आवाज आई और वह भीतर चला गया।
उसके भीतर जाते ही ठाकुर के आदमी नाराज हो उठे और वे ऊमले के
गाली-गलौज करने लगे। ऊमले ने हाथ जोड़कर कहा, "अभी आप चले जाइए
मेरे बेटे की तबीयत खराब है।" पर वे नहीं माने। लाचार ऊमले को गुस्सा
आ गया और उसके मुँह से एक साधारण अपमान सूचक शब्द निकल गया।
फिर क्या था ! ठाकुर के आदमी उसे बुरी तरह मारने लगा।
उसकी कराह सुनकर उसकी बहू आई। उससे अपने पति को पिटते हुए
देखा गया। उसने तुरन्त चाकू से अपने सिर का 'बोर' काट कर दे दिया।
हाथ की चूड़ियाँ और नाक का काँटा तक दे दिया।
कारिन्दे लेकर चले गये।

आधे घण्टे तक ऊमला बेहोश पड़ा रहा। जब वह होश में आया, तो
उसका बेटा सदा-सदा के लिए बेहोश हो गया था। वह इस सदमे को नहीं
सह सका। वह अपने बच्चे को लेकर रास्तों में भाग चला। उसकी बहू ने
गाँववाले कुछ देर तक नहीं समझे, किन्तु बाद में लोग जान गये कि उस
पागल हो गया है। और एक दिन उसने उन्मादित अवस्था में ठाकुर के
कारिन्दे को जान से मार डाला। लाचार उसे पागलखाने भेज दिया गया।

× × ×

१९

....

शादी की शहनाई बजने लगी।

बड़ी बारात आई। खुद एक दिन के लिए राजाजी भी आये।

सारे किसान ठाकुर की बेगार में पिसते रहे।

बारात मे शराब, अफीम और भांग खूब उड़ी। हवेली की तमाम दासियाँ बारातियों के विलास की शिकार बनी। विवाह सम्पन्न हो गया।

ठाकुर ने दहेज मे धनराशि के अतिरिक्त दीं, पाँच दासियाँ जिनमें नैना भी थी और पन्द्रह दास जिनमें शिव भी था।

बारात लौट पड़ी।

साधूपुर।

विशाल महल।

सुहागरात।

दुल्हिन बनी केसर बरामदे में खडी थी। चाँदनी चारों ओर छिटक रही थी। हवा ठण्डी थी। वह नीचे हो रहे शोरगुल से परेशान थी। ठाकुर केसरी सिंह ने बेटे की विवाह की खुशी में पातुरों की बड़ी महफिल की थी। केसर को यह कुछ भी पसन्द नही था। वह शान्ति चाहती थी, मृत्यु-सा सन्नाटा।

दासी ने आकर दूध रख दिया।

केसर ने नही पिया। वह खडी रही। केसर ने उसे आज्ञा दी, "तुम चली जाओ, मुझे जब जरूरत होगी, बुला लूंगी।

दासी चली गई।

वही नीरवता।

उससे अब अपने अन्तस् की आकुलता नहीं सही गई। वह छत पर आ गई। छत से पातुरों का नृत्य दीख रहा था। वह वासना मे उन्मत्त व्यक्तियों को देख रही थी जो रुपयो के हार उन पातुरों को पहना रहे थे।

तभी गाना बन्द हुआ।

अनूपसिंह ने सोने की इच्छा प्रकट की। एक सुन्दर कुर्सी पर चार दास उसे बिठाकर ऊपर की ओर चले। केसर तुरन्त कमरे में आ गई और घूंघट

खीचकर बरामदे में खड़ी हो गई। आशंका और आतुरता से उसका हृ-
धड़कने लगा। वह दीवार को पकड़ कर खड़ी हो गई।

चार दास आये और अनूपसिंह को पलंग पर सुला गये।

नैना ने आकर कहा, "कुँवर सा आ गये हैं।"

केसर घायल की तरह तड़प उठी। वह चीखना चाहती थी, परन्तु
विवेक ने उसे रोक दिया। पता नहीं क्यों उसके मन और हृदय पर शिव
सलोनी सूरत छा रही थी। वह कल्पना कर रही थी कि वह शिव के
चाँदनी में बैठी हुई है। उसका अपूर्व यौवन अपने उन्माद को आँचल में न
छिपा सका है। कयामत ढा रहा है। उसकी मणिधर की मणि सी दीप्त आँ
अतृप्ति में दहकते अधर! शिव उन्हें निहार रहा है। वह निर्दयी तड़पा-तड़
कर उसके अधरों को पी रहा है और वह खुद उसे बाहुओं में भर कर बाव
बन गई है।

"चलो बेटी, तुम्हारा दूल्हा तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है।"

केसर चली।

फूलों से सज्जित शय्या पर लेटा था—उसका पति।

उसने उसके चरण-स्पर्श किये।

"घूंघट हटाओ।"

केसर खड़ी रही, इस प्रतीक्षा में कि वह उठकर ही उसका घूंघट हटा-
येगा। अब उसकी साँस तेज चलने लगी थी। अनूपसिंह की आँखों में घृ
एक घिनौनी भूख झांकने लगी।

"घूंघट उठाओ कुँवराणी जी!"

केसर ने उसकी ओर देखा। अनूपसिंह उसकी ओर ललचाई नजर से दे
रहा था। इस बार केसर ने उसे कुछ क्षणों तक देखा। उसको लगा कि उस
पति की आँखों में वासना के अतिरिक्त विवशता है। वह उसके पास गई।
पास जाकर गर्दन नीची करके खड़ी हो गई। अनूपसिंह ने उसका घूंघट उठाया।
प्रियतमा के जलते हुए रूप को देखकर वह जड़ हो गया। रुकता-रुकता बोला,
"पास नहीं आओगी?"

केसर उसके पास बैठ गई।

"मुझे इस बोतल में से शराब पिलाओ।"

"नहीं कुँवर सा, शराब अच्छी चीज नहीं।"

"क्यों ?"

"यह आदमी को बुरा बना देती है।"

"नहीं, मुझे यह बड़ा सहारा देती है। पिला दो न !"

केसर ने उसके आग्रह को टालना ठीक नहीं समझा। उसने एक गिलास ?र कर उसे पिला दिया।

"मुझे बिठा दो।"

केसर ने अनूपसिंह को सहारा दिया। वह बैठ गया। तब अनूपसिंह ने ?सर को खींच कर अपने पास बिठा लिया। उसकी बाँहें नाग-फाँस-सी केसर ? उन्मादित पीड़ित यौवन के चारों ओर लिपटने लगीं। अनुभूति हीन पत्थर ?ी प्रतिमा की भाँति निश्चल बैठी रही केसर। अब अनूपसिंह ने उसे प्यार किया। उसे इतने जोर से दरिन्दे की तरह काटा कि वह तड़प उठी।""और ?ात इसी खेल में समाप्त हो गई।

दूसरी रात भी केसर ने अनिच्छा से सब कुछ किया।

तीसरी रात केसर ने एक सत्य को जाना कि अनूपसिंह नपुंसक है। लकवा उसके निचले पूरे हिस्से को मार गया है। तब उसकी दुर्दमनीय प्यास भड़क उठी।

शय्या सजी है।

दो बड़े-बड़े काँच के कलात्मक लैम्प जल रहे हैं।

केसर उदास-सी आहत-सी बरामदे में खड़ी है। आने के बाद उसने शिव को नहीं देखा था। उसने प्रयत्न भी किया, पर शिव उसे टालता रहा। तभी आगई—उसकी दासी सूँडकी। आते ही बोली, "कुँवराणी जी, आज मुझे आपकी नई साड़ी चाहिए।"

"क्यों ?"

"वे लौट आये हैं।" सूँडकी के स्वर में कम्पन था। आँखों में मस्ती।

"तू उन्हें प्यार करती है ?"

"वे मुझे भोत (बहुत) चाहते हैं। अपने जी से भी ज्यादा। देखिए न !" उसने चरण-स्पर्श किया, जैसे वह केसर से पहले ही क्षमा माँग रही है। वह बोली, "मुझे देखते ही कोठड़ी में घुस गये। हाय राम, तनिक भी

नहीं। कुँवराणी जी, पर मैं भी उन्हें कैसे नाराज कर सकती हूँ? उनका
उफ! जीवन मे सबसे मीठा लगता है।"

"नैना से जाकर कह दे, वह तुझे एक धोती दे देगी।"

दासी चली गई।

केसर का हृदय जल उठा। संयम विद्रोह कर उठा।

उसका पति उसके घायल मन को नहीं सहला सकता। उसकी भूख
नहीं मिटा सकता। उसकी प्यास को नहीं बुझा सकता। सचमुच वह श्र
है।...और वह भाग कर दर्पण के सम्मुख गई। उसने अपने आपको देखा।

अप्सरा!

सच, ऐसे यौवन को देखकर ही दाड़िम स्वतः ही फट पड़ता है, क
चटख जाती हैं और तपस्या भोग के रूप में खण्ड-खण्ड होकर अर्पित
हो जाती है।............आदमी जिसे देखकर घायल होकर तड़पता है।
मैं............अभागी! शापित इन्सान की तरह अभिशप्त! मेरे रूप की कि
रियां घूंघट में तड़पकर रह जायेंगी।

गुलामों की हुंकार सुनाई पड़ी।

केसर सावधान हो गई।

गुलामों ने लाकर अनूपसिंह को सदा की तरह पलग पर पटक दि
केसर को लगा—देवता का अभिशाप उसमे लिपटने के लिए आ गया है।
घृणा से अपने पति की ओर देखा। वह एक बेडौल हँसी, हँस रहा था। उस
का कारण केसर नही समझ सकी, बल्कि वह चाँद की ओर देखने लगी।

"नैना!" जोर से पुकारा अनूपसिंह ने।

नैना अनूपसिंह के सामने गर्दन झुकाकर खड़ी हो गई।

"जा, अपनी बाईसा को बुला ला!"

नैना केसर के पास आई। अदब से बोली, "बाई सा, आप चलिए।"

केसर तड़प कर तेज स्वर मे बोली, "कह दीजिए कि उसके पेट में दर्द
वह कुछ देर बाद आयेगी।"

नैना का मुँह भय से विकृत हो गया। वह सहमी-सी पुनः अनूपसिंह
पास आई। आकर उसने केसर के कथन को दुहरा दिया।

"उन्हें जाकर कहो कि हम उनके लिए हीरे की अँगूठी लाये हैं।"

नैना फिर उसके पास आई। केसर ने कह दिया कि वह दर्द के मारे अभी
आ सकती। तब अनूपसिंह ने शराब पीना शुरू कर दिया। उसने अपने
र की अँगूठी को निकाला और बार-बार देखा। देखने पर उसकी मुद्रा में
कृति के भाव उभर आते थे। उसने नैना को पुकारा, "तू जाकर उसे कहती है
नहीं ? उसे जाकर कह कि यहाँ हमारा हुक्म चलता है। हमारे हुक्म को
मानने का मतलब ठीक नहीं होगा।"

नैना ने अनूपसिंह का हुक्म केसर को सुना दिया।

केसर अब उसके पास आई। अनूपसिंह ने दहाड़ कर कहा, "तुम इतनी
री से क्यों आई ?"

"मेरे पेट में दर्द है।"

"दर्द है या मुझसे घृणा है ?"

केसर चुप रही।

"चुप क्यों हो ? शादी के पहले बाप को क्यों नहीं कहा कि मुझे एक अपंग
मत ब्याहो। तब तो तुम्हारा बाप आकर गिड़गिड़ाया, बोला, "मेरी बेटी
ावित्री-अनुसूइया है। मेरी पगड़ी आपके पाँव में है।"""देखो, भविष्य में दर्द
मय देखकर हो।"

केसर ने गहरा मौन धारण कर लिया। अनूपसिंह ने शराब का आधा
गलास और पिया। उसने केसर का हाथ पकड़ कर अपनी बाँहों में खींचा।

केसर ने नयन बन्द कर लिये।

एक चित्र उसके मस्तिष्क में नाच उठा।

एक राजकुमारी थी। रूपनगर की अत्यन्त रूपवती कन्या। उससे एक
दैत्य विवाह करना चाहता था। जब वह दैत्य उसे नहीं पा सका तब उसने
मायावी साँप का रूप धारण करके उसके महल में प्रवेश कर लिया। रूपवती
चीखना चाहती थी, तभी साँप बोला, "चीखने के साथ ही मैं तुम्हें डस लूँगा।"
बेचारी राजकुमारी चुप हो गई। तभी उसका बाप आया और उसने तलवार
से उस मायावी दैत्य का अन्त कर दिया। बेटी बाप की इस वीरता पर मुग्ध
हो गई और उसने अपने बाप की कविता में भी तारीफ की। लेकिन उसका
बाप राज्य का लालची था। वह चक्रवर्ती सम्राट बनना चाहता था। उसका
प्रतिद्वन्द्वी नागपाल था। उसका एक बेटा था सिंहपाल। सिंहपाल को देवता

का शाप था। इसलिए उसका निचला आधा अंग पत्थर का था। ... का दीवाना रूपवती का बाप उसे परास्त करना चाहता था। कई बार ... भी किये गये पर रूपवती के बाप को हर बार मुँह की खानी पड़ी। ... लालसा को सफल होते न देखकर उसने नागपाल को कहलवाया कि वह ... भी तरह उसकी आधीनता स्वीकार कर ले। नागपाल ने उससे निवेदन ... कि वह अपनी पुत्री का विवाह मेरे शापित पुत्र से कर दे तो मैं उसकी ... नता स्वीकार कर सकता हूँ। रूपवती का बाप तुरन्त तैयार हो गया।

रूपवती का विवाह सिंहपाल से हो गया।

उसके पश्चात् की कहानी बड़ी मार्मिक थी।

रूपवती श्रृंगार करके बैठती थी। धीरे-धीरे वह पूर्ण यौवना अपनी ... पिपासा में दहन होने लगी। कठोर सामान्ती शासन और उसका उन्माद! ... रात-रात भर पगली की तरह महलों की छतों पर दौड़ती रहती थी। एक ... उसने अतृप्ति की दुर्निवार और दुःसह्य जलन में विषपान कर लिया।

केसर का शरीर पसीना-पसीना हो रहा था।

वह भावाभिभूत सी बैठी रही।

उसे लगा कि जलती हुई उँगलियाँ उसके अंगो पर दौड़ रही हैं।

उसके अधर पर किसी के होठ झुके हैं।

वह भी अपने पति से लिपट गई।

कुँवारी रात किसी पातुर की रागिनी से उन्मत्त हो उठी।

कुँवारा यौवन बीज धारण के लिए तड़प उठा।

विचित्र नशा केसर के मन पर छा गया। वह विस्मृत सी अपने ... समर्पण करने लगी। नारी की स्वाभाविक पिपासा कोमलतम हो गई। ... गई।

"तुम मुझे बहुत प्यार करते हो?"

"हाँ कुँवराणी, अपने प्राणों से भी अधिक चाहता हूँ।"

"सच?"

"आँखें खोलो, देखो मैं तुम्हारे लिए रत्नमयी अँगूठी लाया हूँ।"

"मुझे पहना दो।"

"अरे वह नीचे गिर गई।"

"उठाओ न।"

"कैसे उठाऊँ। तुम नहीं जानती…!"

केसर के नयन खुल गये। स्वप्न टूट गया। दर्द फूत्कार कर उठा। यौवन
रस पड़ा।

"छोड़ दो मुझे!" वह बन्धन मुक्त होकर खड़ी हो गई। चिल्लाकर वह
ली, "मुझे नहीं चाहिए तुम्हारी ये रत्नजड़ित अंगूठियाँ, सोने के हार, धन
दौलत और सुख। मुझे चाहिए—पौरुषमय पति। एक सम्पूर्ण पुरुष!" कह
र वह बाहर चली। अनूपसिंह उसे पकड़ने के लिए झपटा, पर वह पलंग के
चे गिर गया। नैना जोर से चिल्लाई। दास आये और अनूपसिंह को वापस
ठाया। उसने तुरन्त अन्तःपुर में जाने की इच्छा प्रकट की। दास उसे ले
ले। अपनी माँ सूरज कुँवर के समक्ष अनूपसिंह ने केसर की उद्दण्डता का
र्णन किया।

सूरज खूँखार स्वभाव की थी। कूटनीतिज्ञ और चतुर थी। तुरन्त केसर
पास आकर बोली, "पहली गुस्ताखी है, इसलिए माफ करती हूँ, वर्ना कोड़े
खाल खिचवा दूँगी। हमारे कुटुम्ब में पत्नियाँ सर्वस्व बलिदान करती हैं, न
क लूले-लँगड़े या कुरूप पति की उपेक्षा।"

दूसरे दिन से ही चार गुलाम हिजड़े केसर के कमरे के आगे पहरेदार के
प में आ गये। अब केसर उसकी आज्ञा के बिना बाहर-भीतर भी नहीं जा
कती थी।

इसके साथ ही सूरज ने तुरन्त अपने बेटे के लिए दूसरे कमरे में एक अन्य
ासवान का प्रबन्ध कर दिया। अब वह केसर की ओर देखता भी नहीं था।
ेसर महल में कैद रह कर तड़प उठी। उसके स्वभाव में विचित्र चिड़चिड़ापन
ा गया। वह बात-बात में अपनी दासियों को मार-पीट देती थी। भोजन नहीं
रती थी। पानी नहीं पीती थी।

नैना बेचारी परेशान थी। जब कभी वह केसर से बातचीत करती तो उसे
ेसर इतना ही कहती थी, "मैं मरना चाहती हूँ। मुझे मौत क्यों नहीं आती?"

नैना उसे निरन्तर समझाती रहती। जब केसर अत्यन्त उत्तेजित हो जाती
ब वह शिव का नाम लेती। कहती, "शिव, तुम्हारे लिए बहुत दुःख करता है।

कहता है, भाग्य बड़ा सबल होता है। आदमी की हर चाहत कभी भी पूरी नहीं होती।"

केसर उससे मिलने के लिए इच्छा प्रकट करती।

नैना फिर कहती, "शिव तुमसे मिलना नहीं चाहता।"

"क्यों ?"

"वह कहता है कि यहाँ का हर व्यक्ति तुम्हें अपमानित करने की ताक में है। फिर मैं खुद एक गोला हूँ। मेरे जीवन का यहाँ कोई मूल्य नहीं है। लेकिन समय आने पर हम जरूर मिलेंगे।"

शिव की बात से केसर को सन्तोष मिलता। वह महल के एकान्त कोने में उपेक्षिता की तरह पड़ी रहती। इसके विपरीत अनूपसिंह जीवन के उन्माद और विलास के चारों ओर लिपटता रहता।

नैना आकर उसके वीभत्स जीवन की घिनौनी घटनाएँ सुनाती—वह आजकल अपने हवा महल में पातुरों का नृत्य कराता है। उसके खास नौकर व अन्य मित्र उन युवतियों के साथ व्यभिचार करते हैं और वह देख-देख कर विचित्र तरह से प्रसन्न होता है। उसकी मुद्रा इतने विकृत उल्लास से दीप्त हो जाती है जिसे देखकर हृदय काँप जाता है।

केसर घृणा से इन सब बातों पर थूक देती।

दिन बीतते रहे।

× × ×

सूरज कुँवर और ठाकुर केसरीसिंह में झड़प हो गई।

बात साधारण थी, पर वह सूरज के लिए पीड़ादायक थी और कुछ हद तक अपमानसूचक भी।

राजधानी में एक सेठ था। परचून का व्यापारी। साधारण और निहायत ही फूहड़। उसकी बीबी चन्दा की कल किसी ने ठाकुर से भेंट करा दी। वह एक चतुर एवं व्यापारिक बुद्धि की तेज स्त्री थी। नैतिक आदर्शों के परे वह जीवन के भौतिक सुख-साधनों की उपलब्धि में अधिक सजग थी। उसने अपने रूप का जादू इतने जोर से चलाया कि ठाकुर सूरज की महत्ता को भी बिसार बैठे। सूरज यह सहन न कर सकी। जब ठाकुर ने अपने प्रभाव से चन्दा

ाई को राज्य का खजाञ्ची बनाया और उसकी बहू को राजाजी से मिलाकर ाँव में सोने का गहना दिलवाया तो वह चिढ़ गई।

स्वयं राजाजी चन्दा पर आसक्त हो गये। उसके रूप-जाल में इस तरह फँसे कि धीरे-धीरे वह स्त्री राज्य-संचालन में भाग लेने लगी। एक दिन उसने महाराजा से कहकर सूरज कुँवर के भाई को, जो राज्य की रेलवे का जनरल मैनेजर था, पद से हटवा दिया। सूरज जैसी खूँखार स्त्री यह नहीं सह सकी। उसने अपने पति को कहा। पति ने उसकी प्रार्थना को अनसुना कर दिया। तब वह गुस्से में पति की आलोचना करने लगी। लाचार केसरीसिंह ने उसे जोर से डांट दिया और उसे हिदायत दी कि वह अपनी औकात को समझे।

सूरज कुंवर ने आवेश में ठाकुर के प्रति अपमानसूचक शब्द निकालते हुए चन्दा के बारे में कहा, "उस साली रंडी ने आप दोनों को मूर्ख बना रखा है।"

ठाकुर तैश मे आ गया। उसने सूरज कुंवर के गाल पर चांटा मार दिया और कड़क कर कहा, "मैं ठाकुर हूँ और तुम मेरे पाँव की जूती। जूती को बदलते चन्द पल लगते हैं।"

सूरज की ईर्ष्या बढ़ गई।

उसने मन ही मन प्रण किया कि वह अपने इस अपमान का बदला लेगी। जब ठाकुर ने उसके चांटा मारा था, तब एक दासी ने यह सब देख-सुन लिया था। उसने यह बात तमाम महल में फैला दी। फलस्वरूप सभी दासियाँ सूरज को व्यंग भरी दृष्टि से देखने लगी। सूरज यह सब नहीं सह सकी। उसका दर्प भड़क उठा। उसके अंग-अंग में घृणा की ज्वालाएँ ललक उठी। अपमान की अग्नि-शिखाएँ उसे विद्रोह करने पर विवश करने लगी।

रात की नीरवता में सूरज विक्षिप्त-सी खड़ी है।

चाँद ढल गया है। विपरीत दिशा में तिमिर बढ़ कर वहाँ की समस्त कृतियों को अपने में आत्मसात् कर रहा है। ठाकुर के महल से किसी पातुर का हल्का-हल्का मीठा स्वर आ रहा है। यह स्वर जहर की मर्मान्ति व्यथा को जन्म देकर उसके अंग-प्रत्यंग मे लहरें मार रहा है। उसकी घृणा और द्वेष पर गहरा रंग चढ़ा रहा है। वह सोच रही है कि इतनी बड़ी घटना के बाद भी ठाकुर निर्विकार प्राणी की तरह जीवन के साधारण उपक्रम में तन्मय है। उस पर उसकी

व्यग्रता का किंचित् भी प्रभाव नहीं है। वही आमोद-प्रमोद और वही विलास!

तभी उसकी विशेष दासी ने आकर कहा, "ठकुराणी सा ठकुराणी सा!" सूरज सावधान हो गई।

"ठकुराणी सा, ठाकुर सा ने आपके मोतियों के हार को पातुर को दे दिया है।"

"मेरे!"

"हाँ, जो आपने ठाकुर सा को उनके जन्म-दिन पर दिया था।"

सूरज आहत साँपिन-सी भड़क उठी।

वह भाग कर ठाकुर के पास गई। कड़क कर बोली, "मेरे हार को आपने इस रंडी को क्यों दिया?"

"मेरी मर्जी!"

"ठाकुर सा, आप यह भूल रहे हैं कि मैं कौन हूँ! कौन से कुटुम्ब से मेरा सम्बन्ध है! कहीं ऐसा न हो कि मेरा और आपका संघर्ष इस घर को जला दे!"

ठाकुर का पौरुष यह चुनौती सहन नहीं कर सका। वह कड़क कर बोला, "मैं आग से नहीं डरता। किन्तु वह आग तुम्हें ही जला कर राख देगी!"

सूरज ने कोई उत्तर नहीं दिया।

दोपहर को ठाकुर चन्दा को लेकर महल में आये। चन्दा की शान और उसकी शोहरत देख कर सूरज जल उठी। ठाकुर उसके आगे-आगे थे। राज्य के कई उच्चाधिकारियों के साथ राज्य के दीवान भी थे।

वे सब बैठकखाने में बैठ गये। सूरज कुँवर ने सुना कि चन्दा आजकल राज्य-व्यवस्था में भाग लेती है। उसने महाराजा को बहुत मोह लिया है। यदि वह उनसे कोई प्रार्थना कर दे तो वह तुरन्त स्वीकार हो जाती है। वह चाहे जिसे बना सकती है और चाहे जिसे मिटा सकती है। और तो और, उसके पति को भी उसकी जी हुजूरी करनी पड़ती है। उसने अपने पति को उसके सामने घिघियाते देखा। उसके मुख पर चापलूसी की रेखाएँ देखी। और तो और जब चन्दा को ठाकुर को यह कहते हुए सुना कि 'आप में इतनी योग्यता नहीं है कि आप राज्य के किसी ऊँचे पद पर आसीन हों' तो ठकुराणी

से में लाल-पीली हो गई। उसने चाहा कि वह जाकर उस छिनाल को मारे।

साँझ तक चन्दा उन बड़े-बड़े अधिकारियों, उमरावों व सामन्तों के बीच म्मान प्राप्त करती रही। सूरज जालियोंदार खिड़की से जासूस की तरह खती रही। जब वे सब चले गये, तब उसने प्रतिहिंसा से अपनी गर्दन को टका दिया।

रात को शराब पीकर ठाकुर लौटा।

सूरज ने व्यंग्य से कहा, "आ गये उस छिनाल के तलवे सहला कर ?"

ठाकुर ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह शयनकक्ष की ओर बढ़ गया। शिव ीपक के प्रकाश में अपनी कोठरी में लोकमान्य तिलक का गीता-दर्शन पढ़ रहा ा। तभी एक गोले ने आकर कहा, "ठाकुर सा, तुझे याद कर रहे हैं।"

शिव उठा। चला। ठाकुर को अभिवादन किया।

' शिव मैंने सुना है कि तुम पढे-लिखे हो। मोटी-मोटी किताबें पढ़ते हो। या यह सच है ?"

"हाँ ठाकुर सा !"

ठाकुर ने इधर-उधर ताक-झाँक की और वह बोला, "क्या तुम मुझे पढ़ा सकते हो ?·· तुम नही जानते कि आज मुझे कितने अपमान का घूँट पीना पड़ा है। मैं थोड़ा भी पढा-लिखा होता तो आज राज्य का दीवान बन जाता। चन्दा, मेरे भाई सा को कह कर मुझे क्या से क्या नही बना देती !"

"मैं यह गुस्ताखी कैसे कर सकता हूँ ? आप मेरे मालिक हैं। मैं आपको विद्यादान कैसे दे सकता हूँ ?"

"तुम समझते क्यों नहीं ? क्या मैं किसी बाहरी आदमी से पढ़ूँ· ? नहीं, नही, ऐसा नही हो सकता ! ऐसा होने से हमारे मान-सम्मान को ठेस लगती है। हमें बहुत पीड़ा होगी !"

"गुरु के बिना ज्ञान नही मिलता ठाकुर सा !"

"मैं जानता हूँ। क्या तुम मेरे गुरु नहीं बन सकते ?"

"क्या कहते हैं आप ? जरूर आज आपने अधिक पी ली है।"

"इतनी पी है जैसी जीवन में कभी नही पी।···देखो, यह बोतल मुझे दे दो। मैं थोड़ी और पीऊँगा। तुम आज से मेरे गुरु हो गये। मैं तुम्हारे नित्य सवेरे चरण-स्पर्श करूँगा शिव, तुम आज से मेरे गुरु हो गये।" कह कर

ठाकुर गिर पडा। शिव थोड़ी देर तक करुणाभरी दृष्टि से ठाकुर को ... रहा, उसकी भगिमा उस महात्मा की तरह थी जो किसी पतित को ... हो। उसने ठाकुर के पाँवों को ठीक से किया। तभी ठाकुर की आँखें मुदीं।

"बोतल कहाँ है ?"

"ठाकुर सा ! अधिक शराब पीना हानिकारक है।"

शिव आत्म-चितन मे यह भूल गया था कि वह गुलाम है। वह ठाकुर का चाकर है जहाँ हुक्म की केवल तामील की जाती है।

"तू गोला होकर मुझे उपदेश देता है ? माद........के...मे दिर्व दूँगा। जा उल्लू के पट्ठे—मेरी बोतल ला !"

शिव का गुरुत्व हवा हो गया। उसकी आत्मा का महामानव जो युगों से परिस्थिति द्वारा दबा हुआ था, वापस सो गया और उसका वही गुलाम जाग्रत हो उठा जो केवल हुक्म बजाना जानता था। उसने तुरन्त शराब बोतल खोली और एक गिलास भर कर ठाकुर को थमा दिया।

ठाकुर पूरा का पूरा गिलास पी गया।

नीचे अनूपसिंह अब भी पातुरों के नृत्य मे निमग्न था।

ढोलक की तेज आवाज आ रही थी।

शिव अब भी खडा था।

केसर अपने कमरे में खम्भे का सम्बल लिये खड़ी थी।

शिव उसे देखता रहा। आज उसे आये चार-पाँच माह हो गये हैं, इ बीच मे उसकी केसर मे यदा-कदा भेट हो जाती थी। कभी भी निश्चिन्तत से या बैठकर सुख-दुःख की बातें नही हुईं। शिव की इच्छा हुई कि गीतों नृत्य की थिरकती तन्मय दुनिया मे वह उसके पास चला जाय क्योंकि अच्छा मौका है।

ठाकुर बहकता-बहकता सो गया था। शिव भी वहाँ से उठा। धीरे-धीरे अनूपसिंह के महल की ओर बढा। बड़े महल में अनूपसिंह का अपना अलग महल था। आजकल इस महल मे अनूपसिंह अपने मित्रों के साथ शराब और विलास के सागर में डूबा रहता था। शहर से अच्छी से अच्छी पातुरें बुलाई जाती थीं। कुछ बदमाश गाँवों से छोकरियों को बहला कर लाते थे और ... -रिन्दों के हाथ में सौंप देते थे।

शिव ने अनूपसिंह के महल में प्रवेश किया।

दीवार अन्धकार में लुप्त-सी थी। वह चुपचाप उसी दीवार के सहारे की ओर बढ़ता गया। उसने देखा—एक नग्न नारी पड़ी है और उसे पसिंह दरिन्दे की तरह देख रहा है। उसका एक मित्र उसके जिस्म से खेल है और वह राक्षस की तरह अपने ऊपर के हिस्से को हिला रहा है। उसकी वहशियत चरम सीमा पर पहुँच गई, तब अनूपसिंह पागल की रह उछल कर उस नारी को पीटने लगा। पीटते-पीटते वह इतने जोर से ा कि शिव कांप उठा।

हंसने के साथ ही उसने अपने मित्र से दांत किटकिटा कर पूछा, क्यों, कैसा आनन्द रहा ?"

"कुँवर सा, आनन्द सारा आपको ही आया।"

अनूपसिंह ने उसे दर्प से देखा। वह बहुत ही मूर्ख लग रहा था।

शिव ऐसा वहशियाना दृश्य अधिक देर तक नहीं देख सका, वह उठकर चला या। महल के आगे एक घोड़ा आकर रुका। उसमें से एक सवार उतरा।

पहरेदार ने उससे पूछा, "कहाँ से आ रहे हैं आप ?"

"सेठानीजी के यहाँ से।"

"सेठानी चन्दाबाई के यहाँ से ?"

"हाँ, जी ?"

पहरेदार तुरन्त ठाकुर के पास गया। ठाकुर सा बेहोशी में बड़बड़ा रहे े। पहरेदार ने उसके कन्धे हिलाकर कहा, "सेठानीजी का आदमी आया है।"

ठाकुर ने नहीं सुना।

"ठाकुर सा, सेठानी चन्दाबाई का आदमी····!"

"चन्दा, कहाँ है चन्दा ?" ठकुर एकदम सावधान होकर बोला।

"अन्नदाता, चन्दाबाई का आदमी आया है। गढ़ के बाहर खड़ा है।" पहरेदार ने गर्दन झुका दी।

"उसे भीतर ले आओ।"

तब तक यह खबर सूरज को मालूम हो गई थी। सूरज आगन्तुक के पास गई। उससे आने का कारण पूछा। उसने विनम्रता से गर्दन झुकाकर कहा, "मैं बताने में असमर्थ हूँ।"

सूरज जल उठी। उसने जलती दृष्टि से आगन्तुक को देखा और कहा, "फिर आप ठाकुर सा से भी नही मिल सकते।"

"जो हुक्म!" कहकर आगन्तुक चलने लगा।

"ठहरो!" नाटकीयता से ठाकुर ने प्रवेश किया।

आगन्तुक रुक गया। सूरज वही खड़ी हो गई।

आगन्तुक ने उतर कर ठाकुर को सलाम किया। वे दोनों कक्ष की ओर चले। सूरज ने उन दोनों का साथ दिया। आगन्तुक ने ठाकुर को रास्ते में ही कहा, "बात गुप्त है ठाकुर सा!"

"ठकुराणी तुम जाओ।"

"मैं नही जाऊँगी"

ठाकुर ताव में आ गया, "जबान लड़ाती हो? मैं कहता हूँ जाओ··· ····जाओ।"

ठकुराणी चली गई। लेकिन उसने जासूसी करनी नही छोडी।

वह खड़ी हो गई—छिपकर।

आगन्तुक ने कहा, "सेठानीजी ने यह पर्चा भेजा है। उन्होंने अभी-अभी रुपये मँगवाये हैं?"

"कितने रुपये मँगवाये हैं?"

"बीस हजार।"

"क्यों?"

"यह सब पर्चे में लिखा है।"

"तुम पढ़ो।"

"जो हुक्म!" कह कर आगन्तुक ने पर्चा पढ़ना शुरू किया—

"श्रीजी ठाकुर सा,

"अर्ज है कि मुझे इसी समय बीस हजार रुपयों की जरूरत है, आप मेरे आदमी के साथ भिजवा दें। आपने यदि नहीं भिजवाये तो मैं समझूँगी कि आप मुझे प्यार नहीं करते हैं। यह आपकी परीक्षा है।

—चन्दा"

आगन्तुक सिर झुका कर खड़ा हो गया।

ठाकुर कुछ देर तक विचारता रहा। इसके बाद उसने अपने दास को बुलाया। दास आकर खड़ा हो गया।

ठाकुर ने कहा, "जा, ठकुराणी सा को बुला ला।"

दास बाहर जाता, इसके पहले ही ठकुराणी ने कक्ष मे प्रवेश कर लिया। वह रोष की प्रतिमा बन खड़ी हो गई। उसकी भृकुटियाँ तनी हुई थीं।

ठाकुर ने आते ही उसे कहा, "बीस हजार रुपये चाहिए।"

"क्यों ?"

"जरूरत है !"

"उस छिनाल के लिए ?"

"ठकुराणी !" ठाकुर क्रोध से तडप उठा।

"मैं एक पाई भी नही दूंगी !" ठकुराणी के स्वर मे दृढ़ता थी।

"तुम हद से आगे बढ़ रही हो !"

"और आप सिर के बल चलने की क्यों चेष्टा कर रहे है ? बीस हजार रुपये उस गईबीती के लिए मैं नही दे सकती।"

ठाकुर ने आवेश मे कहा, "मैं कहता हूँ कि चुपचाप रुपये लाकर दे दो।"

"नही दूंगी !"

"ठकुराणी !" ठाकुर ठकुराणी की ओर बढ़े। ठकुराणी ने चिल्लाकर कहा, "मेरे हाथ मत लगाना। देखिए, ठीक नहीं रहेगा।"

उसने तुरन्त दो दासों को बुलाया और हुक्म दिया, "इस हरामजादी को कोठरी में बन्द कर दो !....सुनते हो, जाओ !" ठकुराणी ने चिल्लाना चाहा। ठाकुर ने उसका मुँह एक कपड़े से बन्द कर दिया। दासों ने उसे एक कोठरी में बन्द कर दिया। आगन्तुक बीस हजार रुपये लेकर चला गया।

लेकिन यह घटना तुरन्त ही सारे महल में फैल गई। केसर ने भी सुनी। उसने तुरन्त अनूपसिंह को कहलवाया। अनूपसिंह ने उससे मिलने से एकदम इन्कार कर दिया। तब उसने शिव को बुलाया। सारी स्थिति उसे समझाई। शिव ने एक कूटनीतिज्ञ की तरह सोचकर बताया कि सूरज कुँवर को मुक्त कर दिया जाय। वह खुद सूरज कुँवर के पास गई। उसने उसे अंधेरी कोठरी से निकाला, तब वह अनूपसिंह के पास गई। उसे डांटा और उसकी गैरत को ललकारा। केसर वापस अपने कक्ष में आ गई।

सूरज कुँवर ने बन्दूक हाथ में ली और अपने विश्वासपात्र आदमियों को लेकर वह ठाकुर के कक्ष में जा पहुँची।

ठाकुर गहरी निद्रा में सोया हुआ था।

ठकुराणी ने बन्दूक को भरा और उसे खत्म करने के लिए ज्योंही निशाना बाँधा त्योंही उसके विवेक ने उसे रोक दिया। किन्तु खून उसके सिर पर सवार था। उसने कुछ देर तक कक्ष की निर्जीव दीवारों एवं अपने विश्वासी आदमियों को देखा। तब उसने उसे युक्ति से समाप्त करना चाहा। उसने ठाकुर को आहिस्ते से उठाया और महल की खिड़की से फेंक दिया।

ठाकुर नीचे गिरते ही मर गया। नशे में उसके मुँह से चीख भी नहीं निकली। इसके बाद सूरज ने अपने आदमियों को कई गुप्त आदेश दिये और खुद वापस अँधेरी कोठरी में चली गई। बाहर से उसने उसे बन्द करा लिया।

सूरज के कोठरी में जाते ही सारे महल में ठाकुर की मौत का सनसनी-खेज समाचार फैल गया। उस दुखान्त समाचार के साथ एक बात सभी गढ़ वालों ने सुनी कि ठाकुर सा नशे में चूर होकर खिड़की से कूद पड़े। ठाकुर के पुराने चाकर इस समाचार से शोकातुर हो उठे। देखते-देखते अनूपसिंह भी घटना-स्थल पर हाजिर हो गया। केसर ने खिड़की के झरोखे से उस भीड़ को देखा। ठाकुर का सिर फट गया था। एक दास ने कोठरी में जाकर सूरज को खबर दी, किन्तु सूरज ने आने से इनकार कर दिया।

लाश को भीतर लाया गया।

दूसरे दिन धूमधाम से ठाकुर की लाश जला दी गई।

सूरज कुँवर ने काले वस्त्र पहन लिये, चूड़ियाँ तोड़ ली और उसने ठाकुर के गम के मारे तीन-चार दिन भोजन नहीं किया। वह रहस्य उस भयानक चहारदीवारी में रहस्य बन कर ही रह गया।

अपंग पुत्र की स्वामिनी बनी सूरज।

केसर के प्रति उसके मन में आन्तरिक घृणा थी ही। फिर केसर अनूपसिंह की निरन्तर उपेक्षा करती रहती थी। कई बार सूरज ने केसर को समझाया भी। उसके पतिव्रत धर्म और मानवीय भावनाओं की दुहाई भी दी, किन्तु केसर ने उसकी एक भी नहीं मानी। उसने सास के चरण छू कर कहा, "स्त्री को प्रत्येक दुर्बलता का वास्ता देकर उसके भाव-लोक को छूआ जाता है। नैतिक

आदर्शों, सामाजिक बन्धनो व धर्मिक घोषणाओं द्वारा उसके जीवन को उस चरम सत्य व परम आनन्द से वंचित रखा जाता है जिसका सम्बन्ध इहलोक से है।"

सूरज को वहू का यह उपदेश रुचिकर नहीं लगा। उसने विनम्रतापूर्वक आज्ञा दी, "तुम इस कुटुम्ब की वहू हो, इस घर और कुटुम्ब पर तुम्हारा अधिकार भी है, किन्तु इसके साथ इस बात का भी ध्यान रहे कि यहां केवल मेरी चलती है। मैं जा चाहूँगी, वही तुम्हें करना पड़ेगा। जोर-जबरदस्ती करूँ इसके पहले ही तुम्हे मेरे बेटे से क्षमा मांग लेनी चाहिए।"

"क्षमा और अक्षमा का प्रश्न ही नही उठता। प्रश्न उठता है कि दोष किसका है ? मेरा या आपके पुत्र का ?"

"दोष प्रभु का है। उसने ही मेरे बेटे को यह भयानक बीमारी दी।"

मैं इसे मानती हूं। प्रभु ने आपके बेटे को बीमारी दी। आप यह जानती थी कि आपका बेटा उस पौरुष से वंचित है जो विवाह के उपरान्त निहायत ही जरूरी है। फिर आपने उसका विवाह क्यों किया ? फिर आपने एक लड़की के जीवन से खेला क्यों ?"

सूरज कुंवर की आंखों से आग बरस पड़ी। समीप पडी पत्थर की मूर्ति को मजबूती से पकड कर उसने कहा, "लाछन लगाने से पहले अपने बाप से पूछ लिया होता, जो हाथ जोड़कर मेरे सामने गिड़गिडाया था। मेरे बेटे के लिए, एक नही, तीन सौ छप्पन लड़की वाले घूमते थे। दस-बीस अभी भी आते हैं। मेरा बेटा मामूली ठिकाने का मालिक नही है।"

"फिर दो-चार को इस कैद मे और ले आइए।" केसर ने भड़क कर कहा, "कर दीजिए न तबाह उन्हें भी !"

सूरज कुंवर ने उसे कोई उत्तर नही दिया।

वह सीधी अनूपसिंह के कमरे में पहुँची। उसे केसर के बारे में कह कर अपने मन का विचार सुनाया कि वह उसका दूसरा विवाह करने वाली है। दूसरे विवाह की घोषणा सूरज ने अपनी दासियों के सामने की। बात सारे महल में फैल गई।

उसके चौथे दिन महाराजा खेतसिंह का जन्म दिन था।

अनूपसिंह व अन्य बड़े अधिकारी शहर चले गये।

केसर ने बीमारी का बहाना बना लिया। शिव को चलने लिए कहा ही नही गया।

महीनों के उपरान्त शिव और केसर मिले।

शिव ने कहा, "तुम्हारी सास तुम्हारे पति का दूसरा विवाह कर रही है।"

"मैं जानती हूँ।"

"तुम्हें इसका विरोध करना चाहिए।"

"मैं इसका विरोध नहीं करूँगी।

"क्यों ?" विस्मय के साथ पूछा शिव ने।

"इसलिए कि मैं चाहती हूँ कि वह मेरा स्पर्श भी न करे।"

"लेकिन तुम ठकुराणी को जानती नही हो। वह बड़ी खूंखार है।"

"कैसे ?"

"एक रहस्य बताता हूँ। ठाकुर सा नशे में खिड़की से कूदे नही। उसे तुम्हारी सास ने गिरा दिया था। यह औरत अत्यन्त घृणामयी है। मुझे डर लगता है कि कहीं यह तुम्हे ही जहर न दे दे।"

"जरूर दे दे! मुझे दुःख नही। ऐसे जीवन से मृत्यु भली है।"

शिव ने दुःख से कहा, "मुझे देखो न, केवल तुम्हारे लिए इस नरक में हूँ, नही तो मैं कभी का भाग जाता। जीवन मे इस तरह आदमी दो घड़ी भी साँस नही ले सकता। तुम अच्छी तरह यहाँ की यातनाओ से परिचित हो। इन धूप और हवाहीन कोठरियो मे रहना, दिन-रात परिश्रम करना! कल मुझे दिन भर भार ढोना पड़ा। परसों धूप मे खेत से धान लाना पड़ा और रात के समय नये ठाकुर ने जूतों से पिटवाया और....।"

"मारा क्यों ?"

"मारा इसलिए कि उसके मन मे किसी को पीटने की आ गई। उसने अपने साले भोपालसिंह से कह रखा था कि जो कोई मेरे कक्ष के आगे से सबसे पहले गुजरे, उसे दस जूते मेरे सामने लगा दो। यह बड़े आदमियो की सनक है। फिर भी सहता हूँ, सिर्फ तुम्हारे सामीप्य-सुख के लिए। केसर, मुझे विश्वास है कि तुम मेरी हो!"

केसर ने शिव के कन्धे पर अपना सिर रख दिया। वह फफक कर रो पड़ी, "मेरा भाग्य बहुत खराब है। मैं जीते जी मर गई। मैं यहाँ से भागना

चाहती हूँ। मैं यहाँ से भागना चाहती हूँ।"

"यह असम्भव है। ऐसा नहीं हो सकता।"

"फिर हम दोनों रामू-चनणा की तरह कुए में कूद मरें।"

"नहीं! मरने से क्या होगा? रामू-चनणा की कहानी अमर है और हम दोनों की मौत का यहाँ पता ही नहीं चलेगा। फिर इस मृत्यु से हमें एक दूसरे की प्राप्ति भी नहीं हो सकती।"

"प्राप्ति इस जन्म में सम्भव नहीं है।"

"है!" शिव ने आत्मविश्वास के साथ कहा, "कांग्रेस की शक्ति बढ़ रही है। मैं शहर गया था। महात्मा गाँधी कहते हैं, हम जल्दी ही देश को गुलामी से छुटकारा दिला देंगे। हम आजाद हो जायेंगे।"

"सच?"

"हाँ केसर, हम आजाद हो जायेंगे। तब इस भूमि पर कोई किसी का गुलाम नहीं रहेगा। इस चहारदीवारी में सड़ती जिन्दगियाँ खुली हवा में साँस लेंगी। न तुम्हें अवांछित पति के पीछे मरना पड़ेगा और न मुझे हजारों अरमान लिये तड़पना होगा।"

"वह दिन जल्दी क्यों नहीं आता?"

"आयेगा, जरूर आयेगा। कांग्रेस की शक्ति बढ़ रही है।"

अप्रत्याशित केसर का ध्यान ठाकुर की मृत्यु पर चला गया। वह शिव का हाथ पकड़ कर बोली, "तुम्हें कैसे पता कि ठाकुर सा की हत्या ठकुराणी जी ने की है?"

"मैंने यह सब अपनी आँखों से देखा था।"

"फिर तुम चिल्लाये क्यों नहीं?"

"चिल्लाने से मेरी जान थोड़े ही बचती।"

"मैं इसकी शिकायत राजाजी से करूँगी।"

"ऐसा मत करना केसर!"

"क्यों?"

"क्योंकि ठकुराणी का इस महल में राज्य है। उसके हुक्म के बिना यहाँ का पत्ता भी नहीं हिलता है। तब वह तुम्हें इस राज के खुलने पर कैसे जिन्दा छोड़ सकती है?"

"फिर ?"

"हम बड़े लाचार हैं। हम तमाशा देखने वालों की तरह हैं। वे हँसे तो हम भी हँस दिये और वे रोये तो हम भी रो दिये।"

केसर ने शिव की आँखों में आँखें गड़ाते हुए कहा, "मैं एक तरह से भाग्यशाली भी हूँ। मैं अपना सब कुछ तुम्हारे लिए ही रख छोड़ूंगी।"

और वह शिव की बाँहों में लिपट गई।

× × ×

२१

नैना की तबीयत तीन दिनों से खराब थी। ज्वर आ गया था। शिव वैद्य के पास गया था। उसने दवा भी दी थी, पर कोई असर नहीं हुआ। शिव इससे चिन्तातुर हो उठा। वह अनूपसिंह के पास गया। प्रार्थना की, "मैं अपनी माँ को राजधानी के बड़े अस्पताल ले जाना चाहता हूँ। मुझे कुछ रुपया चाहिए।"

अनूपसिंह उसकी यह बात सुनकर हँस पड़ा। उसकी हँसी दुष्टता से भरी हुई थी। उसकी आकृति खल-नायक की तरह भाव-शून्य थी।

"आप हमारे अन्नदाता हैं। हमारे जीवन को····!"

बीच में ही अनूपसिंह बोला, "मैं तुम्हारी जान की रक्षा कर सकता हूँ। उसके लिए कुछ खर्च भी हो जाय तो चिन्ता नहीं, पर उस बुढ़िया के लिए एक कौड़ी भी खर्च नहीं कर सकता।"

शिव ऐसा निर्दयी उत्तर सुनकर तड़प उठा। उसकी इच्छा हुई कि वह इस दुष्ट को पटक कर लातों से कुचल दे। उसने क्रोध से अनूपसिंह को घूरा। अनूपसिंह उसकी आँखों के भावों को भाँप गया। उसकी दृष्टि की प्रतिहिंसा को समझ गया। काँपता हुआ वह बोला, "तुम इस तरह चुप क्यों हो? क्या चाहते हो? अरे कोई है!"

"अन्नदाता ! प्राण कभी छोटा और बड़ा नहीं होता। बड़ी और छोटी तो काया होती है। इसलिए आपसे प्रार्थना है कि मेरी माँ के प्राणों की रक्षा की जाय।"

अनूपसिंह कुछ बोलना चाहता था, उसी समय अनूपसिंह का सेवक भोपालसिंह आ गया। वह सिर झुका कर बोला, "हुक्म अन्नदाता !"

"इस साले को बाहर निकालो।"

"क्यों ?"

"बस, इसे मेरी आँखों से दूर कर दो।"

"लेकिन इसने गुस्ताखी क्या की है ?"

"गुस्ताखी, बहुत बड़ी गुस्ताखी की है। मैं चाहता हूँ कि इसे कह दो कि यह हमारे सामने से हट जाय।"

शिव चला गया।

अनूपसिंह ने तुरन्त अपने सेवक को कहा, "भोपालसिंह ! यह गोला बड़ा खतरनाक है। पता नहीं, इससे मेरी आत्मा क्यों डरती है।"

"आप आज्ञा दे दें तो मैं अभी इसे ठीक कर देता हूँ।"

"जरूर, जरूर, इसे ठीक कर दो।"

भोपालसिंह उसी समय चार कारिन्दों को लेकर गया।

शिव अपनी कराहती हुई माँ के पास बैठा था। माँ अपने जलते हुए हाथों से शिव को सहला रही थी। उसकी आँखों में आँसू भरे थे। वह हक-लाती हुई कह रही थी, "मैं अब जिन्दा नहीं रहूँगी। मुझे जीने की इच्छा भी नहीं है, किन्तु मेरी मृत्यु के बाद तुम यहाँ एक पल भी मत ठहरना। बेटे ! तुम्हारी माँ का जीवन इन जनानी ड्योढ़ियों में ही बीता है। मैंने जीवन में चन्द ही क्षण सुख के बिताये हैं, शेष रेंगते हुए कीड़ों की तरह मेरे सारे क्षण बीते हैं। शुष्क और पीड़ित ! कठोर श्रम और इन जालिमों की गुलामी ! ये सत्ता के पोषक और अधिकारों के धनी आदमी को आदमी नहीं समझते हैं। ये लोलुप और खूनी भेड़िए हैं जो इन्सानियत को खुर्च-खुर्च कर खा जाते हैं। यहाँ आदमी कभी भी मुक्त साँस नहीं ले सकता है। बेचारा वह महल की चहारदीवारी में सिसकता-तड़पता समाप्त हो जाता है। और हाँ, ये न तो ईश्वर के अवतार होते हैं और न उसके अंश। ईश्वर अपनी शक्ति का एक

अंश भी इन दुष्टों को नहीं दे सकता, इसलिए मैं तुमसे प्रार्थना करती हूँ कि तुम इनका घोर विरोध करना और प्रयत्न करना कि इनके चंगुल मे सिसकती मानवी का उद्धार हो। बेटा! तुम्हारी माँ ने इनके खूब अत्याचार सहे हैं, और तुम उसका प्रतिशोध अवश्य लेना।""देखो बेटा, बहू आये तो उसे उस पेटी मे रखा हार जरूर दे देना, क्योंकि यह मैंने तुम्हारी बहू के लिए ही ठकुराणी सा से माँगा है।"

शिव ने व्यग्रता से कहा, "तुम व्यर्थ परेशान होती हो। मैं तुम्हें कहता हूँ कि तुम्हें मुझसे कोई जुदा नहीं कर सकता। माँ! मैं तुम्हें नही मरने दूँगा।"

"मृत्यु पर किसी का जोर नही है। जरा प्यास लगी है, पानी दे दे।" शिव उठा और उसने अपनी माँ को पानी पिलाया। नैना को जमना याद हो आयी। दुःख में उसे अक्सर जमना याद आती थी। सारे जीवन उसे उसका अभाव सताता रहा। मरने से पहले भी उसने ईश्वर से उसे अगले जन्म में पति के रूप में माँगा। जमना जैसा उसे पति मिले! इस भावना से उसकी आँखें भर आयीं।

भोपालसिंह विचारमग्न खड़ा रहा। परिस्थिति इतनी गम्भीर थी कि उससे कुछ भी नहीं हो पाया। वह वापस उन्हीं पाँवों लौट गया। शिव ने माँ के सिर पर हाथ रख कर कहा, "मैं वैद्यजी को बुला कर लाता हूँ। माँ, तू हिम्मत न हार।"

"न बेटा न, तुम वैद्यजी के पास मत जाओ। अब मुझे दवा की जरूरत नहीं है। तुम मुझे गीता सुनाओ। रामायण सुनाओ।"

शिव की आँखें भर आईं। वह यंत्रवत् उठा। उसने गीता उठाई और पढ़ने लगा।

माँ ने कब प्राण त्यागे, इसका गीता में निमग्न शिव को पता नही चला। जब उसने बीच में देखा, तब माँ की दोनों आँखें फटी हुई थीं और सारा शरीर बरफ-सा ठण्डा था। वह कुछ देर तक देखता रहा और अन्त में चीख कर रो पड़ा। उसकी आवाज सुन कर आस-पास के कई गुलाम आ गये। कुछ गोलियाँ सहानुभूति प्रदर्शित करने लगी। शिव ने माँ को उठाया और कोठड़ी के आगे पसार दिया। चन्द घड़ी में वे सब नैना को श्मशान घाट ले गये।

आग की लपटें धू-धू कर जल उठीं।

शिव चिता के सम्मुख बैठा था। चुपचाप और विह्वल। उसकी सिसकियों ने सबको झकझोरित कर दिया। लोगों ने उसे सान्त्वना दी और समझाया कि होनी को कौन रोक सकता है।

माँ को जला कर वह कोठरी में निस्पन्द-सा पड़ गया। वह अपने और अपने जीवन के बारे में विश्लेषण करने लगा। उसकी माँ के उत्पन्न होने का क्या उद्देश्य और कैसी सार्थकता थी? कठोर श्रम और दूसरों के जुल्म! लेकिन वह इसका विरोध करेगा। वह अपनी माँ पर किये गये अत्याचारों का बदला लेगा।

वह सिसक-सिसक कर रो पड़ा।

तभी केसर आई। बड़े स्नेह से उसने शिव के ललाट पर हाथ फेरा। शिव की डबडबाई आँखें खुल गईं।

केसर ने विह्वल स्वर में कहा, "हिम्मत रखो शिव, जो मनुष्य जन्म लेता है, उसे मरना ही पड़ता है।"

"मृत्यु का मुझे कोई पश्चात्ताप नहीं है। पश्चात्ताप इस बात का है कि उस जीवन को क्यों सम्भाल कर रखा जाय, जो मृत्यु के बराबर है। जिसमें कुछ भी आकर्षण नहीं, कुछ भी चाहत और प्रेम नहीं! एक अभिशाप!"

"नहीं शिव, यद्यपि तुम्हारा जीवन किसी शाप से अधिक अच्छा नहीं है, फिर भी तुम्हें इतना हताश नहीं होना चाहिए। जीवन इन सभी शापों, अभावों, सुखों और अत्याचारों के बीच साँस लेता है, क्योंकि जीवन शाश्वत है और ये सब क्षणिक। क्षणिकता से आकुल होकर पलायन कर देना मानव-कर्त्तव्य नहीं।"

शिव ने एक बार अभिप्राय भरी दृष्टि से उसे देखा। केसर की आँखों में प्यार की अजस्र धारा थी। शिव को देखते-देखते उसकी भी आँखें भर आईं। वह आँसू भरी आँखों से देख कर बोली, "हर आदमी आशा पर जीवित रहता है। वह इस लम्बे अभिशप्त जीवन में उस एक क्षण की खोज करता है जो उसे सम्पूर्ण सुख प्रदान कर सके। क्या हमारे जीवन में वह सुख का पल नहीं आयेगा?"

"आयेगा।"

"फिर तुम्हें घबराना नही चाहिए। अरे, मुझे क्यों नही देखते! तुमसे अधिक पीड़ित हूँ। अन्तराल में दुर्द्धंष संघर्ष छिपाये हुए हूँ। मेरा मौन हाहाकार कोई नहीं सुन सकता। फिर भी जीवित हूँ क्यों कि मुझे भी तुम्हारी तरह एक विश्वास है, वह दिन आयेगा, जरुर आयेगा, जब मैं इस पशु के बन्धनों से मुक्त होऊँगी।"

एक दासी तभी भागती-भगती आई।

"राणी सा, राणी सा!"

"क्या है?"

"ठकुराणी सा आ रही हैं। जल्दी से चलिए!"

"क्यों?"

"बस चलिए। देर न कीजिए!"

"मै नही चलती!"

दासी का चेहरा उदास हो गया। करुणा भरे स्वरों में उसने कहा, "आप नही जानती हैं कि यहाँ के नियम क्या हैं?"

सूरज आ गई थी। उसके साथ चार हिजड़े थे। दो-तीन दासियाँ थीं। केसर ने उन सबको देखा। अपने आपको एकदम कठोर कर वह बिना किसी की ओर देखे महल की ओर चली।

"बहू! तुम्हे शायद हमारी मान-मर्यादा का पता नही है। इस तरह गोले के घर जाना यहां के राजपूत सहन नही करते।" उसने स्वर बदल कर कहा, "पति का अपंग होना कोई बहुत बड़ी बात नही। सती नारियाँ मन से न वरे हुए पति पर भी अपना सर्वस्व निछावर कर देती हैं और तुमने तो उसे वरा है।"

सूरज का उपदेश केसर को असह्य लगा। उसने कड़कते हुए कहा, "प्राचीन युग में राजपूत नारियाँ पति की स्मृति मे अपना यौवन और जीवन शिखा की तरह रह-रह कर जला देती थी। उनमें किसी तरह की प्रतिस्पर्धा और कुढ़न नही होती थी और जब उनका पति मृत्यु का आलिंगन करता था, तब वह उसके साथ सहर्ष सती हो जाती थी।...लेकिन आज जमाना बदल गया है। विचार और मानदण्ड दूसरे बन गये हैं। आज की क्षत्राणियाँ गोलों के साथ रंगेलियाँ मानती हैं, पतन की चरम सीमा तक पहुँच कर वह पतियों

को महल से फिकवा कर वैधव्य का ढोंग करती हैं। शोक में वह कई दिन तक अन्न-जल ग्रहण नही करती हैं। क्यों ठकुराणी सा, वक्त बदल गया न ?"

सूरज इस तरह चिहुँकी जैसे किसी ने बदन पर जलता हुआ लोहा चिपका दिया हो। वह आगे बढ़ी। उसका अंग-अग कांप रहा था। उसने केसर के मुँह पर थप्पड़ मार कर कहा, "इस कुलटा को अंधेरी कोठरी में बन्द कर दो। यह कलंकिनी है, छिनाल है, यह गोलों के साथ रंगेलियाँ मनाती है। इसे अंधेरी कोठरी में बन्द कर दो, ले जाओ इसे !"

उन चारो हिजड़ों ने उसे घेर लिया।

केसर बिजली की तरह तड़प कर बोली, "मैं कुलटा और छिनाल हूँ या न हूँ, पर तुम्हारी तरह पति-घातक और हत्यारिन नही !"

"खामोश !"

"मैं खामोश हूँ लेकिन तुम्हारे अत्याचार नही सह सकती। मैं तुम्हारे उस पुत्र को अपना पति नही मान सकती जो पुरुष कहलाने लायक नही है।''''तुम्हें क्या पता कि मेरे मन मे कैसी आग जल रही है ! मैं नारी हूं, नारी की प्यास को तुम क्या जानो ! जरूर जानती हो, तुम भी नारी हो। हो न !"

"सुनी इस बदजात की बातें ? जाओ, इसकी हंटरों से चमड़ी उधेड़ दो !"

अन्तस् की अशान्ति और उद्वेग के तूफान को शान्ति से रोकती हुई केसर पुनः बोली, "मार-पीट से कोई हल नहीं निकलेगा। मैं''''!"

तभी शिव आ गया। उसने सूरज के पाँव पड़ कर कहा, "आप इन पर गलत आरोप मत लगाइए। यह नादान है। आवेश में झूठी बातें भी कह सकती है। मैंने अपनी आँखो से देखा था कि ठाकुर स्वयं शराब में मदहोश हुए खिड़की से कूदे थे।''''माँ सा ! जीवन जटिल है, उसमें शीघ्रता और व्यग्रता अत्यन्त हानिप्रद सिद्ध हो सकती है।''''आप इतनी अधीर होकर कार्य करेंगी, फिर परिणाम क्या होगा ?"

सूरज को शिव की इस बात से काफी सन्तोष मिला। चलो, लोगों का सन्देह दूर हो गया। नहीं तो, न जाने वे केसर की बातों का क्या-क्या अर्थ लगाते। बात का जरा भी सुराग भविष्य में इस बात को तूल देने के लिए काफी था। इसलिए उसने धीरज से काम लेना ठीक समझा। उसने अपने शरीर को विचित्र तरह का झटका दिया। अपने बिखरे बालों को हाथ से ठीक

किया। आँचल को कमर की ओर लपेट कर उसे लहँगे मे दबाया और अत्यन्त गम्भीर स्वर में बोली, "इसे छोड दो, लेकिन इस बात का ख्याल रहे कि यह महल में किसी तरह की गड़बड़ न करे और शिव, तू अनूपसिंह के पास रहना। आज से तू उसे एक घड़ी भर के लिए भी मत छोड़ना।"

सूरज चल गई। शिव दबे पाँव चला। केसर आहत साँपिनी-सी भारी कदम रखती हुई चली। वह बार-बार अपनी गर्दन को झटका देती थी।

अपने कमरे मे जाकर केसर ने कपड़े बदले। पता नही, उसके दिमाग में एकाएक कौन-सा विचार आया जिससे उसके चेहरे पर उत्साह दीख पड़ा, जिससे उसके होठों पर खल-नायिका वाली कुटिल व अर्थ भरी मुसकान खेल गई।

क्षण दो क्षण बीते होगे कि उसने एक बड़ा सन्दूक खोला। उस सन्दूक मे से उसने एक सुन्दर लहँगा और ओढनी निकाली। तब उसने अपना हाथ-मुँह धोया और सज कर अपने कमरे से निकली।

अनूपसिंह और भोपालसिंह दोनों बैठक मे बैठे बात-चीत कर रहे थे। दासी ने अनूपसिंह को केसर के आने की सूचना दी। अप्रत्याशित आगमन के कारण उसके दिमाग मे सन्देह के बादल उमड़ आये। भोपालसिंह उठकर पिछले दरवाजे से चला गया। उसके चेहरे पर सन्देह के भाव थे। अनूपसिंह अपनी कुर्सी पर बैठा था। उसके शरीर का ऊपरी हिस्सा हिल रहा था जो उसकी मानसिक असन्तुष्टि का सूचक था।

केसर ने आते ही चरण-स्पर्श किये। बोली, "आप मुझे क्षमा कर दीजिए, मैंने आपका अपमान किया है।"

अनूपसिंह अप्रत्याशित परिवर्तन के मर्म को नहीं समझा। वह रुकता-रुकता बोला, "मैं तुम्हें माफ नहीं कर सकता। तुम यहाँ से इसी समय चली जाओ।"

"मैं यहाँ से नही जाऊँगी। जब तक आप मुझे माफ नही करेंगे, तब तक मैं इस कमरे के बाहर कदम भी नही रखूँगी।" केसर के स्वर में दृढता थी।

अनूपसिंह ने उसके कन्धों को अपने दोनों हाथों से पकड़ा। उसने चाहा कि वह उसे जोर का धक्का मारे, किन्तु एकाएक उसकी दृष्टि केसर के चेहरे पर जम गई। वासना जाग उठी। वह केसर के अपूर्व रूप को देखता रहा, देखता रहा।

"मैं आपसे माफी चाहती हूँ, सच्चे मन से माफी चाहती हूँ। आप विश्वास करें, भविष्य में मैं आपकी आज्ञा के बिना कुछ भी नहीं करूँगी। आपके बिना मेरा जीवन कुछ नहीं ?"

अनूपसिंह ने भड़क कर कहा, "क्यों, क्या मैं मरने वाला हूँ ?"

केसर ने तुरन्त कहा, "आप शायद यह नहीं जानते कि ठकुराणी सा ने ही आपके पिता की हत्या की है। मैं आपकी सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि उनकी आज्ञा से ही गोलों ने ऐसा काम किया था।······और मुझे डर है कि कहीं वे आपको भी खत्म न कर डालें।"

अनूपसिंह के चेहरे पर पसीना आ गया। वह घबराया हुआ बोला, "यह सम्भव नहीं। ऐसा नहीं हो सकता! मेरी माँ मेरे साथ अन्याय नहीं कर सकती!"

"नाथ! यह लिप्सा बड़ी भयानक होती है। यह बाप से बेटे, भाई से भाई, और मित्र से मित्र को लड़ा देती है।"

अनूपसिंह गम्भीर हो गया।

केसर ने उठते हुए कहा, "मैंने एक पत्नी का कर्तव्य निभाया है। अब यह आप पर है कि आप इस पर विश्वास करें या न करें।" केसर बाहर निकल गई। द्वार पर शिव उसे मिल गया। शिव को देखते ही उसका प्रणय जाग उठा। वह शिव के उदास और सूखे चेहरे को देखती रही।

बोली, "कैसे हो ?"

शिव ने सूखी मुस्कान के साथ कहा, "चेहरा नहीं कह रहा है ? केसर! अब मैं जल्दी से जल्दी यहाँ से भाग जाना चाहता हूँ। अब मेरा इस चहार-दीवारी में कोई भी लगाव और दिलचस्पी नहीं।"

"क्यों ?"

"क्योंकि अन्धी भावुकता और अतृप्तियों की भयंकर प्रतिक्रियावश मैं तुम्हें अपना समझ रहा था। लेकिन आज इन कानों ने जो सुना है, उससे लगता है कि दो विभिन्न वर्गों के युवक-युवती में हार्दिक प्यार नहीं हो सकता। किसी तरह की स्थायी समता और समझौता नहीं हो सकता।"

केसर जड़वत् हो गई। उसने आगे बढ़ कर शिव को पकड़ लिया, "नहीं-

नहीं, तुम्हारा सोचने का तरीका गलत है। मैं तुम्हारे सिवाय किसी को प्यार नही कर सकती।"

"फिर तुमने ऐसा क्यों कहा ?"

"यह चाल है। तुम नही समझ सकते कि यहां जीवन कितना विकृत और उलझनों से भरा है। हर व्यक्ति दांव पर दांव फेंक रहा है। किसी को किसी के सुख-दुःख से सरोकार नहीं। सिर्फ निज का स्वार्थ और निज का आधिपत्य! तब मैं ऐसे वातावरण में अपने आपको कैसे बचा सकती हूं ? मैंने भी सोचा कि क्यों नही, मैं भी एक चाल चलूं।"

"तुम्हारी चाल यहां असफल होगी। ठकुराणी तुम से बहुत चतुर, बहुत कूटनीतिज्ञ और बहुत ही सजग है। वह तुम्हारी इन साधारण चालों को सफल नहीं होने देगी।"

"क्यों नही होने देगी ?"

"इसलिए कि तुमने प्रारम्भ में जो-जो गलतियां और घोषणाएं की हैं, उसके बाद अनूपसिंह को तुम अपने साथ नही मिला सकती। क्या तुम समझती हो कि ठकुराणी तुम्हारी हरकतों से अनजान है ? कदापि नही। सुनो, उसका हर आदमी तुम्हारे पीछे लगा हुआ है।"

केसर का मुंह पीला पड़ गया।

वह पराजित-सी जल्दी-जल्दी कदम उठाती हुई चली गई।

शिव अनूपसिंह के पास आ गया।

अनूपसिंह कुर्सी पर बैठा-बैठा कुछ विचार रहा था।

उसने शिव को देखा। गर्दन ऊंची की और वह घृणा से बोला, "शिव, तू यह बता सकता है कि तेरी बाई सा मुझसे सचमुच प्यार करती हैं या नहीं ? यदि हां, फिर उन्होने आज तक मुझ से घृणा क्यों की ? मेरी आत्मा को क्यों दुखाया ? मुझे नपुंसक क्यों कहा ? मुझे छोड़ कर वह तेरे पास क्यों गई ?"

शिव अपने आपको सँभालता हुआ बोला, "वह आपको प्यार करती हैं अथवा नही करती हैं, यह मैं नही जानता। सिर्फ मैं इतना जानता हूं कि वह मेरे पास मां की मृत्यु पर ही आई थी। आखिर मैं उनके पीहर का हूं।"

"लेकिन अभी वह कुछ और कह रही थी।"

"यह आपका घरेलू मामला है, मैं इसमें किसी तरह की दखलन्दाजी नहीं कर सकता। ऐसा करना मेरे लिए ठीक नहीं रहेगा।"

"लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि कुँवराणी मुझे प्यार करती हैं। वह छिनाल और कुलटा नहीं हो सकतीं।"

उसका इतना कहना था कि सूरज ने कमरे में प्रवेश किया। वह काले वस्त्रों मे विचित्र आकर्षण लिये हुए थी। रंग उसका गोरा था ही, इसलिए उसे काले वस्त्र बड़े फब रहे थे।

उसने समीप मे पड़ी कुर्सी को ठोकर मार कर कहा, "तू मेरे बेटे को मेरे विरुद्ध भर रहा है? नीच, कुत्ते, हरामी, मैं तेरी जबान कटवा डालूँगी।""""भोपालसिंह! इस हरामखोर को अँधेरी कोठरी मे बन्द कर दो। यह बड़ा खतरनाक मालूम होता है।"

चार-पाँच व्यक्तियों ने शिव को पकड़ लिया। शिव ने कुछ भी नहीं कहा। वह चुपचाप अँधेरी कोठरी की ओर चला गया।

सूरज ने अनूपसिंह के कन्धों को पकड़ लिया। दाँतों को किटकिटा कर वह बोली, "तुम इतने गये गुजरे हो? उस छिनाल की दो-चार झूठी-मीठी बातों को सुन कर पिघल गये? अपनी माँ के अरमानों का खून करने लगे?"

"लेकिन मैंने ऐसी कोई भी बात नहीं कही।"

माँ का क्रोध भड़क उठा। वह क्रोध मे अपने सारे शरीर को हिलाकर बोली, "तुम झूठ बोलते हो! ओह! तुम्हें मेरा बेटा नहीं होना चाहिए था। तुम्हें मेरी कोख से पैदा भी नहीं होना चाहिए था।""""मैं तुम्हारा दूसरा विवाह करने जा रही हूँ एक अद्वितीय सुन्दरी से, और तुम उस कुलटा से मिल कर मेरे बारे में षड्यन्त्र करते हो? छिः!"

अनूपसिंह भयभीत हो गया। डरता हुआ बोला, "मैं उससे नहीं मिला, वह खुद मुझसे मिलने आई थी।"

"लेकिन तुमने उसे अपने कमरे मे दाखिल क्यों होने दिया? क्या तुम उसे अपमानित करके नहीं निकाल सकते थे? लेकिन तुमने उससे बातचीत की। उसकी विनती और उसके प्यार के निवेदन को सुना। सचमुच तुम राजपूत और मेरे बेटे कहलाने लायक नहीं हो। और मैं तुम्हें खूब समझने लगी हूँ कि तुमने आखिर ऐसा क्यों किया, क्योंकि तुम बहुत कमजोर इन्सान हो।

वासना के कीड़े हो। तुमने जैसे ही उसके रूप को देखा, वैसे ही तुम्हारा दिल मोम की तरह पिघल गया और तुम अपनी मां पर सन्देह करने लगे। उस मां पर, जिसने सिर्फ तुम्हारे जैसे दया के पात्र को बहुत बड़ा आदमी बनाने के लिए हरएक से झगड़ा मोल लिया। अगर मैं तुम्हारे पीछे साया बन कर नहीं लगती तो यह तुम्हारी पुगलगढ़ की पद्मिनी तुम्हें कभी का जहर देकर खत्म कर देती।"

सूरज का अंग-अंग कांप रहा था। उसका चेहरा क्रोध से विकृत हो गया था। वह अनूपसिंह की ओर पीठ करके बोली, "तुम आगे भी ऐसी ही हरकत करोगे और वह तुम्हें खत्म कर देगी।"

वह कुछ देर तक खामोश रही। अनूपसिंह इन निरन्तर आघातों को नहीं सह सका। उसकी आंखों में आंसू छलछला आये। सूरज ने उसे देखा तो वह कोमल स्वर में बोली, "तुम्हें इतना सोचना चाहिए कि मैं तुम्हारी मां हूं और एक मां अपने बेटे को कभी भी नही मरवा सकती। तुम्हे तुम्हारी बहू बरगला रही थी। क्या तुम्हें विश्वास है कि मेरी जैसी एक क्षत्राणी अपने हाथों अपने सुहाग को मिटा सकती है? फिर जब उसने मुझ पर यह आरोप लगाया, तब तुमने उसे पीटा क्यो नहीं? देखो बेटे, तुम एक राजकुमार की तरह अपने जीवन को व्यतीत करो। मैं तुम्हारा विवाह शीघ्र ही एक ठाकुर की बेटी जीत कुंवर से करने वाली हूं। मुझे उम्मीद है कि तुम इससे कभी नहीं मिलोगे।"

सूरज कुंवर हवा की गति से बाहर हो गई।

× × ×

२१

....

शिव को अंधेरी कोठरी मे गये काफी दिन हो गये। उसे दोनों समय मूंग की दाल और चार सूखी रोटियां मिलती थीं। उसका शरीर बहुत दुर्बल हो गया था। सूरज कुंवर ने केसर के चारों ओर पहरा बिठा दिया था। एक तरह से वह कमरा उसके लिए जेल के बराबर हो गया था। शिव को क्या-क्या यंत्रणाएं दी जा रही हैं, यह वह नहीं जान सकी। इसका एक

कारण यह भी था कि उसने दो दासियों को इस काम के लिए तैयार किया था। वे बेचारी सारे महल की खबर लगाकर उसे देती थी। लेकिन सूरज के गुप्तचरों से ये भी दोनों नही बच सकीं। निदान एक की टांग तोड़ दी गई और दूसरी को चोरी का इल्जाम लगा कर जेल भेज दिया गया। इसके बाद किसी भी गुलाम का साहस नही हुआ कि वह केसर से मिलता और उसे महलों के गुप्त समाचारों से अवगत कराता।

अनूपसिंह का दूसरा विवाह तय हो चुका था। शीघ्र ही शादी होना निश्चत हो गया था। सूरज कुंवर अब उस पर विशेष खर्च कर रही थी। फलस्वरूप उसकी विकृतियाँ साकार रूप लेने लगीं। वह हर रात शराब में डूबकर नाच-गाने कराता था। उसके कमरे मे मानवी के साथ हुए अमानुषिक अत्याचार देखकर मानवीयता रो उठती थी। कभी-कभी उसकी राक्षस-वृत्ति इतनी भयकर होती थी कि लड़की बेहोश तक हो जाती थी।

लेकिन सूरज चाहती थी कि अनूपसिंह इनमें तन्मय रहे, ताकि साधूपुर का सारा शासन उसके हाथ में रहे। लेकिन इधर कांग्रेस की जागृति के कारण कुछ निम्नवर्ग के राजपूतों में जागरण हुआ और उन्होंने समस्त सामन्तों की परवाह किये बिना इन प्रथाओं का विरोध किया। उसकी लहर सब जगह पहुँची। वर्षों की गुलामी में सिसकते उन प्राणियो में मुक्ति की ओर अग्रसर होने की चेतना जागी। महलों, गढ़ों, डेरो में वस्तु की तरह उपयोग होने वाले उन इन्सानों को ऐसा लगा जैसे वे भी अन्य प्राणियों की तरह जीने का हक हासिल कर लेंगे। सूरज को अपने गढ में सबसे अधिक खतरा था शिव से। हालांकि शिव इन दिनों अँधेरी कोठरी में था। उसे बहुत यातनाएँ दी जा रही थी, फिर भी उसका गहरा मौन और उसके प्रति वहाँ के गुलामों की सहानुभूति आगामी खतरे की सूचक थी क्योंकि गुलाम लोग हर समय उसकी चर्चा करते थे। उसके बारे मे उनमे बड़ी सहानुभूति थी।

कांग्रेस के कुछ सदस्य भी निरन्तर इस प्रथा के विरुद्ध बोल रहे थे।

सूरज कुंवर ने अपने गुलामों को एक दिन आकर समझाया, "यह सब असम्भव बातें हैं। वर्षों से चली आ रही परम्परा को कोई नही तोड सकता।"

गुलामों ने कोई जवाब नहीं दिया।

तब वह शिव के पास गई।

अँधेरी और सीलन भरी कोठरी। हवा के लिए ऊपर एक छोटा-सा सूराख। नीचे खुरदरा फर्श। मच्छर और गन्दगी।

शिव बहुत दुबला हो गया था। उसके चेहरे पर पीलापन झलकने लग गया था। मुँह सूख गया था, जिससे गालों की हड्डियाँ उभर आई थीं। वक्ष की पसलियाँ भी सहज गिनी जा सकती थी। लेकिन उसके मुख पर प्रशान्त सागर की तरह शान्ति विराज रही थी।

उसने जैसे ही सूरज को देखा, प्रणाम किया।

सूरज ने उसे बाहर निकालते हुए कहा, "मै तुझे एक शर्त पर यहाँ से निकाल रही हूँ कि तू इसी समय यहाँ से कही बहुत दूर चला जा। याद रहे, अगर भविष्य में मैने तुझे कभी यहाँ देखा तो तेरी दशा वही होगी जो मै सदा दूसरों की करती आई हूँ।"

शिव ने गहरी-तीव्र दृष्टि से सूरज को देखा। इस दृष्टि के सत्य को सूरज नही सह सकी। वह काँप-सी गई। शिव मुसकरा पडा।

सूरज कुँवर ने रास्ते मे उसे कई आदेश दिये, पर शिव ने अपना मौन नहीं तोडा। इस मौन से सूरज का पारा गरम हो गया और इस गर्मी में उसने शिव को बेवजह दो-चार ओछे बोल कह दिये।

शिव ने अपने सामान और पुस्तकों की गठरी बाँधी और उस नारकीय यातना मे सडने वाले इन्सानों से विदा लेकर वह उनसे बोला, "मेरे जाने का आप लोगो को बड़ा कष्ट है। आपकी आँखों के आँसू मेरे लिए मोतियों से कम नही, लेकिन आप इतना विश्वास रखें कि मैं आप से, आपकी इस धरती से दूर जाकर भी दूर नही रहूँगा। मैं यहाँ से बहुत दूर रह कर भी आपकी मुक्ति की कामना करूँगा। और उस समय तक चैन की साँस नहीं लूँगा, जब तक यह कानून न बन जाय कि इस देश में कोई भी इन्सान इन्सान को गुलाम नही रख सकता।....इन गढ, महल और हवेलियों के स्वामियो; इन ऊँचे महलो के राजे-महाराजो की दशा भी सदा एक-सी नही रहेगी। इनमे भी परिवर्तन आयेगा। पता नहीं क्रान्ति का कौन-सा कदम इनके महलो और हवेलियों को धूल में मिला दे। भाइयो! कोई आदमी जन्म से न छोटा होता है और न बड़ा। जीने का हक सबको बराबर है, किन्तु ये जो

हमारे अन्नदाता हैं, ये हमसे जीने का हक छीनते हैं और हमें कुत्ते की तरह मरने के लिए मजबूर करते हैं। हमसे जानवरों की तरह काम कराते हैं, पर हमें जानवरों की तरह पेट भर भोजन नहीं देते। ये महान् हैं, हमारे प्रभु हैं, लेकिन ऐसे प्रभुओं का जीवन शाश्वत नहीं है। ऐसे प्रभुओं को अन्धे होकर पूजना हितकर नहीं है। इनसे मुक्त होना ही पड़ेगा। इनसे एक दिन लड़ना ही पड़ेगा।"

शिव चल पड़ा।

सूरज अपने अन्तस् के आन्दोलन को दबा कर खड़ी रही। बीच में उसके मन में यह विचार आया था कि वह बन्दूक से इस तरह की भयानक आग उगलने वाले शैतान को सदा-सदा के लिए सुला दे, पर उसके विवेक ने ऐसा नहीं होने दिया। वह शान्त-गम्भीर खड़ी रही।

शिव चला जा रहा था।

महल के बाहर कदम रखते ही उसे केसर का ख्याल आया। उसके कदम रुक गये। मन मे वेदना का ज्वार उमड़ पड़ा। आँखों के कोए भीग गये। उसने घूम कर उसके कमरे की ओर देखा। वह अपने झरोखे मे खड़ी थी। हाथ का संकेत कर रही थी।

शिव ने सोचा, 'इन शैतानों के बीच इस बेचारी का कौन है? वह कैसे सुख की साँस लेगी और वह कैसे अपने मन की बात किसी और को कहगी, लेकिन वह भी यहाँ रह कर कर कुछ भी नहीं कर पायेगा। यहाँ रहने का मतलब है कि उम्र भर पशु की तरह काम करके, अन्धेरी कोठरी सड़ना।'

वह अपने हृदय पर पत्थर रखकर चल पड़ा।

बाहर उसे चिमन मिल गया। चिमन राजधानी से आया था। शिव को जाते देखकर वह बोला, "कहाँ जा रहे हो?"

"पता नहीं।"

"क्या तुम्हें अन्धेरी कोठरी से निकाल दिया? भई, मुझे अभी भी यकीन नहीं होता है।" उसने शिव को छू कर कहा।

"संयोग बड़ी चीज होती है। देख चिमना, केसर का ख्याल रखना। उसका जीवन यहाँ खतरे से खाली नहीं है।"

"तुम चिन्ता न करो !"

"और सुन, मैं राजधानी में ही रहूँगा ।…गली में समझे। जब कभी उधर आओ, मुझ से जरूर मिलना। केसर की मदद करना ।"

"अच्छा भैया, तुम्हारा तो इस नरक से पिण्ड छूटा ।"

शिव चला। धीरे-धीरे उसकी आँखों से सब कुछ दूर हो गया—गांव, केसर और अपने ही जैसे सैकड़ों गुलाम।

× × ×

२२

....

शिव रियासत की राजधानी में रहने लगा। राजधानी की एक तंग और गन्दी गली में, जहाँ गन्दगी की निरन्तर दुर्गन्ध से आदमी का माथा भन्ना जाता है। गन्दी नालियाँ और उसमें किलबिलाते कीड़े घृणास्पद चित्र प्रस्तुत करते रहते हैं। शिव जिस मकान में रहता है, वह मकान कच्चा है। उसके एक परिचित कांग्रेसी मित्र आत्माराम का। उन्होंने ही यह मकान शिव को रहने के लिए दिलवाया था। किराया कुछ नहीं। शिव को इस मकान में एक बात का हर समय खतरा रहता है कि कहीं बारिश या तूफान से यह मकान धराशायी न हो जाय।

कभी-कभी रात के गहरे अँधेरे में वह विचारों में लीन तारों को गिनता हुआ सोचा करता है कि कहीं घोर वृष्टि की वजह से यह मकान गिर न जाय। इस दुष्कल्पना मात्र से उसके रोंगटे खड़े हो जाते हैं और उसके हृदय में विचित्र भय की अनुभूति होती है। तब उसकी रग-रग काँप जाती है और उसके शरीर में मृत व्यक्ति की सी जड़ता आ जाती है। तब वह कई क्षणों तक शून्य आकाश को अनिमेष निहारता रहता है और उसकी पुतलियों के नीचे विषाद के हल्के बादल मंडरा उठते हैं।

परसों की बात है।

शिव दोपहर को बाजार की ओर गया हुआ था। सड़क धूप से भरी थी। आवागमन भी विशेष नहीं था। सेठानी चन्दा की घोड़ा-गाड़ी जा रही थी। घोड़ा-गाड़ी के पीछे एक गाड़ी और थी, उसमें शहर के कई प्रतिष्ठित महानुभाव बैठे थे। गाड़ी के साथ राज्य के सिपाही भी थे।

गाड़ी को देखकर लोगों ने फबतियाँ कसीं। चन्दा के बारे में कई तरह की अफवाहें फैली हुई थीं। उसका पति निर्विरोध भाव से अपनी पत्नी का खेल देख रहा था। राजाजी की सर्वेसर्वा बन कर चन्दा समस्त शासन को अपने काबू में करना चाहती थी। यही वजह थी कि उसका सम्बन्ध जिस दिन खेतसिंह से हुआ, उसी दिन से खेतसिंह की वासना बढ़ने लगी और उसकी जनानी ड्योढ़ी में नई लड़कियों की संख्या भी उतनी ही तेजी से बढ़ने लगी।

शिव एक बार नहीं, सैकड़ा बार सेठानी की घोड़ा-गाड़ी को देख चुका था। जब कभी वह देखता था, उसके मन में ख्याल उठता था कि वह राज्य की सबसे बड़ी शक्ति से गुलाम-प्रथा के विरुद्ध कदम उठाने के लिए प्रार्थना करे, लेकिन जब-जब वह यह विचार कर उसकी हवेली पर गया, तब-तब उसने चन्दा को बड़े-बड़े राज्याधिकारियों व प्रतिष्ठित नागरिकों से घिरा हुआ पाया। वह अपने मन के भाव मन में लेकर वापिस आ जाता।

आज उसने फिर देखा। सदा की तरह उसके मन में वह भाव जाग्रत हुआ। उसने तुरन्त निश्चय किया और वह गाड़ी के पीछे-पीछे चल पड़ा।

वह उसकी हवेली में बीच गलियों के रास्तों से जल्दी पहुँच गया। वह ड्यूटी पर तैनात सिपाही की तरह खड़ा हो गया। चन्दा जब गाड़ी से उतरी, तब उसने प्रणाम किया। प्रत्युत्तर कुछ भी नहीं मिला। वह तुरन्त अपनी हवेली में घुस गई। उसने अपने पति पर भी अनुराग भरी दृष्टि नहीं डाली। वह बेचारा स्वागत के लिए खड़ा था और चन्दा आँचल को समेटती हुई भीतर चली गई। उसके पीछे दीवान जी व अन्य सज्जन। थोड़ी देर के बाद सारे महानुभाव भीतर से वापिस आते हुए दिखाई पड़े। शिव ने दरबान से सेठानी से मिलने के लिए कहा। उसने जवाब दिया कि सेठानी जी अभी नहीं मिल सकतीं। उन्हें नींद आ रही है।

पता नहीं शिव को क्या सूझा कि वहीं बैठ गया। उसने दरबान से

अनुरोध किया, "मैं सेठानी जी की प्रतीक्षा करूँगा, जब वह जग जायें तब तुम उनसे दुबारा अनुरोध कर देना।"

लगभग चार बजे शिव की भेंट पहली बार उस स्त्री से हुई जिसकी मुट्ठी में राजाजी थे, जिसने राजाजी के जीवन की धारा ही बदल दी थी। शिव ने देखा—अप्रतिम सौन्दर्य-सम्पन्न है सेठानी। मिष्ठभाषी इतनी कि आदमी का मन मोह ले। प्रभावशाली व्यक्तित्व उसके आकर्षण का एक बड़ा केन्द्र था।

वह एक आलीशान गद्दे पर बैठी थी। उसका कमरा कीमती साजो-सामान से सज्जित था। बड़े-बड़े झाड़-फानूस और बड़ी-बड़ी आलमारियाँ। चारों ओर आदमकद शीशे, जिनमे गद्दी पर बैठे व्यक्तियों की प्रतिच्छवि साफ तौर पर दीखे।

सेठानी ने पूछा, "क्या बात है?"

शिव ने हिम्मत के साथ कहा, "आप से माफी पहले माँग लेता हूँ। कोई बेअदबी हो जाय तो बुरा मत मानिएगा।"

सेठानी के अधरों पर हल्की मुस्कान दौड़ पड़ी। उस मुस्कान ने उसके सौन्दर्य को और भी खिला दिया। अधिकार की भावना सहित वह बोली, "मैं तुम्हारी हर बात सुनूँगी। तुम्हारे मन मे जो भी है, निस्संकोच और निर्भय होकर कहो और विश्वास रखो, उसके लिए मुझसे जो बन पड़ेगा, वह मैं करूँगी।"

शिव के चेहरे पर सहसा कई प्रश्न उठे। धीरे-धीरे ये प्रश्न उसकी आँखों की छाया में गम्भीरता लाने लगे। उसने एक बार समस्त कमरे की वस्तुओं पर अपनी दृष्टि दौडाई। सेठानी से नजर न मिला कर वह बोला, "मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप राजाजी को कह कर जनानी ड्योढी समाप्त करा दें।"

सेठानी के मस्तिष्क में हलचल उत्पन्न हो गई हो, ऐसा उसकी विस्फारित आँखों से विदित हुआ। वह कुछ क्षण तक बोल नहीं सकी।

शिव ने उसकी ओर न देखते हुए कहा, "यह राजाजी जैसे महान् आदमी पर कलंक है। हजारों युवतियों को अपनी हविस की शान्ति के लिए चहारदीवारी में बन्द करके उन्हें नारकीय यंत्रणाओं से पूर्ण जीवन-यापन करने के लिए विवश करना अन्याय ही नही, अत्याचार है।'''और आप यह अच्छी

तरह जानती ही हैं कि उन्हें वहाँ किस तरह तड़प-तड़प कर, घुट-घुट कर साँसें लेनी पड़ती है।"

शिव चुप हो गया। उसने चन्दा से उत्तर की आशा की, पर चन्दा एकदम मौन रही, किन्तु उसकी आकृति पर कुछ तनाव दीखने लगा।

शिव ने फिर कहा, "आप स्वयं नारी है। नारी जीवन के कष्टों से भलीभाँति परिचित हैं। क्या इस तरह के अत्याचार आप किसी नारी पर होते देख सकती हैं? आप ऐसी घृणित प्रथा को बन्द कराके उन हजारों युवतियों की दुआएँ लें, मैं यही चाहता हूँ।"

चन्दा ने गहरी साँस ली। बोली, "मैं तुम्हारी सिफ़ारिश कर सकती हूँ, मानना और न मानना राजाजी के हाथ है, लेकिन मैं तुम्हें व्यक्तिगत रूप से एक सलाह दूँगी कि यह सम्भव नहीं है।"

"आपके लिए कुछ असम्भव नहीं है।" शिव ने हठात् कहा। चन्दा चौंक पड़ी। कुछ रुष्ट होकर बोली "तुम्हारे कहने का क्या मतलब है? क्या मैं कोई राजा हूँ या हाकिम?"

शिव ने बात को सम्भाला, "राजा नहीं हैं पर महान् विदुषी हैं आप! आपकी सलाह राजा क्या, यहाँ के बड़े-बड़े राज्याधिकारी मानते हैं।"

लेकिन सेठानी का मन शिव की बात से वाचाल हो गया। वह तड़प कर बोली, "मैं केवल सिफ़ारिश कर सकती हूँ, बस! और हाँ, तुम्हीं वही युवक हो जिसने राजाजी की जनानी ड्योढ़ी के खिलाफ भयानक पर्चे निकाले हैं? जनता मे उनके विरुद्ध प्रचार किया है?...देखो, सत्ता से टकराना ठीक नहीं है। इसका परिणाम बहुत भयानक हो सकता है।"

"मैं भयानक से भयानक परिणाम से टकराने को तैयार हूँ।"

"कहना आसान होता है और भोगना कठिन।" सेठानी ने विनम्र होकर बात के रुख को बदला, "फिर अकेले तुमने इस बात का क्यों ठेका ले रखा है? मेरी बात मान कर तुम कोई दूसरा काल कर लो। यह सब मिटने-मिटाने की नहीं।"

शिव ने कुछ कहना चाहा। वेदना ने उसकी आँखों में घुमड़ कर उसके मुख को करुणाप्लावित कर दिया, लेकिन चन्दा ने उसे तुरन्त परामर्श देते हुए पुनः कहा, "यदि तुम मेरा कहना मान लो तो मैं तुम्हें किसी अच्छी जगह

नौकरी दिलवा सकती हूँ। कहो तो रेलवे में और कहो तो किसी दूसरे दफ्तर मे। तनखा भी अच्छी मिल जायगी और जीवन भर सुख-सन्तोष से रहोगे!"

शिव धीरे से हँस पड़ा। व्यथा भरे स्वर मे वह रुक-रुक कर कहने लगा, "नौकरी-चाकरी की मुझे कोई भी चिन्ता नहीं है। भगवान पेट भरने के लिए रूखी-सूखी कहीं से भी दे देता है।"

"रूखी-सूखी की मैं बात नही करती। मैं बात करती हूँ आनन्द की। देखो शिव, जीवन केवल असम्भव के पीछे भागना नहीं है। असम्भव के पीछे विवेकहीन भागा करते हैं।"

"किसी को असम्भव मान कर साहस को छोड़ना भी उचित नही।...सेठानी जी! आप सब कुछ करा सकती है। आप चाहें तो एक-एक नारी को वापस उसका सुखी-ससार दे सकती हैं।"

चन्दा का मन परिताप से जल उठा। उसके अन्तर में स्पष्ट ध्वनियाँ बोल उठी कि शिव उसका और राजाजी के बीच का अनुचित सम्बन्ध जानता है और इस विचार मात्र से उसका मन व्यथा और ग्लानि से भर आया। इस पर भी वह आवेश मे नही आई और उसने बड़ी विनम्रता से शिव को समझा दिया कि वह उसकी इस कार्य मे कोई भी मदद नही कर सकती है।

शिव वहाँ से चला आया।

रास्ते में आत्मारामजी मिल गये। उन्होंने उसे मायूस देखकर पूछा, "क्या बात है? तुम इतने उदास क्यो हो?"

शिव ने उत्तर दिया, "मै सेठानी जी के पास गया था। उनसे प्रार्थना की कि राजाजो की बढ़ती हुई ज्यादतियों को रोका जाय और जनानी ड्योढ़ी में सिसकती हुई नारी-जाति को मुक्त किया जाय, पर उन्होने उस मुक्ति को असम्भव बतला दिया।"

आत्मारामजी ने उसके कन्धों को मजबूती से पकड़ कर कहा, "तुम चिन्ता न करो। समय प्रतीक्षा कर रहा है। तुम्हारी कामना जरूर पूरी होगी।"

आत्मरामजी चलने लगे। तभी शिव ने उनसे पूछा, "क्यों गाँव से कोई समाचार आया?"

"चिमन आया हुआ है। वह तुम्हारा इन्तजार कर रहा है। मैं उसे दस ... देकर आया हूँ। जरा अपने मेहमान का अच्छा स्वागत कर देना।"

"जरूर !" वह कर शिव जल्दी-जल्दी घर की ओर आगे चला ।

चिमन उसकी बाट जोह रहा था ।

दोपहर का सूरज राजधानी की पहाड़ियों के पीछे छुप गया था । पहाड़ियों के पीछे ऐसा लग रहा था मानो वहाँ भयानक आग लगी हुई हो ।

शिव और चिमन बैठे-बैठे बातें कर रहे थे ।

चिमन ने कहा, "महलों की आग बढ़ रही है । सूरज कुँवर ने बेचारी केसर को भाँति-भाँति से सताना शुरू कर दिया है ।"

"मैं क्या करूँ ?"

"हम सिवाय उन्हें धीरज देने के कुछ नहीं कर सकते । और उस अनूपसिंह की बात ही मत पूछो । वह केसर के नाम से चिढ़ता है । दिन भर शराब के नशे में चूर वह हमारी बहू-बेटियों की इज्जत से खेलता रहता है । कल एक मासूम लड़की खरीद कर लाई गई, तेरह वर्ष की नाजुक ! मैंने उसे देखा । सच भैया, मेरी आत्मा चीख पड़ी । वह भोली-भाली, गुड़िया-सी अबोध । उसकी प्यारी-प्यारी सुन्दर आँखों में प्रश्न भरा भोलापन ! मैं उसे देखता रहा । वह मुझे देखती रही । फिर वह मेरे पास आई । बोली, "मुझे यहाँ क्यों लाया गया है ?"

मैं चुप रहा ।

"तुम बोलते क्यों नहीं, मुझे यहाँ क्यों लाया गया है ?"

"मैं नही जानता ।"

"लेकिन एक औरत कहती थी कि मुझे यहाँ प्यार करने के लिए लाया गया है । आज रात मुझे बहुत से जेवर पहनाये जायेंगे । अच्छे-अच्छे कपड़े पहनाये जायेंगे । फिर मुझे ठाकुर सा के पास भेजेंगे । तुम मुझे बताओ न कि वहाँ मुझे क्यों भेजेंगे ? यह उस औरत ने भी नहीं बताया । आखिर यह प्यार है क्या ?"

मैं क्या उत्तर देता ! मन में वेदना का तूफान उठा । कुछ कहते नहीं बना ! उसे अपने पास बुलाया और सीने से चिपका कर कहा, "तुम्हें यह सब नहीं पूछना चाहिए, ऐसा पूछने से ठाकुर सा नाराज हो जाते हैं ।...."

"क्यों ?"

"मुझे लगा कि उस लड़की को प्रश्न करने की आदत है। हर उत्तर पर वह एक नया प्रश्न कर देती थी और जब वह प्रश्न करती थी तब उसकी पुतलियों में व्यथा भरा विस्मय तैर उठता था और उसके मुख पर एक ऐसा अबोध भोलापन टपकता था जिसके कारण मेरा मन बरबस अज्ञात दुःखभरी अनुभूति से भर आता।

"मैं उसे सान्त्वना नहीं दे सका—एक ऐसा उत्तर जो उसके दिल को सन्तुष्ट कर सके। तभी उसको बुलावा आ गया और वह चली गई। उसकी कसक आज भी मेरे हृदय में है। सवेरे मालूम हुआ वह लड़की मर गई, कारण अज्ञात। फिर उसकी लाश को भी शीघ्रातिशीघ्र जला दिया गया।

"अनूपसिंह राक्षस है। मैं कहता हूँ कि इसके पापों का गिन-गिन कर बदला लिया जाय।"

शिव ने कहा, "मैं एक पर्चा निकालूँगा। मैं इस अनूपसिंह की नींद हराम कर दूँगा।"

चिमन की आँखों में भय नाच उठा। शिव के मुख पर जो उत्तेजना थी, वह बड़ी भयावह थी।

चिमन ने कहा, "नहीं भैया नहीं! अब तुम उधर मत जाना, तुम्हें मालूम होना चाहिए कि सूरज कुँवर तुम्हें देखते ही गोली से उड़वा देगी।"

शिव ने कुछ नहीं कहा। वह दीवार के सहारे खड़ा हो गया। चिमन उठते हुए बोला, "मुझे जल्दी वापस लौटना है। लो देखो, मैं तुम्हें केसर का पत्र देना तो भूल ही गया।"

चिमन ने केसर का पत्र निकाल कर शिव को दिया।

शिव ने चिमन से अनुरोध किया, "रोटी खाकर जाना, ऐसी भी क्या जल्दी है?"

"नहीं भैया, मैं रोटी नहीं खा सकूँगा। मुझे अभी, इसी घड़ी जाना है!"

"लेकिन······?"

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं। मैं जा रहा हूँ। जरूरी काम है। ठकुराणी सा मेरा इन्तजार कर रही होंगी। मैं तो राणी सा के पास आया था—कोई सन्देशा लेकर। तुम्हारा पत्र देने मुझे यहाँ तक आना पड़ा।"

विमन चला गया।

× × ×

२३

शिव अपनी बिछी चादर पर लेट गया। लिफाके में बन्द पत्र उसके पास पड़ा है। हल्के पीले रंग का लिफाफा जिस पर मोतियों जैसे साफ अक्षरों मे लिखा था 'शिव को'। ऊपर लिखा—'दूसरा कोई भी न खोले।'

शिव ने अन्यमनस्क भाव से एक बार पड़े हुए लिफाके को दुबारा देखा, देखता रहा। खिड़की की राह कोई कागज का टुकड़ा उड़कर आ गया था। उसकी खड़खड़ाहट ने उसे चौंका दिया था। उसके जड़वत् शरीर में किंचित चंचलता दौड़ गई।

उसने तुरन्त उस लिफाफे को फाड़ कर पढा—

प्रिय शिव,

पत्र तुम्हे उस समय लिख रही हूँ कि जब रात का सन्नाटा सारे महल पर छाया हुआ है। यह सन्नाटा रात के अन्धकार के कारण और भयानक हो गया है। खिड़की के पास जलता हुआ दीपक हवा से रह-रह कर इस तरह कांपता है जैसे मेरे मन में अस्थिर विचार-लहरें हों।

एकान्त है।

एक दासी दरवाजे के पास खड़ी-खड़ी ऊँघ रही है। ऊँघते-ऊँघते जब वह चौंकती है तब उसकी आंखो मे भय नाच उठता है और वह क्षण भर के लिए ऐसा महसूस करती है कि वह अत्यन्त सजग है लेकिन दूसरे ही क्षण वह पुनः ऊँघने लगती है।

अब रात का सन्नाटा भंग हो गया।

मेरे पति के कमरे से गीत का स्वर आने लगा है और गीत के साथ नृत्य की छुन-छुन ! कोई तवायफ गा रही होगी।

पत्र में उसका मधुर और दर्दीला स्वर बाधा पहुँचा रहा है। बार-बार उसका प्रभावशाली स्वर मेरे मस्तिष्क के तारतम्य को भंग कर रहा है। वह गा रही थी कोई गजल। कदाचित् वह स्वयं प्रेम की सताई हुई होगी, वर्ना ऐसी कसक बाजारू गायिकाओं में कैसे आ सकती है, जब कि गाना उनका पेशा है।

दो हिजड़े बाहर खड़े हैं। पता नहीं, वे किस प्रसंग को लेकर ऊटपटांग बातचीत कर रहे हैं, लेकिन उनकी बातचीत में अश्लीलता और विकृत प्यार की चर्चा है। वे दोनों किसी लड़के की खूबसूरती का वर्णन कर रहे हैं और दोनों चाहते हैं कि वह उन दोनों में से किसी एक को चुन ले।

ऐसे समय में मेरा यह पत्र, जिसकी एकरूपता बाहरी कारणों से भंग होती जान पड़ेगी, लिखा जा रहा है। तुम जानते हो कि मैं सम्पूर्ण नारीत्व और सतीत्व से तुम्हें प्यार करती हूँ। अपने पति से मुझे घृणा है, उसकी दयनीय दशा के कारण मेरे मन में उसके प्रति जो करुणा थी, उसको विकृत और राक्षसी मनोवृत्ति के कारण वह समाप्त हो चुकी है। वह दिन भर शराब पीता है। पौरुष-हीन होकर भी छोकरियों के साथ भोंडा प्रेमाभिनय करता है। उसके इर्द-गिर्द रहने वाले जीहजूरिए और चापलूस उसके नाम पर बेचारी नादान लड़कियों को भ्रष्ट करते हैं। अनूपसिंह उसमें आनन्द लेता है, सन्तोष पाता है। कितना विकृत है यह पुरुष !

ठकुराणी सा नहीं चाहती कि उनका बेटा भोग-विलास से अलग हो। उसकी भी यही इच्छा है कि वह छोकरियों, शराब और भोग के अतिरिक्त कुछ सोचे ही नहीं। क्योंकि वे चाहती हैं कि तमाम गाँवों का शासन उनके हाथ में रहे, केवल उनके हाथ में। ठकुराणी सा में शासन करने की बड़ी लालसा है। उनकी चाल, ढाल, व्यवहार, बर्ताव किसी सिंहासन पर बैठी महाराणी से कम नहीं है। किसी को दण्ड देने में या डाँटने में उन्हें गौरव लगता है। उन्हें एक अनिर्वचनीय सन्तोष मिलता है।

वह रात-दिन एक ही काम में लगी रहती है, वह काम है चन्दा को पराजय देना। उसके लिए वे महाराणी सा से सांठ-गांठ कर रही हैं। मुझे ऐसा लगता है कि कोई भयंकर दुर्घटना होने वाली है।

कल ठकुराणी सा मेरे पास आई थीं।

मैं दोपहर का खाना खाकर पलंग लेटी थी। उनीदी आंखों से झाड़-फानूसों को देख रही थी। हिलते हुए झाड़-फानूस की छायाएँ प्रेतात्माओं सी लग रही थीं। तभी दासी ने आकर कहा, "कुँवराणी सा, कुँवराणी सा!"

मैंने करवट बदल कर कहा, "क्या बात है?"

दासी ने कहा, "ठकुराणी सा आ रही हैं।"

"यहाँ?"

"हाँ!"

नहीं री!"

"नही सा वे आ रही हैं। मैंने अपनी आँखों से देखा है।"

मैं तुरन्त अदब से बैठ गई। अपने वस्त्रों को ठीक किया। जल्दी से सिर पर कंधों की ओर थोड़ा-सा घूँघट खींच कर खड़ी हो गई। हालांकि आज कल हम दोनों परस्पर एक दूसरे की बड़ी दुश्मन है, फिर भी मुझे उनकी अगवानी के लिए कमरे के दरवाजे तक जाना पड़ा। मैंने मौन रहकर उनकी अगवानी का संकेत किया और किसी आन्तरिक प्रेरणा से अभिभूत होकर मैं विवश-सी उनके चरणों में झुक गई।"

उन्होंने मुझे आशीष नहीं दी। वे पलंग पर बैठती हुई बोलीं, "बहू! मैं चाहती हूँ कि तुम अपना हठ छोड़ दो।"

"कौन सा हठ?" मैंने भोलेपन से पूछा।

"जान कर अनजान बनने में क्या लाभ हो सकता है? मैं चाहती हूँ कि तुम अनूपसिंह के चरणों में पड़ कर क्षमा माँग लो।"

"किस बात की?"

"अपनी गलतियों की। कह दो, भविष्य में मैं तुम्हारे इशारे पर चलूँगी। बहू! अगर मेरे बेटे ने गुस्से में कोई कदम उठा लिया तो अनुचित ही होगा।"

"मैंने कोई कसूर नहीं किया।"

"अगर तुमने मेरा कहना नहीं माना तो मैं उसका दूसरा विवाह कर दूँगी।"

"कर दीजिए। आप हमेशा क्यों मुझे ऐसी धमकी देती हैं?"

मेरा उत्तर स्पष्ट था। इस उत्तर से उनकी आंखों में अंगारे बरस पड़े। वे अपने मन का गुस्सा दबा कर बोलीं, "तुम्हारी इन्हीं बातों ने तुम्हारे व.

को दीवान बनाने से रुकवा दिया। अनूपसिंह ने तुम्हारी सारी बातें महाराज-कुमार सा के सामने रख दी थीं।"

"मैंने कह दिया न, मुझे जान देना मंजूर है।"

सूरज चली गई।

जाते-जाते उन्होंने दरवाजों को बड़े जोर से खुले होने पर भी खोला और मुझे धमकी दी कि तुम्हें तड़पा-तड़पा कर न मारूँ तो मैं अपने बाप की असली बेटी नहीं।

बाद में मुझे मालूम हुआ कि वे मेरे द्वारा भी वही काम करवाना चाहती हैं जो वे खुद कर रही हैं। मतलब यह है कि मैं अपने पति को व्यस्त रखूँ और वह राजधानी जानकर चन्दा का पतन करा दें लेकिन मुझे यह सब मंजूर नहीं है। मुझे प्राण देने में किसी तरह का भय नहीं है, पर मैं इन सबसे सम-झौता नहीं कर सकूँगी।

इसके थोड़ी देर बाद सारे महल में चर्चा चल पड़ी कि ठाकुर सा का विवाह होने वाला है। जो चर्चा बीच में ठण्डी पड़ गई थी, वह फिर चल पड़ी।

शिव, मुझे इसकी कोई चिन्ता नहीं है। विवाह एक नहीं वह दो-चार कर ले, पर उसका परिणाम इतना भयानक होगा, जिसका अनुमान हम नहीं लगा सकते।

तुम्हारा शरीर ठीक होगा।

सच शिव, मुझे तुम्हारी बहुत याद आती है। रात-दिन और हर घड़ी। मैं भी यहाँ अन्य स्त्रियों की तरह सब कुछ प्रबन्ध कर सकती हूँ। तुम यह भी जानते हो कि यहाँ गोले निर्जीव और अनुभूतिहीन इन्सान होते हैं और अपने स्वामी और स्वामिनी के एक-एक संकेत पर अपने आपको बलिदान कर देते हैं, लेकिन मैं अपने चरित्र को ऊँचा रखना चाहती हूँ। जिन लोगों में ठकुराणियों के अनैतिक भोग-विलास के किस्से प्रचलित हैं, उन्हें मैं अपने प्रेम के द्वारा एक नये सत्य की जानकारी देना चाहती हूँ। मैं चाहती हूँ, हजारों कष्ट भोग कर भी मैं तुमसे एकनिष्ठ प्रेम करूँ।

पत्र का उत्तर जल्दी दोगे।

तुम्हारी—
केसर

शिव ने पत्र बन्द कर दिया। वह पूर्ववत् गम्भीर बना बैठा रहा। घर सूना और मन में सहस्रों तूफान !

× × ×

२४

....

चन्दा ने दूसरे ही दिन शिव को दीवानजी के सामने पेश किया। दीवानजी ने उसे गालियाँ देते हुए कहा, "साला तुम्हें जिन्दा रहना है या मरना है ? अगर भविष्य में तुमने इस तरह की बात मुंह से निकाली तो मुझसे बुरा कोई न होगा। मा''''''के मिर्चे भरवा दूंगा समझे !"

शिव गर्दन नीची करके खड़ा रहा। उसके मुँह से एक भी शब्द न निकला। वह अपने विचारों के द्वन्द्व को अपने हृदय में बड़ी कठिनता से दाबे खड़ा रहा। अचल और स्थिर !

दीवानजी अपनी कुर्सी पर ही उछल-कूद रहे थे। उनका उछलना जोकर जैसा नहीं था बल्कि वे इस बात को बता रहे थे कि उन्हें बडा गुस्सा आ रहा है। उन्होंने अपनी मूँछों पर ताव देकर कहा, "ओ बे, तू साला मेरी बात को जवाब देगा या मैं मा''''''के दो-चार जुते दूँ ? भैरूँसिंह को बुलाकर ला, साले की''''में मिर्चे भर ही दे।"

शिव के चेहरे पर क्रोध भरी परेशानी थी, लेकिन उसके मुख पर किंचित् भी भय नही था। निरन्तर जीवन में अत्याचार सहते-सहते जैसे वह अत्याचार का आदी हो गया है। वह नि.शंक भाव से बोला, "मेरा कोई कसूर है अन्नदाता ?"

"कसूर, इससे बड़ा कसूर क्या हो सकता है कि तू हमारे मामलों में हस्तक्षेप करे और हमारी आन और बान को अत्याचार कहे। देख शिवड़ा, मैं तेरी खाल उधेड़ कर रख दूंगा, या तू सीधे-सीधे ढंग से रास्ते पर आजा।"

"मैंने कोई कसूर नहीं किया। मेरा कोई भी गलत रास्ता नहीं है। मैं सिर्फ न्याय चाहता हूँ। क्षत्रियों की मान-मर्यादा और तपस्या के महान् प्रतीक

आपसे न्याय माँगता हूँ कि क्या किसी मजबूर की बहू-बेटी को उठा कर जनानी ड्योढी मे लाना गुनाह नही ? किसी गरीब बाप की बेटी को खरीद कर अपने ऐश की चीज़ बनाना अन्याय नहीं ? दहेज में निर्जीव चीजों की तरह गोले-गोलियों को देना अत्याचार नहीं ? अन्नदाता ! हर इन्सान में प्राण होते हैं, उन प्राणों में सुख पाने की लालसा होती है, किन्तु आपके यहाँ हजारों इन्सान कीडो से बदतर और पशुओं से वाहियात जीवन गुजार रहे हैं ।"

भैरूंसिह आगे बढ़ा । उसने शिव का गला पकड़कर जोर से धक्का दिया । सामने पत्थर की दीवार थी । दीवार पर बकरी को दबोचते हुए शेर का भित्ति-चित्र था । उस भित्ति-चित्र के उभरे हुए शेर से शिव का सिर टकरा गया । खून की पतली लकीर उससे गालों को छूती हुई वह गई और सीने पर आकर वीभत्स रूप मे चमक उठी ।

भैरूंसिह के चेहरे पर उन खून के दागों की कोई प्रतिक्रिया नही हुई । उसने फिर पीछे से शिव की गर्दन पकड़ी और वह ढोल की तरह अप्रिय-स्वर में बोला, "साला, जबान चलाता है । मा·········की पसली-पसली तोड़कर दूँगा । माँग माफी, माँग !"

भैरूंसिह ने उसे एक बार फिर धक्का दिया । इस बार शिव चेता हुआ था । वह सँभल गया । हालाँकि भैरूंसिह के जोरदार धक्के को वह सहन नही कर सका और अगर वह अपने दोनो हाथ आगे नही बढ़ाता तो उसका सिर अवश्य फूट जाता, कदाचित् खून की पतली लकीर की चौड़ाई बढ़ जाती और वीभत्स दाग और अधिक भयानक हो जाते ।

शिव ने अपने जबान खोलनी चाही । उसके होंठ फड़कने के लिए आतुर हुए, तभी भैरूंसिह ने उसकी गर्दन को मरोड़ते हुए, "पहले दीवानजी के चरणो में पकड़कर माफी माँग ।" और उसने जबरदस्ती धक्का देकर शिव को दीवानजी के चरणो में गिरा दिया ।

दीवानजी अहम् से बोले, "इस पर कोई इल्जाम लगाकर फाँसी पर लटका दो ।"

तभी चन्दा ने प्रवेश किया । उसके मुख पर स्थिरता थी और आँखों मे शिकायत की हल्की छाया ।

दीवानजी को नमस्कार करके चन्दा बोली, "इस मूर्ख को ऐसा कड़ा दण्ड न

दीजिए। यह नासमझ है और हठी भी लेकिन इन्साफ़ के धनी अगर ऐसा करेंगे तो ठीक नहीं रहेगा।"

"आप इस बदजात को नहीं जानती !"

"मैं क्षमा चाहती हूँ, अगर दीवानजी को बुरा न लगे तो मैं कुछ अर्ज करना चाहती हूँ।"

"कहिए !"

"इसे इतना कड़ा दण्ड मत दीजिए। मैं इसे समझा दूँगी। इस पर भी अगर यह नहीं माना तो आप इसे जो चाहे दण्ड दे सकते हैं।"

"समझा कर आप भी देख लें, पर मुझे यह समझा-बूझता नही लगता है। देख नही रही, इसकी आंखों के पाजीपन को। लगता है कि यह छटा हुआ बदमाश है।"

"बदमाश नही होता तो ठकुराणी जी साधूपुर इसे अपने यहाँ से नहीं निकालती।"

"अच्छा, फिर इसे राज्य से निकल जाने की आज्ञा दिला दी जाय।"

"लेकिन····?" चन्दा ने कुछ कहना चाहा।

"लेकिन-वेकिन मैं कुछ नही समझता, बस इसे हमारे राज्य से चले जाने की अभी आज्ञा दिला दी जाय। ऐसे साँपों के बेटों को मैं अपने यहाँ पलते नही देख सकता। आजादी का दीया जलायेंगे ! प्रजा में जागृति पैदा करेंगे !"

चन्दा ने तेज स्वर मे कहा, "आप कुछ समझते भी हैं ?"

दीवानजी शान्त हो गये। टुकुर-टुकुर चन्दा की बदली भौंहों को देखने लगे।

चन्दा ने शिव को अपने साथ लिया और अपनी हवेली में आई। चन्दा के घर के आगे कई सेठ खड़े थे। चन्दा ने किसी को नमस्कार नही किया। वह उन्हें बैठने के लिए कह कर भीतर गई। उसके साथ शिव था।

शिव को इत्मीनान से बिठाते हुए उसने कहा, "देख शिव, तू योग्य आदमी है। मैं जैसा कहती हूँ वैसा कर ले, इसमें ही तेरा भला है।"

शिव तड़प कर बोला, "मैं कुछ भी करना नही चाहता। मुझे इस राज्य में नही रहना है। मैं यहाँ से चला जाना चाहता हूँ।"

चन्दा ने उसकी तरह धैर्य नही खोया। वह अत्यन्त संयत स्वर मे बोली, "इस तरह की उतावली से क्या होगा ? इस तरह तुम अपना और उन हजारों

अबलाओं का कुछ भी भला नहीं कर सकोगे ? मेरी बात मानो और राजाजी व दीवानजी से माफी माँगकर कोई अच्छी नौकरी कर लो।.......अरे तुम तो पढ़े-लिखे हो, चाहो तो मैं तुम्हें कोई अफसर बनवा सकती हूँ।"

शिव का आक्रोश ज्वालामुखी-सा फूट पड़ा। वह सेठानी के चेहरे पर दृष्टि जमाकर बोला, "आप बहुत बड़ी हैं सेठानीजी, आप न्याय और हुक्म को भी बदल सकती है। चाहें तो मुझे बहुत बड़ा आदमी भी बना सकती हैं, किन्तु मैं इतना बड़ा आदमी नहीं बनना चाहता हूँ।''''मैं आज ही इस राज्य को छोड़कर चला जाऊँगा। मुझे यहाँ की हर वस्तु में खून की बू आती है, आहों का असर जान पड़ता है। मैं इस अन्याय, इस अत्याचार को मिटाऊँगा।"

चन्दा ने नौकर को आवाज दी। नौकर अदब से आकर खड़ा हो गया। चन्दा ने उसे शर्बत लाने को कहा।

शिव ने असमर्थता प्रकट करते हुए कहा, "मैं शर्बत नहीं पीऊँगा, आप कहें तो मैं यहाँ से चला जाऊँ ?"

"क्यों, मेरे यहाँ का शर्बत पीना भी तुम्हें गवारा नहीं ?"

"ऐसी बात नहीं है। पर सेठानीजी, आप एक अबला होकर जब हजारों अबलाओं का दर्द नहीं समझ सकतीं तो फिर दूसरों से कुछ उम्मीद रखने का प्रश्न ही नहीं उठता। आप कभी क्षण भर के लिए भी गोली बनतीं तो मालूम होता कि पीड़ा क्या होती है ! खैर, मैं भी आपको ही दर्द सुनाने लगा !'''' अच्छा मैं चलूँ !"

"जाओ, लेकिन तुम यह काम अच्छा नहीं कर रहे हो।"

"मैं अपना भला-बुरा खूब समझता हूँ।" कहकर शिव चला आया। वह सीधा आत्मारामजी के पास गया। आत्मारामजी लोकमान्य तिलक का 'कर्मयोग' पढ़ रहे थे। शिव को उदास और उद्विग्न देखकर उन्होंने ग्रन्थ को बन्द किया और उसकी ओर गम्भीरता से देखा। फिर उसके घावों पर मरहम-पट्टी करते हुए बोले, "क्या बात है ? यह सब कैसे हुआ ? इतने उदास क्यों हो ?"

"मैं यह राज्य छोड़कर जा रहा हूँ।"

"कहाँ ?"

"दूसरे राज्य में।"

"क्यों ?"

"ऐसा सरकारी हुक्म मिलने वाला है।"

"किस अपराध में ?"

"अपराध यह है कि मेरे विचार उनके बुरे कामों की मुखालफत करते हैं। मैं सत्य का उद्घोष करता हूँ। मैं डंके की चोट कहता हूँ कि जनानी ड्योढ़ियों में सिसकती नारियों को मुक्त करो। दास प्रथा को मिटाओ।…"

आत्मारामजी के चेहरे पर करुणाजनित गम्भीरता नाच उठी। बोले, "क्या करूँ, कानून और अधिकार सारे के सारे इनके पास हैं। जब इनके मन में आती है, ये कोई न कोई नया जुल्म करने लगते है। लेकिन मैं इस घटना से शान्त नहीं बैठने का। मैं आज ही खबर बनाकर देश के अखबारो में भेजता हूँ ताकि जनता कम से कम इनकी बुराइयो और अत्याचारों से परिचित तो होती रहे।"

शिव ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। वह समीप पड़े किसी अखबार के पृष्ठ का एक कोना जरा-सा तोड़ कर उसे दाँतों के बीच दबाकर उसके टुकड़े-टुकड़े करने लगा।

"कहाँ जाओगे ?"

"कुछ तय नहीं है।"

"मैं बताऊँ, अजमेर चले जाओ।"

"कहीं भी चला जाऊँगा," कागज का अन्तिम टुकड़ा उसके निचले होंठों से चिपक गया था।

"बस चला जाऊँगा, लेकिन इस बार जीवन में एक नया कदम उठाऊँगा," उसने दीवार पर दृष्टि जमा कर कहा। दीवार पर किसी अधकचरे चित्रकार द्वारा पेन्सिल का बनाया हुआ हाथी का एक भौंडा सा चित्र था।

"वह कदम कौन-सा होगा ?" आत्मारामजी की दृष्टि उस पर टिक गई। जिज्ञासा के स्पष्ट भाव उनकी दृष्टि में तैर उठे।

"मैं जीवन मे विचारों की अकर्मण्यता छोड़ देना चाहता हूँ। यह बौद्धिक-विलासिता मनुष्य को विद्रोह के प्रति उदासीन बनाती है। मैं इस राज्य से निर्वासित होकर भी इसी राज्य मे रहूँगा और गुप्त भेष मे राजाजी और अँग्रेजो की हकूमत का विरोध करूँगा। आप ठीक कहते हैं कि जब तक देश में न्याय और अधिकार सर्वसाधारण के लिए नहीं बनेंगे, तब तक हम किसी भी जुल्म को नहीं मिटा सकते।"

आत्मारामजी को इसकी बातों से सन्तोष हुआ और उन्होंने शिव की पीठ को थपथपाते हुए कहा, "तुम कुछ जरूर करोगे, पर मैं तुम्हें अपने से दूर रखना नही चाहता हूँ। देखो शिव, मैं अभी सेठानीजी के पास जाता हूँ और उनसे कह कर तुम्हारे देश-निकाले के होने वाले आदेश को रद्द करवाता हूँ। ....तुम घर पहुँचो।"

"लेकिन मैं यह नहीं चाहता।"

"तुम यह नही चाहते, यही,तुम्हारी सबसे बड़ी मूर्खता है। आखिर यह हठ-धर्मी क्यों? कुछ बातों में समझौता करो। समझौते के साथ कुछ अभिनय करना सीखो। अभिनय के साथ यह जानो कि वक्त के साथ हर अभिनय नया रूप और नयी प्रतिक्रिया के साथ होता है। मैं सेठानी को समझा दूंगा। वह तुम्हारी बड़ी मदद करेंगी। तुम यहाँ रहकर उन हजारो गुलामो मे चेतना का मंत्र फूंको।"

शिव को उनकी यह बात पसन्द नही आई, पर स्पष्ट रूप से उसे अस्वीकार भी नही कर सका।

आत्मारामजी सीधे चन्दा के पास गये।

उसे समझाया। आत्मारामजी कांग्रेस और नगर के अत्यन्त प्रभावशाली व्यक्ति थे। चन्दा ने जब उन्हें अपने पास आया देखा तो वह दम्भ से अकड़ गई। उसने आत्मारामजी के अश्वासन पर कि शिव भविष्य में महाराजा के विरोध में जरा भी अपमानसूचक रवैया अख्तियार नही करेगा, उसके निर्वासन के आज्ञा-पत्र को रद्द कराने का वचन दिया।

शिव का निर्वासन रुक गया।

लेकिन उसे वहाँ रहना अच्छा नही लग रहा था।

× × ×

२५

...

केसर का एक पत्र और आया था।

शिव उस दिन उन्मन-सा बैठा था। उसका मन किसी भी कार्य मे न लग रहा था। रह-रह कर उसे आज अपने माँ-बाप की याद आ रही थी। उन दोनों का संघर्षमय जीवन, उनका अभावों में जीना और एक दिन पीडा-मय मृत्यु को पा जाना, उसके मन-मस्तिष्क में द्वन्द्व को उत्पन्न कर रहा था। ऐसे समय उसे केसर का पत्र मिला। पत्र काफी लम्बा था। गत दिनों की छोटी-मोटी सभी घटनाओं के वर्णन के अतिरिक्त शिव ने उस पत्र की अन्तिम पंक्तियाँ पढ़ीं—

तुम्हारे पत्र मे काफी संयम और धैर्य था। उसने मुझे सांत्वना दी। तुमने लिखा है कि परिस्थिति ऐसी है कि आज का यह अधिकारीवर्ग सत्य को झूठ और झूठ को सत्य बना सकता है। ऐसी परिस्थिति मे जीवन के प्रति उठाये गये किसी भी गलत कदम का परिणाम बहुत बुरा हो सकता है।

तुमने लिखा कि मेरी सास सामन्तवाद की विकृतियों की प्रतीक है। उससे समझौता न करने का परिणाम यही हो सकता है कि वह मुझे समाप्त कर दे और बदले में मैं उसका कुछ भी बुरा न कर सकूँ, क्योंकि वह मुझसे शक्तिवान और चतुर है।

तुमने लिखा है कि मेरी सास मेरे पति को भी समाप्त कर सकती है क्योंकि तुम्हे ऐसा लग रहा है कि वह यहाँ अपना थोड़ा भी विरोध सहन नहीं कर सकती।

ठीक है, लेकिन शिव मैं भी तुम्हें यकीन दिलाती हूँ कि यदि कभी भी ऐसा मौका आया तो मैं अपनी जान पर खेल जाऊँगी। मुझे मृत्यु का कोई भी भय नहीं। मैं उस आशा को भी छोड़ दूँगी जिसके कारण मैंने इतने अनुचित अत्याचार सहे है। तुम यह अच्छी तरह जानते हो कि मैं तुम्हें प्यार करती हूँ और जीवन भर करूँगी। पर कभी-कभी मुझे ऐसा लगता है कि हमारे प्यार से भी एक बड़ी चीज है, वह है—कर्त्तव्य। कर्तव्य का पद ऊँचा होता है। क्या हम लोग अपने प्यार के लिए उन अमानवीय कृत्यों के पोषक तत्त्वों को भी सहते रहे जो सर्वथा सबके लिए घातक हो सकते हैं?

मेरी सास राजधानी गई हुई है। कुछ दिन पहले उसके पीहर वालों ने आकर उसका शोक तुड़वा दिया है। वह किसी भी तरह चन्दा को समाप्त कराने की तरकीबें सोच रही है। पता नहीं, उसमें कौन सी ऐसी कुण्ठा है

जिसके कारण वह खामखा किसी दूसरे को अपना दुश्मन समझने लगती है। चन्दा सेठानी का उससे कोई और किसी तरह का सम्बन्ध नहीं है, और ठाकुर सा की मृत्यु के बाद किसी तरह का भी सम्बन्ध शेष नहीं रहा है। फिर भी, बस, उसने यह दृढ़ निश्चय कर लिया है कि वह उसका खात्मा करके रहेगी अन्यथा यह उसकी बहुत बड़ी हार समझी जायगी।

आज उसे गये तीन दिन हो गये हैं। पीछे से विवाह की तैयारियाँ जोर-शोर से हो रही हैं। सुनती हूँ कि इस बार की दुल्हिन मुझसे भी अधिक सुन्दर और सलोनी है। अच्छे ठकुर की बेटी है, पर उस ठाकुर की आर्थिक दशा अच्छी न होने की वजह से वह अपनी बेटी का बोझ अपने सिर से उतारना चाहता है।

मैं समझती हूँ कि तुम प्रसन्न होओगे। पत्र जल्दी देना।

तुम्हारी
केसर

२६

ठकुराणी सा राजमहल पधारी। महारानी ने सूरज का भव्य स्वागत किया। उसको एक सुन्दर कमरे में ठहराया गया जो जनानखाने में ही था। चार दासियाँ उसकी सेवा में रखी गईं। उसके पास ही एक शीश-महल पड़ता था। वह शीश-महल इतना सुन्दर और आकर्षक नहीं था जितना आमेर का शीश-महल है। पर उसमे भी अगर आप एक दिया जला दें तो कई दिये जले हुए नजर आयेंगे। महारानी ने कहा, "रात को हम इसी शीश-महल में बातचीत करेंगी।"

दोपहर को सूरज आई थी।

सारा दिन वह विभिन्न कार्यों में व्यस्त रही।

सबसे पहले वह महारानी द्वारा आयोजित सम्मान में सम्मिलित हुई। रसोड़े मे अनुपम भोजन बना था। उस स्वादिष्ट भोजन में [illegible] ने कई

ठाकुरों की बीवियों को भी सम्मिलित किया। जब वे मखमली आसनों पर खाना खाने बैठीं, तब उनकी परस्पर चुहल-बाजियाँ चल पड़ी।

महारानी ने मुस्कराकर कहा, "क्यों सूरजबाई सा, आपकी तबियत ठीक है न?"

सूरज महारानी के रिश्ते में बहिन लगती थी। उन दोनों का परस्पर बहुत अधिक स्नेह था। जब कभी दोनों पर कोई विपत्ति पड़ती तो वे दोनों इस तरह मिल जाती थीं, जैसे नदी की दो विपरीत धाराएँ मिल जाती हैं, जैसे एक नदी के बीच किसी ने दीवार खड़ी कर दी थी जो अब हट चुकी हो।

महारानी द्वारा यह प्रश्न पूछे जाने पर उसने हड़बड़ा कर अपनी दृष्टि को और तेज करके कहा, "क्यों, क्या बात है, ऐसी?"

"देखो न, हड्डियाँ निकल आई हैं।" उसका स्वर मजाक भरा था, जिसे सुनकर सब खिलखिला पड़ी।

हँसी के रुकते ही ठाकुर मणिसिंह की पत्नी बोली, "अरे आप उस विचित्रसिंहजी की बहू तेज कुँवर को क्यों नहीं देखती?"

"क्यों, उसमें कौन सी नई बात पैदा हो गई है?"

"बात पुरानी है, पर है मजेदार?"

"कैसे?"

"इनके फिर बच्चा होने वाला है। सोलहवाँ बच्चा!"

"क्या कहती हैं?" महारानी ने विस्मय से पूछा।

"ठीक कहती हूँ जैसा नाम, वैसा काम। तेज कुँवरजी कुटुम्ब बढ़ाने में बड़ी तेज हैं।"

जोर की हँसी।

हँसी के साथ ही गहरा सन्नाटा छा गया। सन्नाटा था क्षण भर का, पर उस अप्रत्याशित क्षणिक सन्नाटे ने सबकी आँखों में विस्मय उत्पन्न कर दिया।

आखिर महारानी ने ही मौन तोड़ा "अरे, एक बात मैं कहना ही भूल गई।"

"वह क्या?" कई स्वर एक साथ सुनाई पड़े।

"बात यह है कि क्षत्राणी का क्षत्रियपन जाता रहा।"

"कैसे?"

"अरे भई, किसी को कहिएगा मत," महारानी ने तर्जनी उँगली से सबको हिदायत दी। उनकी आँखों की पुतलियों की छाया में विस्मय नाचा और भंगिमा से ऐसा लग रहा था जैसे वह कोई रहस्यभरी बात कहने जा रहीं हैं। सारी उपस्थित स्त्रियों के कान खड़े हो गये। वे साँस रोक कर महारानी की बात की प्रतीक्षा करने लगी।

महारानी ने जल्दी-जल्दी अपनी पलकें नचा कर कहा, "ठाकुर जोतसिंह हैं न, अरे वही महेन्द्रगढ़ के ठाकुर, उनकी बहू के बच्चा होने वाला है!" यह कह महारानी ने अपनी बात को बन्द कर दिया। उसने सोचा कि उनकी अधूरी बात पर सबकी जिज्ञासा जागेगी, पर किसी ने कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई। क्योंकि बिस्मिल्लाह मजेदार नही हुई थी।

एक ने तनिक नाक-भौं सिकोड़ कर कहा, "बात बनी नही।"

"क्यों?" महारानी ने कहा।

"बच्चा तो हर स्त्री के ही होता है।"

"लेकिन मैने यह सुना है कि मामला गड़बड़ है।"

"कैसे?"

"कैसे क्या?" महारानी ने कहा, "सुनने मे आया है कि ठकुराणी पीहर से ही पेट मे बच्चा लेकर आई थी।"

"क्या कहती हैं?....." सूरज की आँखें विस्मय से विस्फारित हो गईं। दोनों हाथ यंत्रवत् गालों पर चले गये।

"मैं ठीक कहती हूँ, पर आप किसी से कहना मत। देखिए बात बाहर चली गई तो हमारी बदनामी होगी, आखिर जोतसिंह अपने रिश्तेदार ही होते हैं। क्यों बैना (बहिन), क्या मैं अनुचित कह रही हूँ?"

"नही!" मणिसिंह की बहू बोली।

"फिर सुनो, देखो एक बार फिर आप सबसे हाथ जोड़कर कहती हूँ कि आप यह बात बाहर न निकालिएगा। इसमे जोतसिंह की बड़ी बेइज्जती होगी।"

सबने आश्वासन दिया कि वे इस बात को बिलकुल पचा कर रखेंगी।

तब महारानी ने कहना शुरू किया, "हुआ यह कि ठाकुर जोतसिंह के बुढ़ापे को देखकर उसके ससुराल वालों ने अपनी बेटी उन्हें दे दी। अब आप सब यह पूछेंगी कि अपनी बेटी बूढ़े को क्यों दे दी........मैं बताती हूँ। ठाकुर

सा का ससुर ठहरा गरीब, शराबी और कबाबी। बेटी के लिए सोने की एक मेख भी नहीं रखी। फिर क्या करता ? बूढ़ा हो या जवान, लड़की का कुँवारा-पन तो उतारना ही था !""पर लड़की पहले से ही अपने दूर के रिश्ते के काका के बेटे से प्यार करती थी। लड़की खूबसूरत और आकर्षक है। पढ़ी-लिखी और रंग-ढंग को समझने वाली है। उसने कोई विरोध नहीं किया और ठाकुर से विवाह कर लिया। ठाकुर की बात न पूछो। बूढ़े बैल को सुन्दर गाय ! अफीम खा-खा कर पड़ा रहता था और वह लड़की अपने भाई के साथ""राम, कलियुग आ गया है, बहिन कलियुग !" इसके बाद महारानी चुप हो गईं।

सूरज ने पूछा, "ठाकुर को शायद इस बात का पता नहीं होगा !"

"जरा भी नहीं। वह समझता है कि बच्चा मेरा ही है।"

"*त्रिया-चरित्र जाने ना कोय, पति मार कर सती होय,*" सूरज ने हठात् कहा, और न जाने क्यों उसके चेहरे पर वेदना के काले साये मँडरा गये। उसकी दृष्टि नीचे झुक गई। उसके चेहरे के इस परिवर्तन पर सभी का ध्यान चला गया, पर कोई उसके अन्तस् के मर्म को किंचित् भी नहीं जान पाया। सब की सब एक प्रश्न लेकर चुप बैठी रही। पर महारानी ने इस गम्भीर वातावरण को फिर हल्का कर दिया। वह बोलीं, "एक दिन ठाकुर उसके आगमन पर शंकित हो गया। उसने जासूस की तरह उन दोनों का पीछा किया। लेकिन पढ़े-लिखे चोर भी खूब होते हैं। खरगोश के तीसरे पाँव की तरह उनके काम होते हैं और उनकी खोज-खबर करने वाला पहले से अधिक सतर्क हो जाता है।

उसका भाई राखी पूर्णिमा को आया था।

बहाना था—राखी बँधाने का।

बहिन जो पिछले कई दिनों से उदास थी और वह ठाकुर की बात-बात पर उपेक्षा और अवज्ञा करती थी, एकाएक वह अपने स्वामी की सेवा करने लगी। बूढ़ा बैल गाय की चट्टार से ही मगन हो गया। वह बस खिल-खिल गया।

उसने शंकित होकर पूछा, "क्यों, क्या बात है, ठकुराणी ? आज तुम बहुत खुश हो ?"

"खुश इसलिए हूँ कि कई दिनों से मेरे सिर मे दर्द था जो अचानक मिट गया !"

"दर्द अचानक कैसे मिट गया ?"

"मैं क्या जानूँ ? शायद···!"

"शायद क्या ?"

"यह पुरानी हवेली हनुमान बाबा का चमत्कार ही है। परसों रात को मैंने उनके नाम की मनौती बोली थी कि हे बाबा अगर मेरे सिर का यह भयानक दर्द मिट गया तो मैं तुम्हारे पर चाँदी का छत्र चढ़वाऊँगी। सो शायद ·····!"

ठाकुर प्रसन्न हो गया। उसके होठो पर मुस्कान दौड़ गई। अपनी सफेद मूँछों पर हाथ फेर कर वह बोला, "मै भी यही सोच रहा था !"

"आप क्या सोच रहे थे ?" ठकुराणी ने पास आकर पूछा।

"मैं यह सोच रहा था कि अवश्य मुझे भी तुम्हें यही बात कहनी चाहिए थी कि तुम्हे दवा-दारू से दूर रह कर, ईश्वर को ओर झुकना चाहिए। दवा से जो रोग दूर नहीं होता है, वह ईश्वर की कृपा से तुरन्त ठीक हो जाता है।"

ठकुराणी उनके पास आई। उनके कन्धे पर अपना मुँह लटका कर बोली, "आपने मुझे पहले ही क्यो नही बताया ? फिर मुझे पहले इतने दिन क्यों कष्ट भोगने पड़ते।"

"मैं बस बताने ही वाला था।"

"खैर, कोई बात नहीं।"

महारानी ने कहना एकदम बन्द किया और बोली—"वह बेचारा बूढ़ा क्या जानता, देव-वेव का चमत्कार ? यह चमत्कार उसके प्रेमी के आगमन का था।·······चौदहवीं की रात ठकुराणी ने बूढ़े से खूब प्यार किया। पूर्णिमा को उसका भाई आ धमका।....ठाकुर ने कोई वहम नही किया। वह अपने काम में लगा रहा और ये सब अपने काम में व्यस्त रहे।

दोपहर को ही वे दोनों रगरेलियाँ मनाने लगे।

ठाकुर चाहे अपने आपको कितना ही समझाये, पर ये दुष्कर्म मनुष्य के हृदय को सचेत-सजग करते ही हैं। उसको एकाएक वहम हो गया। वह धीरे-धीरे पत्नी के कमरे की ओर गया और उसने देखा—ठकुराणी अपने भाई की गोद में सोई पड़ी है।

ठाकुर को गुस्सा आ गया। उसने तलवार खींच कर कहा, "रांड की गर्दन धड़ से अलग कर दूंगा।"

वे भीतर घुसे।

चतुर प्रेमी और कुलटा ने मामला समझ लिया और वह खिलाड़ी रांड चीख मार कर भाई को पीटने लगी। ठाकुर हैरान और उसका भाई परेशान। तभी उसने आंख बचा कर अपने भाई को संकेत किया। भाई समझ गया कि यह कोई नाटक है।

अब वह छिनाल उछलने-कूदने लगी।

दोनों जनों ने उसे पकड़ा। वह बड़ी कठिनता से काबू में आई। जब काबू में आ गई, तब लगभग आध घण्टे के बाद उसे होश आया। ठाकुर की तलवार उसके पास पड़ी थी। मारने का इरादा वहीं गायब हो गया।

बेचारा घबड़ाये स्वर में बोला, "तुम्हें यह एकाएक क्या हो गया?"

"ओह! मैं मर जाऊंगी, ठाकुर सा मैं मर जाऊंगी!"

"पर क्यों?"

"वह, वह, बड़ी डरावनी है उसकी सूरत!" कह कर ठकुराणी ने बड़ी नाटकीयता से अपना मुंह छुपा लिया। उसने एक बार नीचे किये हुए ठाकुर के उदास मुख को उंगलियों को चौड़ी करके देखा और अत्यन्त भय-सूचक संकेत करके बोली, "मैं पागल हो जाऊंगी ठाकुर सा, पागल!"

ठाकुर ने जान लिया कि मेरी बहू को भूतनी लग गई होगी, अतः उसने ओझा के पास अपने एक दास को भेजा। कहने का मतलब यह है कि ठाकुर को शान्ति से विचारने का समय ही नहीं मिला। वह बेचारा परेशान सा इधर-उधर भागता रहा। जब ओझा झाड़-फूंक कर चला गया तो वह इतना थक चुका था कि उसने सदा की अपेक्षा अधिक 'अमल' (अफीम) खाया और नशे में बेहोश होकर पड़ गया।...तब उस छिनाल ने अपने प्रेमी के गले में हाथ डाल कर कहा कि इसे कहते हैं—त्रिया-चरित्र! उसने भी उसका लोहा मान लिया। एक सप्ताह तक वह रंगरेलियां मना कर चला गया, बेचारा ठाकुर उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सका।...." महारानी थोड़ी देर चुप रही और फिर वह रुक-रुक कर बोली, "मुझे उसकी डावड़ी बता रही थी कि मेरी ठकुराणी सा को पांचवां नहीं, छठा महीना है। लेकिन वह सबको

यही कह रही है कि मुझे पाँचवाँ ही है। अन्यथा उसके पाप का भांडा फूट जाने की सम्भावना है। क्यों, है न नयी बात ?"

महारानी के चुप होते ही एक अन्य ठकुराणी ने और बोलना चाहा, पर सूरज ने उसे नहीं बोलने दिया। बात वहीं पर समाप्त हो गई।

धीरे-धीरे इधर-उधर की निराधार चर्चा चलती रही।

संध्या के आगमन की सूचना मंदिरों के घड़ियालों व शंखों की पावन ध्वनियों ने दी।

महारानी और सूरज जनाने महल की खिड़की में बैठ गई। खिड़की में पत्थर की जालियाँ बनी हुई थी जिनके कारण वे सबको देख सकती थी, पर उन्हें कोई नहीं देख सकता था। दो-चार दासियाँ इधर-उधर दौड रही थी।

तभी महल के भीतर सेठानी की घोड़ा-गाड़ी ने प्रवेश किया। दो नौकरों ने भाग कर उसका स्वागत किया। सेठानी बड़े अन्दाज से नीचे उतरी। उसने जरी की साड़ी और ब्लाउज पहन रखा था। ललाट पर लाल बिन्दी लगा रखी थी तथा उसके कानों में चमकते झुमके उसकी रूप श्री को बढ़ा रहे थे।

सेठानी ने लापरवाही से अपना पल्ला झटका और सामने खड़े दीवान पर सरसरी नजर फेंक कर वह ऊपर की ओर चली। सन्ध्या के समय प्रायः राजाजी रूप महल में बैठते थे। यह उनके किसी पुरखे का बनाया अत्यन्त सुन्दर कक्ष था। इसमे अनेक चित्र बने हुए थे। ये चित्र उनके समकालीन श्रेष्ठ चित्रकारों द्वारा निर्मित थे।

इस महल में शीशे भी बड़े-बड़े थे।

महारानी ने उसे देखकर कहा, "बैंन ! मुझे ऐसा लगता है कि महाराणी मैं नही यह रांड है।"

सूरज ने दाँत किटकिटा कर कहा, "आप कैसी औरत हैं, अगर मैं आपकी जगह होती तो इतने दिनों में जमीन-आसमान एक कर देती।"

"मैं क्या कर सकती हूँ ?"

"आप वह कर सकती हैं जो कोई नहीं कर सकता।"

"मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझी।"

"वह भी समझ में आ जायगा।"

महारानी ने सूरज की कठोर मुद्रा को प्रश्न भरी दृष्टि से देखा।

सूरज एकटक उन सीढ़ियों की ओर देख रही थी।

"इस रांड ने आकर महाराजा के धर्म-कर्म को भ्रष्ट कर डाला। उन्हें अब रात-दिन शराब ही शराब दिखलाई पड़ती है। वे हर रोज नयी-नयी छोकरियों को जनानी ड्योढी में लाते हैं।…बैन ! मैं बहुत दुःखी हूँ, क्योंकि इनके दुष्कर्मों का प्रभाव मेरे बेटे पर भी पड़ रहा है।"

"तुम यह सब सहन कर सकती हो। मैं नहीं सह सकती। मैं इस हरामजादी का नाश का करके ही छोड़ूँगी। इसने ही मेरे घर में आग लगाई थी और इसकी लगाई आग ने मेरे सुहाग को मुझसे छीन लिया था।"

"तो…?"

"इसको समाप्त हम कैसे करें, यही सोचना है। इसके लिए हमें बड़ी शक्ति की जरूरत है।"

"मैं चाहती हूँ कि रांड का यहाँ आना-जाना जल्द से जल्द बन्द हो जाय, वर्ना यह राज्य ही तबाह हो जायगा।"

सूरज ने उसे आश्वासन दिया, "आप चिन्ता न करें, जो आदमी जितना जल्दी ऊँचा चढ़ता है, वह उतना ही जल्दी नीचे गिरता है। यह प्रकृति का नियम है। इसे कोई नहीं तोड़ सकता।"

दासी ने हाथ जोड़कर कहा, "महाराजकुमार सा आपको याद कर रहे हैं। उनके सिर मे दर्द है।"

"सिर मे दर्द है ?" अपने आप से प्रश्न किया महारानी ने, "तुझे किसने कहा ?"

"अभी-अभी वे बाहर से लौटे हैं। उनका चेहरा परेशान है। मुँह लाल-लाल-सा दीख रहा है।"

"अच्छा !" कह कर महारानी द्वार की ओर लपकी।

"सूरज तुम भी मेरे साथ चलो।"

"इसमें कहने की क्या जरूरत है ?"

महल के भीतर ही भीतर रास्ते बने हुए थे। दो बड़े-बड़े घुमावदार रास्तों को पार करके एक भव्य कक्ष था, उसमें कुमार लेटा था। महारानी ने उसे देखते ही पूछा, "क्या है बेटा ?"

"सिर में अचानक जोर का दर्द उठ आया।"

"फिर डाक्टर को...?"

थोड़ी देर में एक साथ तीन डाक्टरों ने उस कक्ष में प्रवेश करने की आज्ञा चाही।

महारानी और सूरज दोनों पर्दे की ओट हो गईं।

तीनों डाक्टरों ने वारी-वारी से कुमार की परीक्षा ली और फिर गम्भीर होकर विचार-विमर्श करने लगे।

महारानी ईश्वर से प्रार्थना कर रही थी, "मेरे बेटे का दुःख जल्दी हर ले प्रभु!"

× × ×

२७

शीश-महल मे महारानी और सूरज की गुप्त मंत्रणा का गम्भीर आयोजन हुआ। शीश-महल प्रकाश से जगमगा रहा था। दीपक छोटे-छोटे सहस्रों खण्डों में दमक रहा था।

दो मखमली पलंगो पर दोनों बैठी थीं। पास में ही पीकदान रखा था, क्योकि महारानी को भोजनोपरान्त पान खाने की आदत थी। वह हर पाँच-सात मिनटों के वाद दासी को पान के लिए पुकारती थी।

जब उन दोनों की बात शुरू हुई, तब उसने एक साथ दो-तीन पान रख लिये। सूरज ने उससे पूछा, "आप पान बहुत खाती हैं?"

"नही तो!"

"अभी-अभी आपने पाँच-छः पान खा लिये।"

"रात के भोजन के उपरान्त मैं पाँच-दस पान खाती हूँ। पेट में कुछ गड़बड़ी है। ऐसा लगता है कि जो कुछ खाया है, वह कै के साथ वापस बाहर आ जायगा। हजार बार इलाज कराया, पर कोई फायदा नजर नहीं आया। अब बस यही उपाय है कि थोड़ी देर तक पान चबाती रहूँ।"

हवा का तीव्र झोंका आया।

शीश-महल में लगे झाड़-फानूस हिल उठे। उनकी लम्बी छोटी छायाएँ उन दोनों पर फैल गईं। वे छायाएँ जब उनके चेहरों पर से गुजरती थी तो उनके भावों का प्रभाव बदला-बदला-सा नजर आता था।

थोड़ी देर के बाद ही उनकी बातों का सिलसिला पुनः आरम्भ हुआ।

महारानी निचले होंठ पर तर्जनी रखकर बोली, "इसे कहते हैं भाग्य के खेल, अच्छा-भला कुमार था कि यकायक पेट में दर्द उठा और सबके मन में चिन्ता को खड़ा कर गया।"

"लेकिन दर्द मिट भी बहुत जल्दी गया।"

"हाँ, डाक्टरों का कहना है कि कोई विशेष बात नही है, किन्तु फिर भी बड़े लोगो को जरा भी असावधानी नहीं बरतनी चाहिए। तुम यह अच्छी तरह जानती हो बैन, कि बड़े आदमियों की मौत भी बड़े विचित्र ढंग से होती है। जरा-सा सिर दुखा, मृत्यु। जरा-सी खाँसी आई कि क्षय। बस भगवान उन्हें रोगों से बचाये!"

सूरज ने तुरन्त कहा, "राणी बाई सा, ये बातें हम किसी भी समय कर सकती हैं।"

पान की पीक थूक कर महारानी बोलीं, "हाँ-हाँ, क्यों नही कर सकती?" और उसने खँखारा। जोर से खांसी, क्योंकि उसके गले मे पान का टुकड़ा अड़ गया था। बड़ी कठिनता से पान का फँसा हुआ टुकड़ा निकला।

"हाँ-हाँ से काम नही चलेगा, अवसर के बाद आपको कोई नहीं पूछेगा, आपका जरा भी महत्व नही रहेगा।"

"मतलब ?"

"मतलब साफ है। यह चतुर और सुन्दर सेठानी अपने प्रभाव व तिकड़म द्वारा सारे राज्य पर छा रही है। उसके भाई-भतीजे और सगे-सम्बन्धी सबके सब अच्छे-अच्छे पदों पर नियुक्त हो रहे हैं। सेठानी के हाथ में राज्य की व्यवस्था और कानून जा रहा है। मुझे उम्मीद है कि एक दिन राज्य की सेना भी उसके हाथ में चली जायगी और तब!"

सूरज चुप हो गई। महारानी अधिक क्या, थोड़ी-बहुत भी पढी हुई नहीं थी। सूरज की बातें सुनकर उसका मुँह खुला का खुला रह गया। उसके चेहरे पर भय की रेखाएँ नाच उठीं। बड़ी मुश्किल से वह बोली, "क्या कह रही हो, बैन?"

"ठीक कह रही हूँ। मुझे अभी-अभी यह सूचना मिली है कि उसने राजाजी को यह कहा है कि आप दूसरा विवाह कर लें।"

"क्या कहती हो ?"

"कहिएगा मत, अगर आपने हमारे बीच की एक भी बात कह दी तो दोनों की जान की खैर नहीं। राजाजी, इसे भयानक षड्यन्त्र समझेंगे और हमें-तुम्हें शेर के पिंजरे में फिकवा देंगे।"

"मैं किसी को कुछ भी नहीं कहूँगी, तुम विश्वास रखो। मुझे सारी की सारी बातें अच्छी तरह से समझा दो," महारानी का चेहरा मुरझा गया। चेहरे की लालिमा सफेदी में बदल गई। उसने पलंग के सिरहाने के कलात्मक पांये का सम्बल ले लिया। वह कुछ देर तक कुछ भी नहीं बोली। चुपचाप निर्जीव-सी पड़ी रही।

सूरज सोच रही थी—मेरी बातों का राणीजी पर बहुत प्रभाव हो रहा है। अपने तीर को निशाने पर लगा जान वह उदास स्वर में धीमे-धीमे पुनः बोली, "आपको घबराना नहीं चाहिए। मैं आपकी छोटी बहिन हूँ, मेरे होते हुए आपसे आपका यह प्रतिष्ठित पद कोई नहीं छीन सकता। मैं अपनी जान पर खेल जाऊँगी, अपना सर्वनाश कर लूँगी, पर आपके सम्मान को जरा भी आँच नहीं आने दूँगी!"

महारानी ने सूरज के दोनों हाथ पकड़ लिये। सूरज को लगा कि महारानी बेदम हुई जा रही है। उसके तमाम शरीर की शक्ति ही निकल गई है। अन्तस् की अव्यक्त भावना उसकी आँखों में तैर उठी। उसकी इस बात से वह जरूरत से ज्यादा घबरा गई थी।

महारानी ने अत्यन्त घुटे-स्वर में कहा, "मुझे सारी बात चोखी तरह समझा दो। मैं सावधान होना चाहती हूँ।"

सूरज ने कहा, "मेरा एक गोला (दास) और गोली (दासी) आपके महल में हैं। नाम मे दोनों का आपको नहीं बताऊँगी, पर रहते हैं वे दोनों आपके आस-पास ही। वे दोनों सूरत के इतने भले हैं कि कोई यह अनुमान ही नहीं लगा सकता कि ये दोनों भोले-भाले प्राणी भी जासूसी जैसा खतरनाक काम कर सकते हैं! लेकिन मैं आपको बताती हूँ कि वे इतनी ईमानदारी और हुशियारी से काम करते हैं जितना कोई नहीं कर सकता। हमारे यहाँ अँगरेजों

को बहुत ही सफल जासूस मानते हैं, पर इन दोनों ने उन्हें भी मात कर दिया।""मैं उन्हीं दोनों की बतायी हुई बातें आपको बता रही हूँ।

"चन्दा राजाजी पर पूर्णतया हावी है और राजाजी भी उस पर बुरी तरह से फिदा हैं। चन्दा के कारण ही राजाजी बुरे रास्ते पर गये और अब उनका नैतिक पतन इतना हो चुका है कि वे नगर की बहू-बेटियों को भी अपनी वासना का शिकार बनाते जा रहे हैं।""आप यह भी जानती हैं कि आजकल जनानी ड्योढ़ी में हजारों लड़कियाँ हैं।"'ऐसा होना ठीक नहीं। जब यह वैभव-विलास मनुष्य का विवेक हरने लगता है तब यह गृह-दाह को जन्म देता है और फिर आदमी विनाश की ओर बढ़ जाता है।""सेठानी अब राजाजी की बुद्धि निकासने लगी है। जब उसने सोचा कि राजाजी को और कमजोर किया जाय तो उसने तुरन्त राजाजी की दुर्बलता पर चोट की। उसने कहा कि विहार के एक राजा आपके साथ अपनी लड़की का विवाह करना चाहते हैं। वह लड़की अठारह वर्ष की है और वह अपने साथ कई लाख की सम्पत्ति भी लाएगी। शर्त यह है कि पटरानी वही बन कर रहेगी।"'राजाजी, अठारह वर्ष की लड़की का नाम सुन कर खिल उठे।"'जब मुझे यह समाचार मिला, तब मुझसे नहीं रहा गया। हालांकि विधवा होने के बाद कोई भी राजा या सामन्त की बहू इतनी जल्दी घर से बाहर नहीं निकलती, पर मुझे आपके कारण यहाँ आना पड़ा। मैं सारी मान-मर्यादा और धर्म-कर्म छोड़ कर अपनी बैन को बचाने के लिए आ गई।"

"क्या यह सच है?"

"झूठ बोलने से मुझे क्या मिलेगा?"

"तभी इधर राजाजी मुझ से सीधे मुँह बात नहीं करते हैं।"

"सीधे क्या, चन्द ही दिनों में यह बदजात सेठानी आपको उल्टे मुँह बात करने का भी मौका नहीं देगी," सूरज ने उसे भड़काया।

"आसार ऐसे ही नजर आ रहे हैं।"

"फिर एक काम कीजिए?"

"क्या?"

"किसी को कह कर सेठानी का खात्मा करा दीजिए।"

"क्या कहती हो?" रानी की आँखें विस्फारित हो गईं।

"ठीक कहती हूँ। अगर आप ऐसा नहीं करेंगी तो आपके साथ इस राज्य पर भी संकट आ पड़ेगा। आप नहीं जानती कि इन जनानी ड्योढ़ी और गाँवों मे फैले अत्याचार अपना कैसा रंग लायेंगे ! सुना है—इधर फिर बरखा नहीं हो रही है। किसान चीज-चीज चिल्ला रहे हैं। थोड़े दिनों में आप चारों ओर से त्राहिमाम-त्राहिमाम सुनेंगे। लोग भूख से तड़प उठेंगे और प्यास से बिलबिला कर कीड़े-मकोड़ों की तरह प्राण देंगे। लेकिन एक और बात भी हो सकती है। वह बात यह है कि कभी-कभी भूख और प्यास के मारे इन्सान विद्रोह भी कर उठते हैं। उनका विद्रोह इतना सफल और भीषण होता है कि उसे कोई नहीं दबा सकता। तब विद्रोही जनता खूँखार भेड़ियों की तरह अपने दुश्मनों पर टूटती है और उनका सर्वनाश कर देती है। मुझे ऐसा भी मालूम हुआ है कि सेठानी अपने चन्द गुर्गों व बड़े-बड़े अफसरों के साथ मिलकर इस नाजुक परिस्थिति में लाखों रुपया बनाने की सोच रही है।"

"लेकिन...?" महारानी कहती-कहती चुप हो गई। उसका सिर चकराने लगा। वह दोनों हाथों से सिर पकड़ कर बैठ गई। कुछ देर तक उसने अपनी दोनों आँखें बन्द रखी और बाद में वह बोली, "बदन टूट रहा है। हिम्मत खत्म हुई जा रही है।" उसने अपना मुँह मुख्य द्वार की ओर करके कहा, "बदना, ओ बदना !"

बदना दासी आकर अदब से खड़ी हो गई।

"जा, दो गिलासों में शराब डाल ला। सुन, वही अँग्रेजी शराब लाना, देशी मुझे अच्छी नहीं लगती है।"

बदना चली गई।

महारानी ने ने पुनः कहा, "शराब पीने से आदमी मे बड़ी हिम्मत आती है। कभी-कभी मैं बहुत ज्यादा पी लेती हूँ।"

"मुझे शराब पीने की आदत नहीं है।" सूरज ने स्पष्ट शब्दों में कहा, "हाँ, कभी-कभी वे (उसके पति) बहुत आग्रह करते थे तो मैं थोड़ी पी लिया करती थी। वैसे यह शराब मुझे अच्छी भी नहीं लगती।"

बदना ने शराब के दो छोटे खूबसूरत गिलास रख दिये और कुछ खाने को भी ले आई। भुने हुए पापड़ और पकौड़े थे। महारानी ने गिलास टकरा कर सूरज से कहा, "सेठानी का खात्मा मैं नहीं करा सकती। तुम भी कभी-कभी

कच्ची बात मुँह से निकाल देती हो। सेठानी का जाल सब ओर फैला हुआ है। राजाजी उस पर बुरी तरह से आसक्त हैं। उन्हें उसके सिवा कुछ अच्छा भी नही लगता, ऐसी दशा में उसको जरा भी हानि पहुँचने का मतलब है कि अपने प्राणों को खतरे मे डालना। कही सेठानी को भी हमारे षड्यंत्र का पता लग गया तो खैर नहीं। हम लोग जब तक उसे मरवाने की सोचते रहेंगे, तब तक वह हमारा काम तमाम करा देगी क्योंकि उसके साथ प्रायः सभी बड़े-बड़े शक्तिवान लोग हैं।"

सूरज चुपचाप महारानी की बातें सुनती रही।

उसे एकदम शान्त देखकर महारानी फिर बोली, "तुम कुछ बोलती क्यों नही ? मैं तुमसे राय लेना चाहती हूँ।"

सूरज ने शराब का घूंट लेकर कहा, "मैं क्या बोलूं ? आपने मेरी योजना को ही खत्म कर दिया। मैं सेठानी को मरवाना चाहती थी।"

"यह सम्भव नहीं है।"

"फिर मैं कोई नया उपाय सोचूंगी।"

कह कर वे दोनों कुछ देर तक शान्त रही।

यकायक सूरज बोली, "मै अपने बेटे का दूसरा विवाह कर रही हूँ।"

"क्यों ?"

"यह बहू बडी मुँहफट और चुड़ैल है। उसे लंगड़ा-लूला पति पसन्द नही। मैने उसे कैद दे रखी है।"

"आज की लड़कियों को क्या हो गया है ? धर्म-कर्म सभी को छोड़ कर वे अधर्म के रास्ते चलने लगी है।"

"चलती हैं तो चलें, मैं शीघ्र ही अपने बेटे को दुबारा विवाह लाऊँगी।"

महारानी ने सूरज का हाथ झिंझोड़ कर कहा, "पर तुमने मेरे रोग की दवा नही बताई। आखिर मैं क्या करूँ ?"

"क्या करूँ ? यह मैं आपको जल्दी ही बताऊँगी।"

शराब खत्म हो चुकी थी। धीरे-धीरे महारानी बेकाबू होती गई। उसने विहँस कर सूरज को अपनी बाँहों में भर लिया और उसे अपने से लिपटा कर वह सो गई।

सूरज उसकी दशा पर हँस पड़ी । उसकी मौन हँसी मे तीव्र व्यंग्य था।

रात ढल रही थी।

और सूरज सोच रही थी कि जब तक मैं इस सेठानी का सर्वनाश नहीं करूँगी तब तक चैन से नही बैठूँगी ।

धीरे-धीरे वह भी प्रगाढ़ निद्रा में निमग्न हो गई।

× × ×

प्रभात हुआ ।

दूर मन्दिरों की पवित्र घण्टा ध्वनियों ने आकाश को गुंजा दिया। महल के मंदिर में राजपुरोहित ऊँचे-ऊँचे स्वर में आरती के बाद मंत्रोच्चारण कर रहा था। मन्दिर के बाहर कई दास-दासियाँ एवं राज्य के अधिकारी खड़े थे।

रानी और सूरज की नींद अभी तक नही टूटी थी ।

वे दोनों आराम से सोई थी । अचानक महारानी ने आँखें खोल कर कहा, "अरे आरती का समय हो गया है और हम दोनों अभी तक चादर तान कर पड़ी हैं। उठ, बैना उठ !"

सूरज भी उठ खड़ी हुई।

दैनिक-कार्य से निवृत्त होकर सूरज माला जपने लगी। माला जप कर वह जैसे ही उठी, वैसे ही चिमन ने आकर कहा, "गाँव में किसानों ने लगान देने से इन्कार कर दिया है। वे कह रहे हैं कि हमारे पास रुपये नहीं हैं, बिना रुपये हम कहाँ से लगान दें ?"

सूरज का चेहरा तुरन्त कठोर हो गया। रोष से उसका शरीर काँप उठा उसने अपने हाथ की माला को तोड़ते हुए चिमन से कहा, "अपने ठाकुर सा से कहो कि शान्ति से काम लें। मैं कल ही साधूपुर पहुँच रही हूँ।"

चिमन चला गया।

वह सीधा शिव के पास आया और केसर का पत्र उसे दिया। शिव ने चिमन को एक पर्चा दिया। राज्य में अकाल की स्थिति का उसमें सांगोपांग वर्णन था। अकाल के कारण उत्पन्न हुई दुर्दशा और ठाकुरों व जागीरदारों के जुल्म-दमन का उसमें जोरदार वर्णन था। चिमन उसे देखता रहा। देखता-देखता वह बोला, "क्या यह पर्चा तुमने निकाला है ?"

अपनी गर्दन को बड़ी शान्ति से हिलाकर उसने होने से होठों पर भेदभरी मुस्कान लाकर कहा, "नहीं।"

"फिर किसने लिखा?"

"यहां के कांग्रेस के नेताओं ने।"

"ऐसा कौन है? भई खूब पर्चा लिखा है।" चिमन ने एक बार श्रद्धा भरी नजर से शिव को देखा और भयभीत स्वर में बोला, "मैं समझता हूं कि राजाजी इसे जिन्दा नहीं छोड़ेंगे। फांसी देकर ही दम लेंगे।"

शिव उठ खड़ा हुआ। उसने एक टूटी हुई दीवार के आले में हाथ डाला। आला बहुत बड़ा था। चिमन देखता रहा और थोड़ी देर में ही शिव ने उन पर्चों की एक गड्डी चिमन के हाथों में दे दी। चिमन ने यन्त्रवत् उसे अपने हाथ में ले लिया। जब वह ले रहा था तब उसके तमाम शरीर में एक अजीब सी स्थिरता आ गई थी।

"मैं तुम्हें यह सौंप रहा हूं। इन्हें साधूपुर में बांटना है। इन पर्चों का प्रचार घर-घर और दर-दर होना चाहिए। हालांकि गांव के लोग अनपढ़ हैं फिर भी मुझे यकीन है कि जितने भी लोग पढ़े-लिखे हैं, वे इन पर्चों से पूरा-पूरा लाभ उठायेंगे। जैसे ही दस आदमियों में इस पर्चे की बातों का प्रचार हुआ, वैसे ही सारे किसान जान जायेंगे। क्योंकि गांव के लोगों में हर नयी बात अफवाह की तरह बहुत जल्द फैल जाती है। अनपढ़ों में प्रचार का सबसे बड़ा साधन जबान होती है। जब जनता की जबान चलने लगती है, तब कोई भी शक्ति ऐसी नहीं होती है जो उनकी गति को रोक दे।"

चिमन ने भय से पूछा, "पर मैं इन्हें ले जाऊंगा कैसे?"

"ले जाओगे कैसे?" वह कुछ देर सोचकर बोला, "तुम पैदल आये हो या ऊंट पर?"

"ऊंट पर?"

"ऊंट के 'पलाण' होता है, उसके नीचे या ऊंट के खाने के चारे में छिपा देना। पर चिमन इन पर्चों का साधूपुर में बंटना अत्यन्त जरूरी है। ये पर्चे नहीं बांटे गये तो गांव वालों को जागीरदारों के जुल्मों, अत्याचारों और लोगों की सही दुर्दशा का पता भी नहीं लगेगा। अकाल साधूपुर में ही नहीं, पूरे राज्य पर अपने भयानक पंख फैला रहा है।" शिव ने चिमन के दोनों हाथों को

मजबूती से पकड़ लिया। उसके स्वर में सौहार्द्र की भावना थी। तनिक विगलित स्वर मे वह बोला, "मैं अपने प्राण देकर भी इन दीन-हीन गरीब लोगों में जागरण फूँकना चाहता हूँ। इस बार मैं केसर को पत्र नहीं लिख रहा हूँ। पत्र क्या लिखूँ? अपने मन में आजकल उसके अलावा हजारों दूसरे लोग बसे हुए है। सारा दिमाग उन्ही की बातों में लग जाता है।"

"कोई बात नहीं। मैं ऐसे ही कुशल-क्षेम के समाचार कह दूँगा।"

"बस-बस, तुम इतना ही कह देना कि वह तुम्हें शीघ्र एक विस्तृत पत्र लिखेगा। तुम्हारे जीवन के प्रति उसके मन में गहरा प्रेम है। पश्चाताप भी है कि तुम किसी से किसी तरह का समझौता करने को तैयार नही हो। तुम्हें मेरे कारण हार्दिक कष्ट उठाना पड़ता है। तुम्हें एक तुच्छ दासी के बेटे के लिए अपने जीवन के रंगीन सपनों को तोड़ना पड़ता है और पता नहीं कब तक तुम दुर्योग के हाथों कष्ट पाती रहोगी!"

शिव का गला भर आया।

चिमन बाहर चला गया।

× × ×

दोपहर का समय।

महारानी आज प्रसन्न थी। उसके चेहरे पर जो गत कई महीनों से मुर्दनी छाई हुई थी, वह कम हो गई थी। सूरज ने उसे बड़ा धैर्य बँधाया था। उसके टूटते हुए साहस को सहारा दिया था। उसे लगा कि वह शीघ्र ही राजाजी पर काबू पा लेगी और उस कुलटा सेठानी को जिन्दा दीवार मे चिनवा देगी।

सूरज का मन कल से खराब था।

किसानो के विद्रोह ने उसके मन में हलचल उत्पन्न कर दी थी हलांकि ऊपर से उसने किसी तरह का आभास नहीं होने दिया। अभी वह महारानी को और दूसरी बातों से भरना चाहती थी।

जब महारानी अधलेटी थी तब सूरज ने विस्मय भरे स्वर में कहा, "मैं आपको एक बात कहना तो भूल ही गई!"

"वह क्या?" प्रश्न नाच उठा महारानी के स्वर में।

"कल सेठानी के लिए आठ लाख के जेवरात खरीदे गये हैं। उसमे एक

ऐसा हार था जो केवल आपकी ही शोभा बढ़ा सकता है। उसके चमकते हुए हीरे छोटे-छोटे दीपों की तरह झिलमिल कर रहे थे।"

महारानी ने विस्मित होकर सूरज की ओर देखा।

सूरज ने मुस्कराकर कहा, "आप अचरज क्यों कर रही हैं?"

"मैं तुम्हें पूछती हूँ कि…?"

बीच में ही सूरज बोली, "आप यह समझती हैं कि मैं चुपचाप बैठी रहती हूँ? इस जीवन में आने के बाद न जाने मैंने अपने आप को कितना बदला है। मैंने झूठा अभिनय, झूठा आचरण और झूठा व्यवहार-बर्ताव सब कुछ सीखा है। क्योंकि अगर यहाँ रहकर आदमी केवल आदमी बन कर रहे तो उसे सुख की एक भी साँस नसीब नहीं हो सकती है। यहाँ एक-दूसरे में होड़ लगी हुई है। यहाँ का प्राणी दूसरे के अरमानों का खून करके एक अव्यक्त आनन्द पाता है। यहाँ मन-बहलाव के लिए प्राणों से खेला जाता है। ऐसे वातावरण में कौन जिन्दा रह सकता है? कौन अपने आपको सच्चाई पर बलिदान कर सकता है? मैं कतई अपने आपको बलिदान नहीं कर सकती। क्यों करूँ? कर्त्तव्य की पुकार पर उत्सर्ग होना कोई मतलब रखता है, पर दुराचरण पर आँसू का एक कतरा भी बहाना ठीक नहीं।…महारानी जी! मृत्यु के बाद की वाह-वाह अर्थहीन होती है।"

"मैं क्या करूँ?" महारानी ने झल्ला कर कहा।

"जो सम्भव हो, वह करो।" सूरज ने भारी स्वर में कहा। वह तन कर खड़ी हो गई, जैसे उपदेश देने वाली संन्यासिनी खड़ी होती है। वह आन्तरिक रोष को आँखों में झलकाती हुई बोली, "आप अगर इसी तरह का उपेक्षित व अपमानित जीवन व्यतीत करना चाहती हैं तो मैं कुछ भी नहीं कहूँगी, वर्ना जो भी सम्भव बन सके, उसे कर गुजरिए।"

"मतलब?"

"कुछ चीजें समझने की होती हैं।"

सूरज चुप हो गई। वह कुछ भी नहीं बोली।

दासी ने कमरे में प्रवेश किया। बोली, "साधूपुर से एक दासी आई है। आपसे मिलना चाहती है।"

सूरज बाहर निकल गई।

मैफा ने तुरन्त कहा, "ठकुराणी सा, केसर बाई सा भी किसानों को भड़काने में मदद दे रही है और ठाकुर सा बस रात-दिन शराब पीकर मदहोश पड़े रहते हैं। उन्हें बाहरी दुनिया से कोई मतलब नहीं है।"

सूरज का चेहरा तमतमा आया। वह निचले होंठ को दांतों से दबा कर बोली, "उस रांड की यह मजाल ? मैं उसे जिन्दा गाड़ दूंगी !"

वह सीधी महारानी के पास आई। उनसे क्षमा-याचना करके बोली, "मुझे अभी ही जाना पड़ेगा। मैं अब यहाँ एक पल भर भी नहीं रह सकती।"

"क्यों ?"

"इन किसानों को थोड़ी भी छूट दे दीजिए, वे आसमान सिर पर उठा लेंगे। वे अपना 'आपा' भूल जायेंगे।"

सूरज उसी दिन साधुपुर रवाना हो गई।

× × ×

२८

साधुपुर पहुँचते ही उसने अनूपसिंह को डांटा।

अनूपसिंह नशे में धुत था और उसके दोनों खास चाकर बन्दरों की तरह कमरे में उछल-कूद मचा रहे थे। एक लड़की अर्धनग्न पड़ी थी। उसकी आँखों में करुणा का सागर लहरा रहा था। वह भीतर ही भीतर सिसक रही थी। उसने ज्योंही ठकुराणी को देखा, त्योंही वह भाग कर एक कोने में दुबक गई। उसने अपनी छाती को अपने हाथों से ढकने का प्रयास किया और दीवार की ओर मुँह करके खड़ी हो गई।

अनूपसिंह माँ को अप्रत्याशित आया देखकर चकित रह गया। और उन दोनों चाकरों का तो खून ही सूख गया। उनकी बहकी-बहकी उछल-कूद हवा हो गई और वे इस तरह सावधान होकर खड़े हो गये जैसे उन्होंने कुछ किया ही न हो।

ठकुराणी ने उन दोनों को बहुत डांटा। उनकी गैरत पर कीचड़ उछाली

और गुस्से में उसने समीप पड़ी बेंत से उन्हें पीट भी दिया। उन्हें आज्ञा दी कि वे अपना काला मुंह लेकर उसके सामने भविष्य में कभी न आयें।

वे दोनों दुम दबा कर भागे।

अब वह अनूपसिंह के सामने तन कर खड़ी हो गई। अनूपसिंह के सामने शराब की बोतल थी। एक जाम ढुल गया था जिससे मेज पर एक चित्र सा बना गया था।

"तुम्हें पीना ही पीना सूझता है या पीने के सिवाय तुम्हें कुछ और भी कम है?"

"काम तो बहुत है मां सा!"

"मां सा का बच्चा!"

"वह तो हूँ ही।"

"मैं पूछती हूँ कि गांव मे क्या हो रहा है, इसका भी ध्यान है? चुप क्यों हो?"

"सब ध्यान है। गांवों में अकाल पड़ गया है। लोग भूखों मर रहे हैं। किसान लोग लगान माफ कराने के लिए कह रहे हैं।"

"और इनके अलावा तुम्हारी बहू भी किसानों को भड़का रही है। सुना है—उसने किसानों में पर्चे बँटवाये हैं।" वह अपने स्वर को और गम्भीर करती हुई बोली, "क्या तुम मुझे बता सकते हो कि यह पर्चे किसने बांटे हैं?"

"मुझे मालूम है।"

"अच्छा, बताओ, किसने बांटे है?"

"अभी बताता हूँ।" कह कर वह क्षण भर चुप रहा। तब उसने अपने दोनों सेवक मित्रों को पुकारा। भोपालसिंह और शार्दूलसिंह आये। उनका नशा अब काफी उतर चुका था। दोनों गर्दन झुका कर खड़े हो गये।

अनूपसिंह ने झूमते हुए कहा, "बताओ, वे पर्चे किसने बँटवाये थे? और तुम दोनों मेरा मुंह क्या ताक रहे हो?"

भोपालसिंह ने शार्दूलसिंह की ओर देखा और शार्दूलसिंह ने भोपालसिंह की ओर। दोनों एक-दूसरे को अर्थ भरी दृष्टि से देखने लगे, मानो वे दोनों एक-दूसरे से पूछ रहे हैं कि यह बात किसने कही थी?

अनूपसिह ने गरजकर अपने वाक्यों को दोहराया, "खड़े-खड़े मुंह क्या देख रहे हो ? बोलो, किसने पर्चे बँटवाये थे ?"

भोपालसिंह ने गर्दन नीची करके कहा, "खम्मा अन्नदाता, हम नही जानते। हमने तो अभी तक उन पर्चो को देखा भी नही है।"

शार्दुलसिंह ने डरते-डरते कहा, "हमने उन पर्चों के बारे मे बातचीत भी नही की। अन्नदाता को भ्रम हो गया है।"

अनूपसिह उत्तेजित हो गया। उसने उठने का प्रयास किया, पर गिर पड़ा। वह सम्भलता हुआ बोला, "तुम दोनो झूठ बोलते हो। मैं तुम दोनों की खाल उधेड़वा दूंगा।....अभी-अभी तुम दोनो ने कहा था कि हम दोनो ने वे पर्चे देखे है और यह भी अच्छी तरह जानते हैं कि वे पर्चे किसने बांटे हैं और किसने बँटवाये हैं ?....और अब कहते हो कि मालूम नही।"

"हमने ऐसा नही कहा। माई-बाप, आपको सुनने मे भूल हो गई !" भोपालसिह ने कहा।

"मुझे ?" वह कर्कश स्वर में चीख उठा, "ओ नालायक कुत्तो, मुझे बहरा कह रहे हो। माँ सा, माँ सा, इन दोनो को यहां से दूर कर दो, मैं इन दोनो को जान से मार दूंगा। अरे चिमना, जा मेरी दुनाली बन्दूक ले आ !" और अनूपसिह जोर की हिचकी खाकर लुढ़क गया। उसका सिर गद्देदार सोफे पर था।

उसने धीरे से आँखें खोली, वह कुछ और बोलना चाहता था, किन्तु नशे ने उसके गले को पकड़ लिया और वह केवल बड़बड़ा कर रह गया। उसकी आँखें बन्द हो गयी।

सूरज समझ गई कि इस कथन मे रहस्य क्या है ! उसकी तीव्र बुद्धि के समक्ष एक धुंधला चित्र स्पष्ट होता गया। जब ये तीनों शराब पीकर उन्मत्त हो गये थे, तब इन्होंने शराब के नशे मे ही ऐसी बातें की होंगी। उसे वितृष्णा हो आई और वह दोनों को यह आज्ञा देकर चली गई कि वे अनूपसिह को अब न पीने दें।....उसके जाते ही वे दोनों अनूपसिह की सेवा में लग गये। एक उनका सिर दबाने लगा, और दूसरा उसके पाँव दबाने लगा। लड़की अभी तक उसी कोने में दुबकी पड़ी थी। गहरी वेदना अब भी उसके चेहरे पर थी। जब सूरज चली गई, तब भोपालसिह उसके पास गया और हाथ पकड़ कर बोला "ठाकुर सा का सिर दबा।"

बेचारी लड़की अपने शरीर के कपड़ों को व्यवस्थित करने लगी। वह चुपचाप आकर बैठ गई।

वहाँ से ठकुराणी सूरज केसर के पास गई। वह अपने आप में तन्मय थी। वर्षा के बिना सारा गाँव त्राहि-त्राहि कर रहा था। लोग लगान न देने का विरोध कर रहे थे। उनका कहना था कि वे भूखे रहकर पैसे कैसे चुकाएँ ?

केसर गम्भीरतापूर्वक किसानों की दुर्दशा पर विचार रही थी। जब वह *विचारती-विचारती थक जाती तो वह वर्षा सम्बन्धी कोई कहावत गुन-गुना* देती थी। जब सूरज ने उसके कमरे में पूर्व सूचना के बिना प्रवेश किया, तब वह गुनगुना रही थी—

सावण चौथ र पंचमी
बीज गाज नहिं मेह
निहचैं दुरभिख देखियै
पावस ऊडै खेह।[1]
धुर सावण की पंचमी
बीज गाज नहिं मेह।
क्यूँ हल जोते बावला
निहचै ऊडै खेह।[2]
सावण पैली पंचमी
जो बीजैं घण बाव।
काल पडै चहुँ देस में
मिनख मिनख नैं खाय।[3]

---

१. सावन बदी चौथ और पंचमी को न बिजली हो, न गर्जना हो तो निश्चय अकाल पड़ता है और धूल उड़ती है।

२. *सावन बदी चौथ और पंचमी को न बिजली हो, न गर्जना हो, तो हे* बावले किसलिए हल जोतता है ? केवल धूल ही उड़ेगी।

३. सावन बदी पंचमी को अगर खूब हवा चलती है तो चारों ओर अकाल पड़ जायगा और आदमी-आदमी को खायेगा।

सूरज कुछ देर तक केसर की कहावतें सुनती रही। फिर उसने पुकारा, "बीनणी सा!"

केसर हड़बड़ा कर उठी। अपने आँचल से सिर ढकती हुई सामने खड़ी हो गई। उसका चेहरा एकदम गम्भीर हो गया और कुछ-कुछ कठोरता उसके मुख पर परिलक्षित होने लगी।

"बीनणी!" उसने बहू की ओर से किसी प्रकार का प्रोत्साहन न पाकर दुबारा पुकारा, जैसे पहले बहू ने सुना ही न हो।

"क्या है सा?"

"तुमने ये पर्चे क्यों बँटवाये?"

"कौन से पर्चे?"

"किसानों को उकसाने वाले पर्चे।"

केसर ने अपनी गर्दन जरा ऊँची की। दीवारों पर सुन्दर भीति-चित्र अंकित थे। व्यर्थ ही उनको देखने का वह ढोंग करती रही। उसकी दृष्टि इतनी तेज थी, जैसे आज उन चित्रों में एकाएक कोई अलौकिकता आ गई हो और वह उसे ढूँढ़ने का प्रयास कर रही हो।

"तुमने मेरी बात का जवाब नहीं दिया?"

"मैं आपकी बात का क्या जवाब दूँ!"

"क्यों?"

"क्योंकि मैं इसके बारे में उतनी ही अपरिचित हूँ जितनी आप!"

"बहुत भोली बन रही हो?"

"आपसे अधिक नही!" व्यंग से कहा उसने।

सूरज चौंक पड़ी। वह आवेग से भर उठी। कड़ककर बोली, "बडी राणी! होश मे आकर बात करो!"

केसर कठोर हो गई, "मैं बहुत होश में हूँ। मैं इन पर्चों के बारे में कुछ भी नही जानती। सुना है—कांग्रेस के नेता आत्माराम के किसी आदमी की यह करतूत है। अगर आपको मेरा वहम ही पड़ गया है तो मेरे पास कोई उपाय नहीं है।"

"आत्माराम?" वह घृणा से भृकुटियाँ तान कर बोली और उसने दरवाजे

की ओर पीठ करके कहा, "आत्माराम को गोली से न उड़वा दूं तो मेरा नाम ठकुराणी सूरज कुंवर नहीं !"

वह हवा के वेग से चली गई। केसर के चेहरे पर तिरस्कार का भाव नाच उठा।

× × ×

पर्चे चिमन ने बांटे थे। हुक्म दिया था केसर ने। पर्चों के पहुँचते ही गाँवों में हलचल मच गई। साधूपुर के किसान सत्याग्रह करने पर उतारू हो गये। वे चुपचाप रात के अँधेरे में इकट्ठे होते थे और भविष्य के कार्यक्रम का निश्चय करते थे। आत्मारामजी का साथी गणेशदत्त वहाँ आ गया था। सूरज कुँवर को बड़ी चिन्ता हुई और उसने एक खत राजाजी को लिखा कि यहाँ के किसान भयंकर विद्रोह पर उतारू हो रहे हैं। आप हमें तुरन्त सहायता भेजिए। राजाजी ने तुरन्त कुछ पल्टन और सिपाही भेज दिये।

किसानों पर आतंक छा गया, पर उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। वे बिलकुल शान्ति और अहिंसा के साथ एकत्रित होकर राजधानी की ओर चले। पुलिस ने उन्हें रोकने के कई हथकण्डे किये, पर वह असफल रही।

इधर जब साधूपुर के किसानों का जत्था रियासत की राजधानी की ओर चला, तब बड़े-बड़े सभी ठिकानों के किसान भी राजधानी की ओर उमड़ पड़े। देखते-देखते राजधानी में हजारों किसान इकट्ठे हो गये। बलवा होने की नौबत आ गई।

इस समय सेठानी ने उचित कदम उठाया। उसने राजाजी से घोषणा कराई कि वह सारे किसानों का लगान माफ कर दें और कुछ निर्माण कार्य आरम्भ करा दें।

राजाजी ने यह घोषणा कर दी, पर ठिकानेदारों ने इस बात को मानने से इन्कार कर दिया। उन्होंने, विशेषतः ठकुराणी सूरज कुँवर ने, अपने यहाँ कई ठिकानेदारों को बुलाया और उसने अनूपसिंह द्वारा यह घोषणा कराई कि अगर किसानों के इस आन्दोलन की शर्तें मान ली गईं तो ये लोग सदा हमें बात-बात पर तंग करते रहेंगे। हमारी आन और शान पर ये कीचड़ उछालने लगेंगे। राजाजी तो उस सेठानी के चक्कर में आकर खुद भी बुद्धि खो बैठे हैं, पर हमें शान्त नहीं बैठना चाहिए। आप तो जानते ही हैं कि एक बार इसी तरह यहाँ के जाटों ने विद्रोह किया था, पर मेरे पूज्य पिताजी ठाकुर

केसरसिंह ने उस विद्रोह को कुचल दिया था। आपको उसके बारे मे जानकारी नही है, मैं बताती हूँ।

बात लगभग सात-आठ वर्ष पहले की है।

आप यह भली-भाँति जानते ही हैं कि हमारे गाँवों में कोई भी नीची जाति का आदमी घोड़े पर चढ़ नही जा सकता। खेती करने वाले ये जाट हैं न, एक बार इन्ही जाटों का एक दूल्हा शहनाई के साथ घोड़े पर बैठ कर गुजरा।

क्या यह नियम-विरुद्ध बात नही थी—जब वे लोग जानते थे कि यहाँ पर कोई भी घोड़े पर चढ़कर नहीं जा सकता !

पर इन कांग्रेसी नेताओं के कारण जिसका देखो दिमाग खराब होता जा रहा है। बराबर के अधिकारों की माँग बढ़ रही है। आदमी सब बराबर हैं, उन्हें एक-सा न्याय मिलना चाहिए इत्यादि नारो के चक्कर मे ये सब आ गये थे। सो जाटों का दिमाग भी बिगड़ गया और वे हमारी तरह आन-बान के के साथ दूल्हे को घोड़े पर चढ़ा कर गुजरे। राजपूतो ने देखा, उनका खून खौल उठा। वे भागे-भागे आये और उन्होंने पिताजी के सामने सारी घटना बयान की। पिताजी के राजपूती रक्त में गर्मी आ गई और उन्होने तुरन्त उन राजपूतो को कहा, "बरात को अर्थी मे बदल दो।"

शहनाई का स्वर सुनाई दे रहा था।

गाँव जैसे शान्त वातावरण में शहनाई का स्वर और ही स्पष्ट सुनाई पड़ रहा था। कोई विदाई गीत था।

एकाएक राजपूत उन बारातियो पर टूटे पड़े। देखते-देखते दूल्हा साहब जमीन पर लोटते नजर आये। बाराती दुम दबा कर भागे। दूल्हा को अस्पताल मे दाखिल करा दिया गया।

लेकिन जाटों ने इस घटना को बड़ा ही उग्र रूप दे दिया। वे सभी इकट्ठे हो गये और उन्होंने आन्दोलन करने की धमकी दी। मेरे पिताजी पर उन्होंने मामला चलाने का विचार किया। उन्होने बडी तरकीब से काम लिया और साफ कह दिया कि हमारे आदमियों ने इस दूल्हे को मारा ही नही है बल्कि जाटों के दो दलों मे झगड़ा होने के फलस्वरूप यह काण्ड हो गया। आप सब यह अच्छी तरह जानते है कि यहाँ सब अपना चलता है। अधिकार और कानून सब अपने आधीन हैं।

फिर क्या था !

पिताजी ने कई झूठी गवाहियों की बदौलत कई जाटों को जेल भिजवा दिया।

इसमें मूल में कौन सी भावना थी, बस इसे ही समझने की जरूरत है। वह मूल भावना यह थी कि राजाजी का राज्य भी हमारी बदौलत ही चलता है। अगर हम उन्हें रुपया-पैसा देना बन्द कर दें तो उनका काम कैसे चलेगा? हमारी ही शक्ति और भक्ति के बूते पर उनका वैभव-विलास टिका है, वर्ना एक ही दिन मे उनके होश न उड़ जायें। हमारा विद्रोह इन किसानों के विद्रोह से कहीं ज्यादा भयानक और प्रचण्ड होगा। अब आप ही बताइए कि राजाजी ने तो हुक्म दे दिया कि किसानों का लगान माफ कर दिया जाय, लेकिन उन्होने यह नही समझा है कि किसानों का लगान यदि हम लोग माफ कर देंगे तो अपना पेट कैसे भरेंगे? हमारे पास कौन-सा धन गड़ा पड़ा है। हम लोग तो इन्ही किसानो से लेकर अपना पेट भरते हैं, अत: मेरा आपसे अनुरोध है कि हमे इस आज्ञा का विरोध करना चाहिए।

सब ठिकानेदार इस बात से सहमत हो गये। उन्होने किसानों के प्रति कठोर रवैया अपनाया। ठकुराणी ने अपने सारे कारिन्दों को कह दिया कि अगर कोई किसान लगान न दे तो उस पर ज्यादतियाँ की जायें।

भोपालसिंह और शार्दु लसिंह साधुपुर में खुल्लमखुल्ला जुल्म करने लगे। वे किसानो के घर जाते थे, उन्हें मारते-पीटते थे और बाद मे उनके बैल खोल लाते थे, बर्तन-भांडे छीन लाते थे और उनकी औरतों के जेवर भी उनके अंगों से उतार लाते थे। परिणाम यह निकला कि चारों ओर हाहाकार मच गया। किसानों की दुर्दशा और उन पर किये गये अत्याचारों से पसीज कर केसर ने शिव को एक पत्र लिखा—

प्रिय शिव,

बड़ी कठिनता से यह पत्र तुम्हारे पास पहुँचेगा। क्योंकि इस समय ठकुराणी के कई जासूस मेरे पीछे लगे हैं। उनमें से एक जासूस को दस रुपये देकर मैंने अपनी ओर फोड़ा है, यह पत्र तब कहीं तुम्हारे पास पहुँचा होगा। अगर उस जासूस नेमेरे साथ बेईमानी की तो परिणाम भयानक ही होगा, पर मुझे विश्वास है कि वह ऐसा नहीं करेगा। ऐसा दु:साहस करना उसके वश का नही। क्योंकि वह अत्यन्त कायर मनोवृत्ति का है। फिर इन गुलामों का कोई भरोसा नहीं।

मैं तुम्हें यह पत्र इसलिए लिख रही हूँ कि मेरे पति देव अपनी माँ के कहने पर किसानों पर जोर-जुल्म करने पर उतारू हो गये हैं। ठकुराणी उन्हें सारी बातें समझा-बुझा कर तैयार करती हैं और वे उसी तरह उन बातों को अमल में लाते हैं। कुछ दिन पहले यहाँ कई ठिकानेदारों ने एक सभा का आयोजन किया था जिसमे यह निर्णय लिया गया था कि हम राजाजी के हुक्म को नही मानेंगे। और उसी निर्णय की प्रतिक्रिया स्वरूप किसानों पर बहुत जुल्म किया जा रहा है।

देखो न, जुल्म की हद हो रही है। आज से बीस दिन पहले एक किसान के दो बैल छीन लिये गये थे। उन्हें यहाँ लाकर बाँध दिया गया। बैलों को भूखा-प्यासा रखा। जब वे मरने लगे तो वापस उन्हें उनके मालिक के खूँटे से बाँध आये। कल पता चला कि वे मर गये हैं। अब तुम्ही बताओ कि यह कहाँ का इन्साफ है ? इसी तरह कल एक किसान ने आवेश मे उन्हें चोर-लुटेरा कहा तो ठकुराणी ने उसे इतना पिटवाया, इतना पिटवाया कि वह अधमरा हो गया। ये जोर-जुल्म और ज्यादतियाँ मैं नही सह सकती। शिव ! क्या तुम इन सबके खिलाफ एक जोरदार आन्दोलन नही कर सकते ? तुम आकर देखो कि आज सारे गाँवों के गरीब किस तरह बरबाद हो रहे हैं। वे अपने बच्चों को साधुओं के हाथों बेच रहे हैं, उनके पशु चार-चार आने में बिक रहे हैं। उफ ! भूख ही भूख नजर आ रही है। साधुपुर से तुम्हारा पुराना सम्बन्ध है और मेरी तुमसे प्रार्थना है कि तुम आकर उन किसानों की गिरती हुई हालत को सम्भालो। तुम्हें मेरे प्यार और प्राण की कसम ! पता नही, मुझे ईश्वर ने इस कुटुम्ब में किस जन्म की सजा के रूप मे पैदा किया है, यह वही जानता है। मैं यहाँ बहुत ही दु:खी हूँ, दु:खी !

तुम्हारी
केसर

शिव सीधा आत्मारामजी के पास गया।

आत्मारामजी ने उसे समझाया कि तुम्हे जल्दबाजी नही करनी चाहिए। हमें सेठानी से मिलना चाहिए। सेठानी कुछ भी हो, इस तरह प्रजा पर ज्यादतियाँ नही होने देंगी। उनमे सामन्ती व्यवस्था का रवैया नही है कि इण्डे

के जोर पर सारा काम कराया जाय, बल्कि वह चाहती हैं—समझौता। हमें एक बार उनसे जरूर मिलना चाहिए।

तब वे दोनों सेठानी के पास गये और उन्हें सारी बातें समझाई। इस पर सेठानी ने उन्हें झूठा आश्वास न दे दिया। आत्मारामजी व शिव वापस लौट आये और उन्होंने उसके आश्वासन की प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा की। पर जब एक सप्ताह बीत गया और किसी तरह के हालात नही बदले, तब शिव ने खुल्लमखुल्ला नेतागिरी सम्भाल ली और वह सीधा साधूपुर चला गया।

उसने घर-घर जाकर किसानों को एकत्रित किया और उसने उन्हें अहिंसात्मक आन्दोलन के लिए तैयार किया। जब विद्रोहीजनों ने अहिंसात्मक सत्याग्रह से कुछ बनते नहीं देखा, तो वे भी उग्र बन गये और उन्होंने कारिन्दों को मारना-पीटना आरम्भ कर दिया।

शिव एक जत्था लेकर ठकुराणी की हवेली के आगे आया। तब ठकुराणी ने बड़ी सफाई से यह चाल खेली—उसने तुरन्त राजाजी को खबर पहुँचाई कि सारे किसानों ने विद्रोह कर दिया है और वे उसे लूटने आ रहे हैं। तब राजाजी ने अँग्रेज अफसर को भेजा। जब उससे भी स्थिति काबू में नहीं आई तब उन्हें खुद को आना पड़ा। राजाजी की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए ठकुराणी ने आँसू तक बहाये। सफलता जरूर ठकुराणी की रही, पर राजाजी ने सारे गाँवों मे अपने आदमी तैनात कर दिये कि किसानों पर सख्तियाँ न हों और वे ठिकाणों को नुकसान न पहुँचाएँ।

शिव की आँखें अपने विगत जीवन के संघर्ष भरे व पीड़ित क्षणों को याद कर-कर के भर आई और वह फफक-फफक कर रो पड़ा। लेकिन वह क्या कर सकता था? उसकी माँ, उसकी केसर, ओह! कैसा मर्मान्तिक जीवन है!

गाड़ी चल रही है।

शिव को राजधानी लाकर हवालात में बन्द कर दिया गया। कई दिन तक हवालात में रखा गया और बाद मे उसे तरह-तरह के आरोप लगाकर "देश-निकाला" दे दिया गया।

वह वहाँ से सीधा दिल्ली आ गया।

दिल्ली रवाना होते समय उसने कहा था, "मैं अपनी जन्मभूमि के लिए अन्तिम साँस तक लड़ूँगा।"

द्वितीय खंड

१

....

शिव दिल्ली आ गया। वहाँ एक राजस्थानी के यहाँ ठहर गया। यह राजस्थानी गायक जाति का था। कभी-कभी वह एक मास्टर के यहाँ जाता था। वह गाँधीवादी विचारधारा का पोषक था और प्रत्येक राष्ट्रीय आन्दोलन में अपने आपको उत्सर्ग करने को तत्पर रहता था।

शिव को उसके पास जाने-आने से कई लाभ हुए। वह सीधा राजनीति से सम्बन्धित हो गया। राजनीति की वह बारीकियाँ समझने लगा और वहीं से देशी राज्यों में चल रही धांधलेबाजियों व भ्रष्टाचार का विरोध करने लगा। उसने क्रान्तिकारियों की गतिविधियों का परिचय भी भली-भाँति पाया।

केसर के कई पत्र आये थे।

गत एक वर्ष में उसने उन पात्रों पर आधारित कई रोमांचक घटनाएँ छद्म नाम से छपवाईं, जिसके कारण वह कई आदमियों का कोप-भाजन बना और उस पर कई जालिमाना हमले हुए।

रात का अन्तिम पहर था।

न जाने आज क्यों शिव को केसर की याद आ रही थी। केसर के साथ उसे अपनी जन्म-भूमि और विगत जीवन की चन्द घटनाएँ स्मरण हो आईं। वह आँखें मूँद कर बैठा रहा।

समीप केसर के लिखे कई पत्र बिखरे थे। हवा की सरसराहट के कारण वे धीमी-धीमी आवाज कर रहे थे।

तभी उसकी पड़ोसिन युवती इन्दिरा आई। इन्दिरा को देखते ही शिव ने आँखें खोलीं। वह गम्भीर स्वर में बोला, "तू अभी चला जा, मैं बहुत व्यस्त हूँ।" वह चली गई।

उसने उन पत्रों को पढ़ना शुरू किया।

पहला पत्र—

प्रिय शिव,

तुम्हें 'देश निकाले' की सजा होने के बाद यहाँ के किसानों की दशा कुछ न कुछ सुधरी ही है। इसका कारण यह था कि सेठानी ने राजाजी को समझा दिया कि अगर आपने किसानों की मदद नहीं की और उन पर होने वाले

अत्याचारों को नही रोका तो यहाँ एक भीषण आग जल उठेगी और कहीं दिल्ली मे इसकी चर्चा हो गई तो बहुत बुरा होगा। इसलिए राजाजी ने थोड़ा कड़ा रुख अपनाया। कई नये भवनों का निर्माण का ऐलान किया गया है तथा नई सड़कें भी बनाई जाने लगी हैं।

गाँवों में धान बाँटा जा रहा है। इधर आकाश में कुछ बादल भी दिखलाई पड़ने लगे हैं। मैं समझती हूँ—बारिश हो जायगी और किसानों का जीवन पुनः सुखी हो जायगा। ठकुराणी ने मुझसे बिलकुल सम्बन्ध समाप्त कर लिया है। इसका एक कारण और भी रहा कि निरन्तर तेजी से घटनाएँ घटने के कारण वह अपने बेटे का विवाह नहीं कर सकीं।

लेकिन आजकल फिर यहाँ शादी की जोरदार तैयारियाँ हो रही हैं। शीघ्र ही मेरे अपंग पति की दूसरी शादी एक रूपवती लड़की से होने वाली है।

तारीख कोई तय नहीं है।

तुम्हारी—
केसर

× × ×

शिव,

आज मेरे पति का दूसरा विवाह हो गया है।

नयी दुल्हिन घर में आ गई है। मैं तुम्हें सच कहती हूँ कि मुझे इसका जरा भी रंज नही है। हालाँकि एक प्रसन्नता है कि आज मेरा उससे जरा भी सम्बन्ध नहीं रहा। अब मैं द्वागण (परित्यक्ता) हो गई हूँ। ठकुराणी इस घटना से बड़ी प्रसन्न है क्योंकि वह इस विवाह को मेरी पराजय और अपनी विजय समझती है। वह अहम् से सिर ऊँचा किये अपने स्वजनों में डींग मारा करती है और कहा करती है कि मैं किसी से नहीं दबती, मैं अपने बेटे के लिए एक नही दस बहुएँ ला सकती हूँ।

विवाह पर एक महत्वपूर्ण घटना घटी। बात यह हुई कि राजाजी ने मेरे पति के विवाह पर एक हार बनवाया था। यह हार लगभग डेढ़-दो लाख का था। वे उस हार को मेरी सौत जीतकुँवर को देना चाहते थे, पर सेठानी ने ऐन मौके पर उपहार की जगह एक तीस-चालीस हजार का हार दिलवा दया। पता नही, इसबात का ठकुराणी को कैसे पता चल गया। वह क्रोध से

जल उठी और राजाजी की सौगात को वापस करने को उद्यत हो गई, पर उसके रिश्तेदारों ने उसे समझा दिया। कहा कि राजाजी की सौगात लौटाना उनका अपमान करना है और आप यह जानती ही हैं कि आपकी और सेठानी जी की जरा भी नही पटती है। इसलिए अनर्थ हो जाने की पूरी आशंका है। उस समय तो ठकुराणी जहर का घूंट पीकर रह गई, पर बाद में उसने एक नौकरानी को बुलाया। यह नौकरानी सेठानी की अपनी खास नौकरानी थी। सेठानी के साथ ही उठती थी और साथ ही सोती थी। कहने का तात्पर्य यह है कि वह उसकी अपनी दासी थी।

ठकुराणी ने उससे कहा, "दासी गोमती, मैंने तुम्हें क्यों बुलाया है ?"

"मैं नही जानती !"

"कुछ भी आभास नही मिला ?"

"नहीं ! मैं आपका बार-बार बुलावा पाकर यही समझी कि अवश्य कोई खास काम होगा। फिर आपकी प्रत्येक दासी को मेरी सेठानी जी सन्देह की नजर से देखती हैं। यह तो अच्छा हुआ कि मैंने आपकी दासी को अपनी बहन बता दिया, वर्ना मेरी नौकरी हाथ से जाती रहती।"

ठकुराणी तनिक मुस्कराई और बोली, "इसका मतलब साफ है कि तुम बहुत होशियार हो। अच्छा मैं अब अपनी बात पर आती हूँ।"

"........?" गोमती ने उसे प्रश्न भरी दृष्टि से देखा।

शिवा, मुझे भी कुछ वहम हो गया था, अतः मैंने भी ठकुराणी के महल में अपनी दासी दौड़ा दी। तुम तो यह अच्छी तरह जानते हो कि इन महलों में प्रत्येक अधिकारी और मालिक के अपने-अपने जासूस रहते हैं। इस तरह मेरे भी दो-तीन जासूस हैं क्योंकि अब मुझे भी हरदम खतरा लगा रहता है कि कब कोई मेरे प्राणो को हर ले ?

मेरे जासूस ने बताया—

ठकुराणी ने कहा, "मैं तुम्हें अपनी दासी बनाना चाहती हूं।"

दासी की आंखें विस्फारित हो गयीं। वह बोली, "क्यों ?"

"क्यों ? इसलिए कि मुझे तुम्हारी जैसी एक वफ़ादार दासी चाहिए और मैंने सुना है कि तुम से अधिक यहाँ पर कोई भी सच्ची और ईमानदार दासी नहीं है।"

ठकुराणी का अनुमान था कि गोमती अपनी प्रशंसा सुन कर फूली नहीं समाएगी, पर गोमती के चेहरे पर किंचित् भी प्रसन्नता का आभास नहीं हुआ। वह गम्भीर दृष्टि से ठकुराणी को देखती रही।

ठकुराणी ने पुनः कहा, "मैं तुम्हें सेठानीजी से दुगनी तनखा दूंगी। अच्छा खाना और बढ़िया कपड़े मुफ्त। बस, तुम्हें मेरा एक काम करना है।"

"कौन-सा है वह काम ?"

"हाँ, उसके लिए तुम्हें मुंह मांगा इनाम दूंगी।"

अब गोमती सावधान हो गई। वह बोली, "लेकिन आप उस काम का अता-पता तो दीजिए।"

ठकुराणी कुछ देर मौन रही।

बाहर कोई कुत्ता भौंकने लगा था, ठकुराणी को यह सहन नहीं हुआ। उसने तुरन्त किसी दास को बुलाकर कहा, "इस कुत्ते को गोली से उड़ा दो।"

फिर वह कुछ देर तक कमरे मे चहलकदमी करती रही। उसकी चहलकदमी और चेहरे पर उठे हुए संघर्ष के भावों से साफ पता लग रहा था कि वह अभी विचार रही है कि उसके मन में जो दुष्टता छिपी है, उसे वह इस दासी से कहे या नहीं ? अन्त में वह चहलकदमी करती-करती धम से बैठ गई। उसके माथे पर पसीने की बूंदें चमक उठीं। वह बोली, "पर पहले मुझे तुम्हें इस बात का वचन देना होगा कि तुम बात आगे पीछे नहीं करोगी। बात को पूरा करना अथवा न करना तुम्हारे पर ही छोड़ती हूं। बोलो, वचन देती हो ?"

गोमती ने सहमते-सहमते कहा, "मैं वचन देती हूं।"

"फिर सुनो, क्या तुम किसी भी तरह सेठानी को मरवा नहीं सकतीं ?" उसका स्वर कांप गया, "मेरा मतलब है कि उसे जहर आदि चीजों से मार नहीं सकती ?"

गोमती की आंखें फट गईं। उसकी मुद्रा ऐसी हो गई थी जैसे उस पर कोई गाज गिरि पड़ा हो। वह ठगी-ठगी सी ठकुराणी को देखती रही।

"तुम चुप क्यों हो गई हो ? मैं तुम्हे मालामाल कर दूंगी। तुम्हे ऊपर से नीचे तक सोने से मँढ़वा दूंगी। बोलो, तुम यह काम करोगी न ? अरे, तुम बोलती क्यों नहीं ? क्या तुम गूंगी हो गई ?....अरे, तुम्हें क्या हो गया है। बोलो, जल्दी बोलो !"

ठकुराणी का अंग-प्रत्यंग काँप रहा था। उसकी आँखों से चिनगारियाँ जल रही थी।

और गोमती चुपचाप बैठी थी। विमूढ़ प्राणी को तरह निश्चल और निस्पन्द।

कुछ क्षण असह्य मौन छाया रहा।

ठकुराणी ने अपने आँचल से पसीना पोंछा।

फिर अपने को सावधान करके बोली, "बोलो, तुम चुप क्यों हो ? मैं तुम्हें मुँह-मांगा इनाम दूँगी।"

अपने अन्तस् के आवेग को रोककर वह बोली, "ठकुराणी सा ! मैं दासी जरूर हूँ पर नमकहराम नहीं। जिस सेठानी ने मुझ पर बहिन-सा प्यार-स्नेह रखा, जो मुझे जरूरत पड़ने पर पाँच-दस, पचास-सौ रुपये ऐसे ही दे देती है, उसके साथ मैं छल नहीं कर सकती।"

"गोमती !" हल्की चीख निकली ठकुराणी के मुख से।

"हाँ ठकुराणी सा, मैं लाचार हूँ। मैं इस नीच काम में आपका थोड़ा भी हाथ नहीं बटा सकती। आप मुझे माफ करें।"

और शिव वह वफादार दासी चली गई।

उसके चले जाने के कुछ देर बाद तक ठकुराणी निश्चेष्ट-सी बैठी रही, और फिर उसने जोर-जोर से चिल्ला कर अपनी कई दासियों तथा दासों को इकट्ठा किया और विक्षिप्त-सी चीख-चीख कर उन्हें गद्दार कहने लगी।

सब नौकर-चाकर स्तम्भित से ठकुराणी का विकराल रूप देखते रहे। थोड़ी देर में ठकुराणी नशे में मस्त थी।

मैं, मैं तो बस जी रही हूँ। घुटनदार हवाओं के बीच। एक कैदी की तरह ! न जाने क्यों मैं मर नहीं जाती !

तुम्हारी—
केसर

× × ×

प्रिय शिव,

चरणों में प्रणाम !

आज निमन तुम्हारा पत्र आत्मारामजी के यहाँ से लाया था। पत्र उसने जैसे ही मुझे सौंपा, वैसे ही एक चाकर ने उसे देख लिया। निदान मुझे उसके मुँह को बन्द करने में दस रुपये खर्च करने पड़े। खैर, मैं तुम्हारे इस पत्र पर दस क्यों हजार रुपये भी खर्च कर सकती थी। शिव, क्या अच्छा होता कि मैं इस बन्दीगृह से भाग जाती। तुमने अपने पत्र में नाना साहब की लड़की 'मैना' का जो उल्लेख किया है, वह हृदय को हिला देने वाला है। सच, मैं उसे पढ़ती-पढ़ती रो उठी। मेरा दिल इतना वाचाल और निडर हो गया कि मुझे लगा कि मैं एक क्षण मे इन सारे बन्धनों को तोड़ कर आजाद हो जाऊँगी। इस बड़े भारी संसार में इस तरह खो जाऊँगी जिस तरह नाना साहब के महल में मैना खो गई थी।

सच, मेरी आत्मा उस पवित्र देवी की कथा पढ़ कर विह्वल हो गई। कितनी निर्ममता से उसने अंग्रेज कर्नल के समक्ष जाकर कहा था, "तुम्हारी दुश्मनी नाना साहब से है, इस महल से नहीं।" पर उस बेचारी की कौन सुनता और उसके वे मार्मिक शब्द, "मुझे पकड़ लो किन्तु थोड़ी देर ठहरो, मुझे इन खण्डहरों मे जी भर कर रो लेने दो।" मैं कल्पना में खो गई और मैं ऐसे रोने लगी जैसे मैं ही वह लड़की हूँ।""और बाद में उन निर्दयी राक्षसों ने उसे जिन्दा जला दिया। वह जल गई अपनी आन बान के लिए, लेकिन उसे किसी तरह का दुःख नहीं था क्योंकि उसने चकमा देकर उन खण्डहरों के लिए जी भर कर आंसू बहा लिये थे। उसकी जो इच्छा थी वह पूरी हो गई। पर मैं वह भी नहीं कर सकती। मैं दुर्बल हूँ, क्या मैं मैना की तरह अपने आपको अपनी इच्छा के लिए उत्सर्ग नहीं कर सकती? शिव, तुम मुझे ऐसे चरित्रों के बारे मे जरूर लिखा करो। यहाँ ऐसी पुस्तक नहीं है, यहाँ है केवल गन्दी पुस्तकें। अंग्रेजी के कामोत्तेजक उपन्यास और हिन्दी के कोकशास्त्र। मेरा मन इन सब में कैसे रम सकता है? सोचती हूँ, यहाँ के लोग शिकार और शराब के सिवाय और कुछ भी नहीं जानते।

शिव! कल से मुझे दूसरे महल मे जाना पड़ेगा। मैं भी यही चाहती हूँ। इस सुन्दर और चमकीले नरक से दूर रहना बहुत ही श्रेयस्कर है। उस एकान्त महल में तुम्हारे पत्र मुझे आसानी से मिल सकेंगे।

एक मजेदार बात सुनाती हूँ। पुरानी कहावत है—कर भला तो हो

भला। ठकुराणी ने मेरा भला नहीं किया, उसने मुझे नरक का जीवन जीवन-यापन करने के लिए विवश किया, मेरी हर इच्छा और विद्रोह को कुचला, पर जीत कुँवर मुझसे सर्वथा भिन्न निकली। वह मेरे पति के साथ खूब शराब पीती है। और सिगरेट, तोबा-तोबा दिन भर में तीस-तीस चालीस-चालीस पी जाती है। बहुत ही आवारा है, पर मेरे पति को खूब प्यार करती है। उसके आने पर उस वहशी की विकृत रंगरेलियाँ बहुत कम हो गई हैं। अब वह इस नई बीनणी के इर्द-गिर्द ही रहता है।

और उसके चेहरे पर भयानक छायाएँ तैरा करती हैं। हरदम सिगरेट और शराब पीने से उसकी आँखें धँस गई हैं और उसके मुँह से एक अजीब सी बदबू आती है।

कल वह मेरे पास आई थी।

मैं बड़ी विस्मित हुई। मैंने उसे अपने पास बिठाया।

उसने मुझे सिगरेट देते हुए कहा, "लो, सिगरेट पिओ।"

मैंने अस्वीकृति सूचक सिर हिला कर कहा, "नहीं, मैं सिगरेट नहीं पीती!"

"सिगरेट नहीं पीतीं, तभी तुम्हें यहाँ सम्मान नहीं मिला। तभी तुम्हारा यहाँ रुआब नहीं रहा। देखो 'बड़ी रानी' (वह मुझे 'बड़ी रानी' ही कहती है), अगर तुम्हें इस चहारदीवार में मस्ती से रहना है तो जितने दुर्गुण यहाँ के आदमियों मे हैं, उतने ही दुर्गुण तुम अपने में भरलो।"

बात कैसी भी हो, पर यह सही है कि ठकुराणी अपनी इस बहू से डरती है। इसका खौफ खाती है। इसकी बातों को वह मानती है।

मैंने उसे कहा, "मैं ऐसा नहीं कर सकती।"

जानते हो उसने मुझे क्या उत्तर दिया?

वह भड़क कर बोली, "अपने जीवन को यूँ ही घुटा-घुटा कर बरबाद कर दोगी।"

उसका कहना ठीक है, पर मैं अवगुणों को नहीं अपना सकती। दुर्व्यसन आदमी का नैतिक पतन कर देते हैं।

अच्छा विदा!

तुम्हारी ही—
केसर

मेरे शिव,

तुमने लिखा कि तुम्हारे मालिक मास्टरजी मारे गये !''''वह भी किसी रेल को लूटते हुए, वे एक महान् क्रान्तिकारी थे ! सब अचरज की बातें हैं। पहले तुमने ऐसा कभी भी जिक्र नहीं किया था। क्यों ? इसलिए कि मैं स्त्री हूँ और स्त्रियां अपने मन में रहस्य छिपा कर नहीं रख सकती ? लेकिन मैं ऐसा नहीं समझती हूँ। स्त्री सागर होती है। वह अपने भीतर अनेक तूफान छिपा कर भी शान्त रहती है। शिव ! तुम्हें गर्व है कि तुम्हारे मास्टरजी अपने देश की आजादी पर बलिदान हो गये। उनका जीवन धन्य है !

लेकिन तुमने लिखा था, तुम्हें गांधीजी के अहिंसात्मक आन्दोलन में विश्वास है। अच्छा ही है। लेकिन अहिंसा से आदमी अकर्मण्य न हो जाय, बस इतना ख्याल रखना।

हाँ, तुम अपने काम मे व्यस्त हो। कहते हो कि चर्खा भी कातने लगे हो। वह और भी अच्छा है। तुम्हारी एक कहानी 'चाँद' में पढ़ी। "ठकुराणी की चारु" भी पसन्द आई। भूल से मैंने उस कहानी का जिक्र जीत कुँवर से कर दिया। जीत कुँवर उस कहानी के पन्नों को लेकर ठकुराणी के पास गई। उसके न चाहने पर भी उसने वह कहानी उसे सुना दी। बस फिर क्या था ! महल में हल्ला मच गया। लेकिन जीत कुँवर ने उन्हें समझाया कि उसने शहर से कुछ सामान मँगवाया था, उसमें यह कागज आये हैं।

वस्तुतः वह दुर्गुणो का घर है लेकिन वह अपनी 'बड़ी रानी' को बहुत प्यार करती है। कभी-कभी वह दुखी हो जाती है तो मेरे पास आ जाती है।

आँसू बहाकर कहती है, "तुम मुझे बेहया मत समझो बड़ी रानी ! लेकिन मैं क्या करूँ ? मैं तुम्हारी तरह संयम और शान्त जीवन नहीं गुजार सकती। मैं तुम्हारी तरह सीने पर पत्थर रखकर नहीं रह सकती। फिर हरएक की प्रकृति भिन्न-भिन्न होती है। मेरे बाप ने जानबूझ कर मुझे इस अपंग जानवर को सौंपा, इसलिए मैंने यह तय कर लिया है कि मैं उसकी पगड़ी उछाले बिना नहीं रह सकती। मुझे लोग छिनाल कहें और मेरी चरित्र हीनता को लेकर मेरे कुटुम्ब को गालियाँ निकालें, बाप से जाकर शिकायतें करें और कहें कि आपने चोखी बेटी जनी है !''''बड़ी रानी ! मेरे कारण उस दुष्ट की दुष्टता हो गई। अब मेरे कमरे में कोई भी लड़की आ जाती है तो जानती हो

मैं क्या करती हूँ ? मैं उन भोपाल और शार्दूल के बच्चों को हण्टरों से पीटती हूँ। मुझे किसी तरह की लाज-शर्म नहीं।""लेकिन अब तुम्हारा कोई भी बाल बांका नहीं कर सकता। तुम अपनी मर्जी के मुताबिक जो भी चाहो कर सकती हो।"

उसके कारण मुझे बड़ा बल मिला है।

तुमने यह भी लिखा है कि मैं शीघ्र ही एक पैम्फलेट ठाकुरों के अत्याचारों को प्रस्तुत करता हुआ छपवाऊँगा और उसका घर-घर प्रचार-प्रसार करूँगा।

तुम्हें एक दुःख भरी खबर भेज रही हूँ, कदाचित् अँग्रेजी अखबारों से तुम्हें पता भी लग गया हो कि कल हाथी महल की सीढ़ी से राजाजी का पाँव फिसल गया है, जिससे उन्हें जगह-जगह चोट आई है।

उस चोट की खबर मिलते ही ठकुराणी राजधानी को चली गई है। उसके साथ ठाकुर सा भी गये हैं। जीत कुँवर ने जाने की इच्छा प्रकट की थी, पर ठकुराणी उसे साथ ले जाने को राजी नहीं हुई और मुझे तो कहा तक नहीं। मैं दर असल इन सभी मौजूदा सम्बन्धों से कट गयी हूँ।

तुम्हारी अपनी—
केसर

× × ×

प्रिय शिव,

रात का सन्नाटा छाता जा रहा है।

राजाजी के महल में बड़ी भीड़ है। लोग बड़ी तादाद में आ-जा रहे हैं। उनकी दशा दिन-प्रतिदिन चिन्ताजनक होती जा रही है। उनकी बीमारी के कारण राज्य के तमाम ठिकानेदार सपरिवार आ गये हैं।

मैं भी राजधानी पहुँच गई हूँ। और जीत भी।

सब ठिकानेदारों को एक महल में ठहराया गया है। सेठानी, महाराजा के प्राईवेट सेक्रेटरी धूड़सिंह और अन्य अफसर तथा दीवान सबके सब वहाँ खड़े हैं। राजाजी होश मे हैं तथा उनका ठीक ढंग से उपचार हो रहा है। उम्मीद है कि चिन्ताजनक स्थिति आज-कल में समाप्त हो जायगी।

उधर प्रजा मण्डल का अधिवेशन होने वाला है। बड़ी मुश्किल से प्रजा मण्डल के नेताओं को आज्ञा मिली है। उन पर कई तरह के प्रतिबन्ध लगाये

गये हैं। बाहर से आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को इस तरह देखा-भाला जाता है जैसे वह किसी का तख्ता उलटने आ रहे हैं।""शिव, मुझे मालूम हुआ है कि इसमें तुम भी आओगे। तुम ऐसे कामों में कदापि पीछे नहीं रहोगे।

चिमन को मैं वहाँ भेजूँगी।

सुना है कि सरकारी अधिकारी इस सम्मेलन को बुरी तरह असफल करने पर तुले हैं और यह भी पता चला है कि कुछ गुण्डों को वह हुल्लडबाजी करने भी भेजेंगे। मुझे लिखते हुए बड़ी शर्म आती है कि चन्द पेटू खद्दरधारी सम्मेलन की उचित माँगों का विरोध करेंगे। यह उनके लिए कितनी शर्म की बात है!

मैं यहाँ जीत कुँवर के पास सुरक्षित हूँ।

पत्र अधूरा छोड़कर जा रही हूँ। सुना है कि महारानी ने सभी को अभी बुलाया है क्योंकि महाराजा की तबीयत एकाएक खराब हो गई है।'''

शिव!

दस दिन के बाद पत्र को पूरा कर रही हूँ। महाराजा का देहान्त हो गया है। सच बताऊँ तुमसे, उनको मरवा दिया गया है। यह सब राक्षसिनी ठकुराणी का ही काम है। घटना इस तरह है—

सुनो शिव! जैसे ही राजाजी की तबीयत खराब हुई, वैसे ही ठकुराणी महारानी को लेकर अपने गुप्त कमरे में गई।

घोर एकान्त!

महारानी का हाथ ठकुराणी ने महल में जाते ही जोर से पकड़ लिया।

"तुम क्या कहना चाहती हो बैना? मैं कुछ भी नहीं सोच सकती। वे मुझे छोड़ कर जा रहे हैं!"

सूरज एकदम कठोर हो गई। वह भड़क कर बोली "बाईसा, बाईसा भावुकता को छोड़िए।"

"कैसी भावुकता?"

"इस तरह का विलाप आपको शोभा नहीं देता। अच्छे से अच्छे डाक्टर को बुलाइए।"

"क्यों, कोई डाक्टर रह गया है?"

"हाँ!"

"कौन ?"

"मोतीलाल, लन्दन से डाक्टरी पढ़ कर आया है। इसे राजाजी खुद बम्बई से लाये थे।"

"अच्छा!"

"हाँ बाईसा! उसे सिर्फ इसीलिए यहाँ नहीं बुलाया गया है कि वह अन्य डाक्टरों की तरह सेठानी की चापलूसी नहीं करता, बल्कि वह एक ईमानदार व्यक्ति भी है।"

"मैं उसे अभी बुलाती हूँ।" महारानी आवेश में बोली और द्वार की ओर लपकी।

"ठहरिए, महाराजकुमार सा को बुलाइए।"

"पद्मसिंह को? उसे...?" महारानी चुप हो गई। ठकुराणी सीधे महाराजकुमार सा के पास पहुँची। पद्मसिंह दीवानजी से बातचीत कर रहा था।

ठकुराणी ने दासी को भेजकर उसे अपने पास बुलाया। उसे एकान्त कमरे में ले गई और बोली, "मैं तुम्हारी काकी के अलावा मौसी भी हूँ। तुम्हारी रगों में मुझ जैसा जोश और अपने काका जैसा प्रतिशोध लेने का दम होना चाहिए।"

पद्मसिंह आरामकुर्सी पर बैठ गया।

"मैं आपका मतलब नहीं समझा।"

"मतलब यह है......." ठकुराणी उसके पास कुर्सी खींच कर बैठ गई। उसने कमरे का दरवाजा बन्द कर लिया।

"क्या तुम उम्र भर महाराजकुमार ही रहोगे? मेरे बेटे! तुम यह नहीं जानते कि सेठानी तुम्हारे विरोध में कितना भयंकर षड्यंत्र रच रही है! वह मृत्यु के मुख में सिसकते हुए महाराजा को इसलिए ठीक करना चाहती है ताकि वह तुम लोगों पर शासन करती रहे।"

पद्मसिंह ने कुछ कहना चाहा। उसके चेहरे के भावों से स्पष्ट पता चल रहा था कि वह ठकुराणी के कथन का विरोध करना चाहता है। पर ठकुराणी ने उसे बोलने ही नहीं दिया। वह पुनः बोली, "सेठानी तुम्हारे सारे अफसरों को अपने साथ मिला चुकी है। वह चाहती है कि महाराजा के एकाकी पुत्र

की हत्या कराके गद्दी पर किसी अपने ठाकुर को बिठा दे। मुझे यह भी मालूम हुआ है कि इसके साथ अंग्रेजों के बड़े-बड़े आदमी भी शामिल हैं क्योंकि सेठानी का वर्ताव सबके साथ बुरा ही रहा है।"

"लेकिन काकी सा आपको किसने कहा है ?"

ठकुराणी के होठों पर कुटिल मुस्कान दौड़ गई। वह अपनी दृष्टि को दीवार पर गाड़ कर बोली, "यह पत्र पढो। इसमें सेठानी ने यहाँ के रेलवे के अंग्रेज अफसर को लिखा है कि मैं शीघ्र ही महाराजकुमार को खत्म कराके राजाजी को एकदम अपने वश में कर लूंगी।"

पद्मसिंह ने पत्र को देखा, पढ़ा। एक बार, दो बार और तीन बार पढ़कर वह हैरान हो गया।

"बेटा ! मैं तुम्हारी मौसी हूँ। मैं अपनी बहिन की गोद उजड़ते नहीं देख सकती। इसलिए मैंने ऐन मौके पर तुम्हें सावधान कर दिया है। मैं चाहती हूँ कि तुम इतने बड़े राज्य के एकाधिकारी राजा बनो। लोग तुम्हारी तुम्हारे बाप की तरह जयजयकार करें। तुम इतने भोग-विलास और ऐश्वर्य के उपभोक्ता बनो।···लेकिन मेरे चाहने से क्या होगा ? मैं सिर्फ तुम्हें राय दे सकती हूँ।" और ठकुराणी की आँखें भर आईं।

"लेकिन माँ जी सा ने क्या कहा ?"

"वह भावुक नारी है। वह सेठानी का विरोध करने में अपने आपको सर्वथा असमर्थ पाती हैं। वह समझती हैं कि वह इस संघर्ष में अपना नाश कर लेंगी। उनमें साहस नहीं है। उनमें लड़ने की क्षमता नही है।"

"फिर मैं क्या करूँ ?"

"सबसे पहले तुम वहाँ जाओ और दीवानजी को अपने साथ मिला लो। दीवानजी सेठानी के कारण बड़े दु:खी हैं और बेचारे अपने व्यक्तित्व को मारे हुए जी रहे हैं। वे एक कट्टर राजपूत हैं। बाँकड़ली मूँछों के धनी तथा शान और आन पर बलिदान होने वाले। लेकिन इधर परिस्थिति खराब हो गई है और वे बेचारे इस छिनाल के कारण बड़े परेशान हैं। कठपुतली की तरह जी रहे हैं। बस, उन्हें इतना कह दो कि मुझे सेठानी पर भरोसा नही है। वह महाराजा को मरवाना चाहती है। बस !"

"फिर ?"

"फिर उस सेठानी की बच्ची को महल से निकलवा दो। महाराजा अभी कुछ भी नहीं बोल सकते हैं और तुम खुद डाक्टर मोतीलाल के पास जाओ और उसे कह दो कि कोई····?" ठकुराणी ने देखा कि पद्मसिंह के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही हैं। वह सम्भल कर अत्यन्त अभिनय-कुशल खलनायिका की तरह अपने चेहरे के भावों को तुरन्त बदल कर बोली, "मैं डायन नहीं हूँ। मैं तुम्हें अपने पिता का हत्यारा नहीं बनाना चाहती, मैं यह भी नहीं चाहती कि इतिहास तुम्हारी नालायकी पर थूके, लेकिन यह तुम्हारे जीवन का प्रश्न है। बिना सेठानी की मौत के तुम कुछ भी नहीं बन सकते और उसकी मौत तभी हो सकती है जब तुम····! संकेत काफी है। सीधे डाक्टर के पास चले जाओ।" ठकुराणी उसके पास आई। उसके कन्धों को पकड़ा। थोड़ी देर बाद उसने उसके कन्धों से अपने हाथों को हटाकर उसकी पीठ थपथपाई और बोली, "राजनीति में कोई अपना-पराया नहीं होता और कोई अच्छा-बुरा नहीं होता। राजनीति का आवरण इतना गहरा होता है कि उसमें कुछ भी नजर नहीं आता। इसलिए कुशल राजनीतिज्ञ की तरह अवसर का लाभ उठाओ।"

वह इतना कह कर चली आई।

पद्मसिंह राजाजी के पास आया।

सेठानी ने उसे भीतर जाने के लिए मना कर दिया। ठकुराणी का समझाया हुआ पद्मसिंह एकदम भड़क उठा। कड़क कर वह बोला, "आप कौन हैं मुझे रोकने वाली ?····दीवानजी, आप मेरे रिश्ते के मामा हैं, मैं आपसे पूछ सकता हूँ कि यह कौन है मुझे रोकने वाली ?"

दीवानजी ने कहा, "यह राजाजी की खास !"

"लेकिन ये हुक्म कैसे चला सकती है ? दीवानजी इसे कह दो कि यह महल से इसी वक्त चली जाय। मुझे खतरा है कि यह कुछ गड़बड़ न कर दे !"

पद्मसिंह का इतना कहना था कि सेठानी आहत साँपिन-सी नीचे उतर गई। दीवान जी, धूड़सिंह एवं कई सामन्त हतप्रभ से देखते रहे।

दीवानजी ने उसे एकान्त में ले जाकर कहा, "यह आपने अच्छा नहीं किया युवराज, वह बड़ी दुष्ट औरत है !"

"लेकिन मैं भी कम नहीं हूँ। मैं उस औरत का हुक्म नहीं जो अपने सतीत्व को बेचकर शासन करती हो। यह रण्डी है

रण्डी का रुआब मान सकते हैं, पर मैं नहीं मान सकता ! राजाजी के अच्छे होने पर मैं इसकी मुखालफत करूँगा।"

"क्या कहते हो बेटा ?"

"हाँ मामा सा ! इसके कारण मेरे पिताजी इतने भ्रष्ट हो गये हैं कि वे प्रजा की बहू-बेटियों को भी कुछ नहीं समझते। आप यहाँ रहिए, देखिए किसी तरह की यहाँ गड़बड़ी नहीं होनी चाहिए। मैं डाक्टर को बुला कर लाता हूँ। मुझे यह भी मालूम पड़ा है कि ये जितने भी डाक्टर हैं वे सब सेठानी के इशारों पर नाचने वाले हैं। आप मुझे बता सकते हैं कि महाराजा की तबीयत एकाएक क्यों खराब हो गई ?···चुप क्यों हैं ?···यह मैं आपको बताता हूँ। सेठानी जैसी कुलटा चाहती है कि राजाजी बीमार रहें और वह अपनी मर्जी का जुल्म ढाती रहे।"

"सोच लीजिए आप उसे 'नीति' में परास्त नहीं कर पायेंगे। वह आपको—।" दीवानजी कहते-कहते रुक गये।

"आप चिन्ता न कीजिए। मुझे आपके सहारे की जरूरत है। मैं यह चाहता हूँ कि आप इन सबको यहाँ से रवाना कर दें।"

"जो हुक्म !"

पद्मसिंह चला गया। बीच में ही उसे ठकुराणी मिल गई। उसने उसे रोका और हिदायत के तौर पर कहा, "बड़ा लालच देना।"

"आप चिन्ता न करें, मासी सा !"

वह कुटिल हँसी हँस पड़ी, बोली, "मैं चिन्ता नहीं करती हूँ, पर तुम जवान हो और जवान आदमी अक्सर ऐसा काम कर देता है जो उसकी समझ में बहुत ही अच्छा होता है लेकिन वस्तुतः वह एकदम बुरा होता है। इसलिए ऐसे मौकों पर विवेक को नहीं छोड़ना चाहिए। घबराहट का जरा-सा चिह्न भी नहीं दीखना चाहिए। साधारण मुद्रा, साधारण ढंग और साधारण गतिविधि !"

"समझा !"

"अगर तुम मेरे कहने पर चले तो जीवन के समस्त सुख यहीं पर भोग लोगे। जवानी की उम्र में राजा बनना बहुत कम नसीब होता है !"

पद्मसिंह चला गया।

ठकुराणी महारानी के पास आई। बोली, "अब आपका कुछ भी कोई नहीं बिगाड़ सकता। अब आपके घर में नयी रानी नहीं आयगी। अब सेठानी का हुक्म यहाँ पर नहीं चलेगा!"

"क्यों क्या बात है?"

"बात यह है कि अब आपका बेटा उस छिनाल रांड का रहस्य जान गया है।"

और शिव डाक्टर ने आते ही कहा, "महाराजाधिराज का इलाज गलत हो गया है। उन्हें जो इन्जेक्शन दिये गये हैं, वे ठीक नहीं हैं।"

यह झूठी बात सारे महल में हवा की तरह फैल गई और देखते-देखते डाक्टर ने पचास हजार रुपये लेकर महाराजा को मार दिया।

महल व राज्य में हाहाकार मच गया।

तुम्हें यह सुनकर आश्चर्य होगा कि इस घटना से मुझ पर बड़ा आतंक हुआ और मैंने तय किया कि ऐसी खूंखार औरत से बच कर रहना चाहिए। इससे टकराने का सीधा परिणाम यह है कि अपने आपको समाप्त करना।

राजधानी में शोक छा गया है। लोग धड़ाधड़ सिर मुंडवा रहे हैं। पद्मसिंह महाराजाधिराज नरेन्द्र शिरोमणि की पदवी धारण करके राजा बन गया है।

शेष फिर!

तुम्हारी—
केसर

× × ×

मेरे शिव,

यह पत्र मैं तुम्हें साधुपुर से लिख रही है। रात का सन्नाटा छाया हुआ है। तारों से भरा आकाश है। मैं तुम्हें बता रही हूँ—वर्षों के बाद मुझसे मेरे माता-पिता राजधानी में मिले थे। मेरे एक छोटा भाई हुआ था, दुर्योग समझो कि वह जन्म लेने के साथ ही मर गया।

मेरे माँ और मेरे बाप, हारे-थके यात्रियों की तरह मेरे पास आये। मैंने उनके चरण-स्पर्श किये। उन्होंने मुझे आशीष देते हुए कहा, "अखंड सौभाग्यवती हो, बेटी!"

मैंने उनकी ओर देखा। वे दोनों मेरी दृष्टि के दुःख को नहीं सह सके। असह्य वेदना थी मेरी दृष्टि में। यौवन के पीड़ित क्षणों का सारा इतिहास बोल गया मेरी आंखों में।

"कैसी हो बेटी ?"

मैंने विगलित स्वर में कहा, "मैं किसी की बेटी नहीं हूँ। मेरे मां-बाप नहीं हैं। मैं अनाथ हूँ।"

मां सिसक पड़ीं। लेकिन मैंने निश्चय कर लिया था कि मैं किसी से समझौता नहीं करूंगी। मुझे कितनी पीड़ा और कष्ट मिलते रहें, पर मैं किसी के कहने पर अपनी आत्मा को नहीं मारूंगी।

शिव ! नारी बहुत दयनीय है। जन्म के त्योहार से लेकर मरण के त्योहार तक बस किसी न किसी बन्धन में बंधी रहती है। उसे किसी न किसी का वास्ता देकर दुर्बल रखा जाता है। और वह थोड़ी-सी भावना भरी बातों के खोखले महत्व में छली जाती है। लेकिन मैंने तय कर लिया है कि मृत्यु के अन्तिम क्षण तक न मैं बाप के कर्त्तव्य की पुकार पर, न मां के आंसू पर और न पति के सतीत्व-धर्म की दुहाई पर पिघलूंगी। उचित और अनुचित की चिन्ता किये बिना ही मैं उस 'एक पल' को प्राप्त करने का प्रयास करूंगी, जिसे मैं अपने हृदय की समस्त अभिलाषाओं से चाहती हूँ।

"तुम्हें ऐसा नहीं कहना चाहिए।" मां ने मुझसे कहा। वह अपने ओढ़ने से आंसू पोंछ रही थी। अतः मैं उनके चेहरे के भावों को पढ़ने में सर्वथा असमर्थ रही। मेरे पिता का मुख अपराधी की तरह झुक गया।

मां ने मुझे अपने सीने से लगा कर कहा, "तुम मुझे माफ नहीं कर सकतीं बेटी ? तुम यह अच्छी तरह जानती हो कि यहां आदमी अपने मन के मुताबिक कुछ भी नहीं कर सकता। यहां एक दूसरे का आपस में कोई न कोई सम्बन्ध लगा रहता है।"

"उस सम्बन्ध में मालिक लोग अपने सुख को तो सुरक्षित रख लेते हैं पर वे दूसरे के सुख और जीवन की आहुति दे देते हैं।....मां सा ! आपने कभी यह सोचा था कि आपकी बेटी का क्या हाल होगा ?"

मां ने कोई उत्तर न दिया। आत्मग्लानि के मारे अपना सिर झुका कर बैठ गई।

हम तीनों कुछ देर तक चुपचाप बैठे रहे। अन्त में पिताजी ने कहा, "घर नहीं चलोगी?"

"नहीं!"

"क्यों?"

"मैंने अपने तमाम स्वजनों से नाते-रिश्ते खत्म कर लिये हैं। मेरा इस संसार में कोई नहीं है। मैं अकेली हूँ और जो मेरा है, उसे मैं प्राप्त नहीं कर सकती। ("'जैसे तुम हो शिव, तुम्हें प्राप्त करने के लिए न मालूम कितने वर्ष और इन्तजार करना पड़ेगा"") माँ मेरी ओर देखती रही। धीरे-धीरे उनके जाने का समय हो गया। मैं अकेली खड़ी रही। मैंने अपनी माँ के साथ कठोरता का व्यवहार किया। उनके हृदय पर आघात लगाया, पर क्या करती शिव? क्या तुम नहीं जानते कि तकलीफों के बीच मनुष्य जिस तरह भूख को नहीं भूल सकता, उसी तरह वह यौन-पीड़ा को भी नहीं बिसार सकता। अपने आस-पास की युवतियों को जब मैं आमोद-प्रमोद करते देखती हूँ तब ऐसा लगता है कि मैं भीतर ही भीतर जल मरूँगी। कोई अदृश्य-शक्ति मुझे भस्म करने पर उतारू हो गई है। देखो न, इतने बड़े घर में सिवाय दो-चार दासियों के मेरा अपना कौन है? मेरा अपना है सिर्फ मेरा अपना दुःख और असीम वेदना।"

तुम्हें एक बात लिखना भूल गई हूँ।

महाराजा की हत्या के तुरन्त बाद ही दीवानजी को पद्मसिंह ने बुला कर कहा, "डी० आई० जी० साहब को जाकर कह दीजिए कि वह सेठानी के घर के चारों ओर पहरा लगा दे ताकि एक पैसे की चीज भी इधर-उधर न हो।"

इधर राजाजी की मृत्यु के समाचार से शोकाकुल सेठानी ने जब पुलिस को अपने घर के चारों ओर देखा तो उसके होश उड़ गये। महाराजा को श्मशान घाट जला आने के बाद पुलिस उसकी हवेली को गई। दीवानजी, डी० आई० जी० व अन्य ठिकानेदार जो चन्द घण्टों के पहले सेठानी जी का थूक हथेली में लेकर चाटते थे, अब वे भी उसकी खिल्ली उड़ाने लगे।

देखते-देखते कई दिनों के बाद सेठानी की हवेली में ताला लगा दिया गया। उसे धक्के मार कर हवेली से बाहर निकाल दिया गया। झाड़शाही के

क्रूर शासन में इतना परिवर्तन मैंने कभी नहीं देखा था। बेचारी सेठानी जो इत्र मे स्नान करती थी, जो दिन भर में कई बार कपड़े बदलती थी, जिसकी हाजिरी में कई-कई दासियाँ रहती थी, उसको एक अदना सिपाही गालियाँ निकालने लगा। अपनी भयंकर दुर्दशा देकर सेठानी अपना होश खो बैठी। जब पद्मसिंह के सिपाहियों ने उमके पति को छिपाया हुआ धन बताने के लिए पीटा, तब वह उन्मत्त-सी चीख उठी और देखते-देखते पागल हो गई।

कानून जिसका अपना जूता है, उस झाडशाही में न्याय कहाँ? सेठानी के सारे जेवर उतार लिये गये। उसके पति के शरीर मे हन्टरों के निशान चमक उठे और लाचार उसने आत्मग्लानि के मारे आत्महत्या करली। सेठानी पागल हो गई है। वह सड़कों पर भटक रही है। ठकुराणी को आत्मसन्तोष मिला। उसने मेरे सामने भी इसका जिक्र किया। वह मुझे अपने बुरे इरादों से वाकिफ कराना चाहती है। वह मुझे बताना चाहती है कि मैं कितनी भयानक हूँ।

फिर शासन-व्यवस्था में परिवर्तन हुए। सेठानी के समर्थकों का वहाँ से पत्ता कट गया। एक अँग्रेज आई० जी० पी० का रुआब बढ़ गया है। मेरे पिताजी को खजांची बनाया गया है, क्यो कि इसके पहले उस पद पर सेठानी का भाई था जिसे तुरन्त निकाल दिया गया।

लेकिन जनानी ड्योढ़ी में किंचित् परिवर्तन नहीं हुआ। उसमे नयी-नयी छोकरियाँ बढ़ ही रही हैं।

ठकुराणी की बात मत पूछो। आजकल उसकी सब जगह खूब चलती है। उसमें दुर्गुणों का समावेश होने लगा है। सिगरेट और शराब खूब पीने लगी है और नये राजाजी पद्मसिंह उसे खूब पूछते हैं। वह बार-बार राजधानी जाती है और दिन प्रतिदिन उसकी लिप्सा बढ रही है।

मेरी ओर वह देखती ही नहीं।

बस!

तुम्हारी दुःखी—
केसर

× × ×

शिव,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने लिखा है कि प्रजा-मण्डल का अधिवेशन हो रहा है, मैं जरूर आऊँगा। तुम्हें आना ही चाहिए। पर मैं तुमसे भेंट नहीं कर पाऊँगी। अभी मेरी उधर आने की कोई सम्भावना नहीं है। बहानों के बिना आना मुझे ठीक नहीं लगता। फिर अब मुझे ठकुराणी से भय हो गया है। दरअसल वह एक खूँखार जानवर की तरह है जिसे उसकी ही लिप्साएँ और झूठा दम्भ विकृत कर रहा है। पतनोन्मुख बना रहा है।'''मैं समझती हूँ कि तुम आने के पहले अच्छी तरह सोच लो क्यों कि जो अँग्रेज आई० जी० पी० है न, वह बड़ा खूँखार है। इन गोरों को हम भारतीयों से कुछ भी प्यार नहीं। मक्खियों की तरह ये हमारे जीवन को समझते हैं। हम लाख इनकी गुलामी करें, इन्हें ऊँचे ओहदे दें, पर ये समझते हैं कि हम सब कालों को मह ज्ञान दे रहे हैं कि शासन कैसे चलता है ? तो यह अँग्रेज आई० जी० पी० खुद इस अधिवेशन को असफल करने में लगा हुआ है। उसने चारों ओर से अपने अँग्रेज अधिकारियों को बुला लिया है और वह इस मौके पर राजाजी को विलायत भी भेज रहा है। नये राजाजी को विलायती लड़कियों के प्रति तीव्र जिज्ञासा है। एक अबोध इन्सान की जिज्ञासा, इसलिए वे विलायत जायेंगे। पीछे से अधिवेशन होगा और तुम लोगों का जोरदार दमन किया जायेगा। यह मेरी शका है, जो झूठ भी हो सकती है, पर सत्य की सम्भावना कहीं अधिक ही है। इसलिए आने के पहले अच्छी तरह से सोच-विचार लेना।

तुम्हारी कहानी "राजाजी की मौत" पढ़ी।

बड़ी सनसनीदार कहानी रही। ठकुराणी के हाथों में जैसे ही वह कहानी पहुँची, वैसे ही वह फुस्कारती हुई मेरे पास आई और कड़क कर बोली, "यह किसकी जुर्रत हो सकती है ?"

मेरा मुँह सफेद पड़ गया, फिर भी मैं सम्भल कर धीमे स्वर में बोली, मैं कुछ भी नहीं जानती ठकुराणी सा !"

"मैं सब समझती हूँ। यह 'सत्यवादी' नाम का जो लेखक है, वह अवश्य कोई घर का भेदी है। मैं आज सबकी जाँच-पड़ताल करूँगी।"

मैंने तेज स्वर में कहा, "कर लीजिए।"

उस समय वह चली गई। मैंने तुरन्त तुम्हारी सभी चिट्ठियों को आग में

जला दिया। पता नहीं, वह कब अपने दल-बल के साथ आ पहुँचे और कब इस रहस्य का पता चल जाय कि मैं ही तुम्हें सारे भेद दे रही हूँ।

यहाँ से यह पत्र संध्या के समय लिख रही हूँ, क्योंकि आज दोपहर को एक भीषण दुर्घटना घटी थी। इस झाड़शाही में नागरिक अधिकारों का जो हनन देखा गया है, वह कहीं भी नहीं होगा। तुम समझते हो कि यह बीसवीं सदी है, और मैं समझती हूँ कि इन रियासतों में आज भी आदिम-काल की बर्बरता चली आ रही है।

घटना इस तरह है कि दो मियाँ-बीबी बाहर से आये थे। बाहर मतलब परदेश से। वे दोनों जाति के धोबी हैं। वर्षों से वे कलकत्ता रहते थे एवं वहाँ धुलाई का काम करते थे। वहाँ उनका व्यापार अच्छा चला, फलस्वरूप उन्होंने कुछ रुपया इकट्ठा कर लिया और उन्होंने सोने के जेवर बना लिये।

लेकिन हमारे ठिकाने मे कोई भी नीची जाति का आदमी सोने का जेवर नहीं पहन सकता। कुछ राजपूतो व ब्राह्मणों ने उन दोनों को देखा तो वे आग-बबूला हो उठे। वे सीधे ठकुराणी के पास आये। ठकुराणी सिगरेट पी रही थी और उसने जैसे ही यह सुना, वैसे ही उसने यह हुक्म दे दिया कि उन दोनों के जेवर छीन लिये जायँ।

ठकुराणी का हुक्म पाते ही चन्द राजपूत वहाँ गये और उन्होंने तुरन्त उन बेचारों के जेवर लूट लिये। उन राजपूतों ने अपने चेहरे डाकुओं की तरह ढक रखे थे। और, एक ने उसकी बीबी से गन्दा मजाक भी कर लिया। जब वह रोता-पीटता ठकुराणी के पास आया, तब ठकुराणी ने बहुत अच्छा अभिनय किया।

वह बोली, "तुम उन्हें पहचानते हो ?"

"नहीं ठकुराणी सा !"

"फिर भी तुम चिन्ता न करो। हम उनकी खोज करेंगे और उन्हें कड़ा दण्ड देंगे।" लेकिन बाद मे उन्हे यह पता चल गया। उन दोनों ने जाते-जाते कहा, "अब हम जीवन भर इस निगोड़े ठिकाने का मुंह नही देखेंगे।"

ठकुराणी को उन जेवरों का कुछ हिस्सा मिला।

अभी-अभी एक बढ़िया कार आकर ठकुराणी के महल के आगे खड़ी है।

राजाजी ने उसे बुलाया है, वह आ रही है। जब वह गाँव छोड़ देती है तब मैं चिन्ता से मुक्त हो जाती हूँ।'''समय बीत रहा है।

रात का अँधेरा अब बढ़ने लगा है।

चाँद चमक रहा है। मैं उसमें पड़े दागों को देखकर सोच रही हूँ—सौन्दर्य में कलंक क्यों लगता है?

कभी-कभी हृदय विचित्र अनुभूतियों से भर आता है। एक पीड़ा उठती है और कल्पना सतरंगी इन्द्रधनुष की तरह रंगीन हो जाती है। इतनी रंगीन, जिसमें मैं यह भूल जाती हूँ कि मेरा जीवन हाहाकारों से भरा है, दुःख-दर्दों से ओत-प्रोत है।

सोचती हूँ—

मैं यहाँ से भाग गई हूँ। तुम्हारे पास हूँ।

चाँद चमक रहा है। दूर से यह आवाज आ रही है—

म्हें रावल सूँ नईं बोलाँ
नाँय बोलाँ, मुख नईं बोलाँ''''
पखवाड़ा री कोल कह्यो छो
छै मीना सूँ आया ढोला
म्हें रावल सूँ नईं बोलाँ''''
जद रावल थे मेड्या आस्यो
लाल-किवाड़ो जड़ लेस्याँ
म्हें रावल सूँ नईं बोलाँ''''
जद ढोलो म्हाँरी सेजाँ आसी
घूँघट रा पट नईं खोलाँ
म्हे रावल सूँ नईं बोलाँ''''।[१]

१. भावार्थ—मैं अपने राजा से नहीं बोलूँगी। मुख से नहीं बोलूँगी। एक पक्ष का वायदा किया था और छः माह के बाद आये। जब तुम ढोलाजी, महल में आओगे तब मैं लाल-किवाड़ बन्द कर लूँगी और तुमसे नहीं बोलूँगी। जब तुम शय्या पर आओगे तब मैं अपना घूँघट-पट नहीं खोलूँगी, हे पतिदेव! मैं तुमसे नहीं बोलूँगी।

सचमुच शिव मैं तुमसे नहीं बोलूँगी। तुम कभी भी मुझे अपने पत्र में प्यार की बातें नहीं लिखते हो। क्या तुम्हें मेरी याद नहीं आती है? क्यों आये? कौन हूँ मैं तुम्हारी?...मैं सिर्फ तुम्हारी हूँ।...शिव! मैं बहुत दुःखी हूँ, बहुत दुःखी। लगता है, अपना काम तमाम कर लूँ, पर केवल तुम्हारा ध्यान, केवल तुम्हारी स्मृति, केवल तुम्हारा प्यार मुझे ऐसा करने से रोक रहा है।

शिव! मैं तुम्हारी पार्वती हूँ, पार्वती!

तुम्हारी पार्वती—
केसर

× × ×

शिव!

चिमन न हो तो मैं मर जाऊँ। हम दोनों इसका कभी भी अहसान नहीं उतार सकते।

अब मेरा तुमसे मिलने का अवसर आ रहा है।

क्यों आ रहा है, यह तुम्हें चिमन बता देगा। तुम अधिवेशन मे आ रहे हो? जरूर आओ, पर उस गोरे बाज से बचना। वह गोरा बाज निर्दोष कबूतरों पर बुरी तरह हमला करता है।

अधिवेशन मे गड़बड़ी की पूरी सम्भावना है।

जुल्मी लोग देश के जाग्रत सिपाहियों के बारे में गन्दी-गन्दी कहानियाँ बना कर भोली जनता में फैला रहे हैं। साथ ही नेताओं को गद्दार और लुटेरा बताकर उसे आतंकित कर रहे हैं।

मैं तुम्हे एक बार और सावधान करना चाहती हूँ कि तुम होशियार रहना। कही ऐसा न हो कि तुम्हारा सपना अधूरा ही रह जाय।

मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी। चाहती हूँ कि तुम्हें किसी तरह एक बार देख लूँ।

तुम्हारी—
केसर

× × ×

२

राजधानी में अधिवेशन की तैयारियाँ हो गईं।

विदेश में पद्मसिंह का मन नहीं लगा, इसलिए वह शीघ्र ही लौट आये।

राज्य के बड़े-बड़े नेता आये और उन्होंने बड़े जोश से देश में चल रही विदेशी हकूमत और देशी रियासतों में हो रहे शोषण के विरुद्ध आवाजें बुलन्द की। चिमन भी गया था।

शिव साधू का भेष बनाकर आया। बड़ी-बड़ी दाढ़ी, मूँछ और भगवा कपड़े। उसे कोई भी नहीं पहचान सका। उसने पूरे अधिवेशन में भाग नहीं लिया और वह कभी भी किसी मुख्य सभा में नहीं बैठा। बस, उसकी निगाह चिमन पर थी। आखिर उसने चिमन को पहचान ही लिया।

रात हो गई थी।

शिव भेष बदल कर साधूपुर जाने वाली सड़क पर बैठा था। उसके आस-पास कई लोग थे। वह बैठा-बैठा सामन्तों का गुणगान कर रहा था। कुछ लोग सामन्तों का गुणगान सुनकर उसे उनका गुर्गा समझ रहे थे और कुछ राज-भक्त लोग उसे सम्मान की दृष्टि से देख रहे थे। अचानक ठकुराणी की कार वहाँ से गुजरी। रास्ते में भीड़ देखकर उसने तुरन्त चिमन को भेजा। वह गया। उसने आकर बताया कि कोई महात्मा बैठे हैं और वे राजा, महाराजाओं की प्रशंसा कर रहे हैं।

ठकुराणी ने तुरन्त उल्लसित होकर कहा, "उन्हें अपने यहाँ लाने के लिए ले आना, समझे!" ठकुराणी चली गई। चिमन ने आकर शिव को सारी बात बताई।

शिव उठ खड़ा हुआ और उसके साथ चल पड़ा।

रास्ता सूना था।

शिव ने अचानक चिमन का हाथ पकड़ा। चिमन हड़बड़ा उठा। आकुल स्वर में बोला, "क्या बात है?"

"कुछ नहीं, मुझे पहचाना नहीं चिमन?"

चिमन हैरत में आ गया।

वह बड़े गौर से देखकर बोला, "क्या बात है ? मैंने आपको नहीं पहचाना, महात्मा जी !"

"लेकिन मैंने तुम्हें पहचान लिया। तुम चिमन हो। साघूपुर के ठिकाणे के नौकर। केसर कुंवर के पत्रों को छिपे…!"

चिमन हर्ष से भर उठा। बड़ी मुश्किल से बोला, "तुम, शिव तुम !"

दोनों दोस्त एक दूसरे के प्रगाढ़ आलिंगन में आबद्ध हो गये।

अश्रुपूरित नेत्रों से चिमन ने शिव की ओर देखा और बोला, "तुम क्या से क्या बन गये हो मेरे दोस्त !"

"चिमन ! तुम कैसे हो ? तुम्हारे बाल-बच्चों का क्या हालचाल है ?"

"सब ठीक है।"

"लेकिन तुम्हारे कहने मे उत्साह नही।"

चिमन गम्भीर हो गया। वह अपनी आँखों के आँसुओ को पोंछता हुआ बोला, "शिव ! गुलाम की कोई अपनी जिन्दगी नही होती। उसकी हर साँस गिरवी होती है। और उसका हर काम हुक्म की तामील के रूप में होता है। वह न अपने ढंग से सोच सकता है और न वह अपना कुछ स्वतन्त्र कर सकता है।…जीवन के चालीस वर्ष बीत गये हैं। हुक्म की तामील करते-करते मन मर गया है।"

शिव ने तुरन्त उसे आश्वासन दिया, "हम जल्दी ही आजाद होंगे।"

शिव ने उसे एक वृक्ष की छाया मे बिठा दिया।

शान्त वातावरण।

शिव ने कहा, "मैं केसर से मिलना चाहता हूँ। मैं उससे चन्द घड़ी बातचीत करना चाहता हूँ।"

"लेकिन !"

"देखो चिमन, किसी भी तरह तुम मुझे उससे मिला दो।"

"तुम यही पर बैठो। रात को मुझसे यहीं पर मिल लेना।"

"मैं तुम्हें साघूपुर के पास जो टूटा मन्दिर है, वही पर मिलूँगा।"

चिमन वहां से चला गया।

महल मे हलचल थी।

केसर अपने पृथक् महल मे बैठी प्रेमचन्द जी का उपन्यास पढ़ रही

थी। चिमन को देखकर वह उठी और और बोली, "क्या बात है? ठकुराणी सा ने मुझे बुलाया है?"

"हाँ।"

"क्यों?"

चिमन के होठों पर हँसी नाच उठी, "एक बड़े महात्मा के दर्शन करने।"

"मैं किसी महात्मा-वात्मा के दर्शन नहीं करती। ये सारे के सारे पाखंडी और आवारा होते हैं।" उसने तड़ाक से कहा और उसने अपना मुँह घुमा लिया।

चिमन उसके पास बैठ गया और बोला, "बड़ी राणी सा! आप विश्वास करें कि वह महात्मा बहुत पहुँचा हुआ है। वह भूत, भविष्य और वर्तमान सबको बता सकता है। फिर ठकुराणी सा का हुक्म है।"

केसर ने कहा, "मैं किसी का हुक्म नहीं मानती। तुम जाकर कह देना कि मैं किसी साधू-वाधू को नहीं मानती।"

चिमन खड़ा रहा।

"तुम जाते क्यों नही?"

"मैं जा रहा हूँ पर मैं आपको कह देता हूँ कि साधू का आपको दर्शन करना ही होगा।"

केसर एकदम गम्भीर हो गई। वह अपनी दृष्टि उस पर गड़ाती हुई बोली, "क्यों? मुझे ऐसा क्यों करना होगा?

"बस करना होगा।"

"लेकिन क्यों?"

"क्योंकि वह साधू आपका शिव है।"

सितार के तार झनझना उठे हों, ऐसा लगा केसर को। कुछ देर तक वह ठगी-ठगी सी खड़ी रही। उससे न उठते बना और न बैठते। एकदम स्तब्ध।

चिमन ने धीरे से कहा, "शिव आया हुआ है। वह साधू के भेष मे है। ठकुराणी ने उसे बुलाया था लेकिन वह उसके यहाँ नहीं गया। वह केवल आप से मिलना चाहता है। वह रात को आपसे गाँव वाले मन्दिर में मिलेगा।"

"ठीक है।"

"मैं अभी उसे कह दूँगा।"

यह बड़े गौर से देखकर बोला, "क्या बात है ? मैंने आपको नहीं पहचाना, महात्मा जी !"

"लेकिन मैंने तुम्हें पहचान लिया। तुम चिमन हो। साधूपुर के ठिकाणे में नौकर। केसर कुंवर के पत्रों को छिपे....!"

चिमन हर्ष से भर उठा। बड़ी मुश्किल से बोला, "तुम, शिव तुम !"

दोनों दोस्त एक दूसरे के प्रगाढ़ आलिंगन में आबद्ध हो गये।

अश्रुपूरित नेत्रों से चिमन ने शिव की ओर देखा और बोला, "तुम क्या से क्या बन गये हो मेरे दोस्त !"

"चिमन ! तुम कैसे हो ? तुम्हारे बाल-बच्चों का क्या हालचाल है ?"

"सब ठीक है।"

"लेकिन तुम्हारे कहने मे उत्साह नही।"

चिमन गम्भीर हो गया। वह अपनी आँखों के आंसुओं को पोंछता हुआ बोला, "शिव ! गुलाम की कोई अपनी जिन्दगी नही होती। उसकी हर साँस गिरवी होती है। और उसका हर काम हुक्म की तामील के रूप में होता है। वह न अपने ढंग से सोच सकता है और न वह अपना कुछ स्वतन्त्र कर सकता है।...जीवन के चालीस वर्ष बीत गये हैं। हुक्म की तामील करते-करते मन मर गया है।"

शिव ने तुरन्त उसे आश्वासन दिया, "हम जल्दी ही आजाद होंगे।"

शिव ने उसे एक वृक्ष की छाया में बिठा दिया।

शान्त वातावरण।

शिव ने कहा, "मैं केसर से मिलना चाहता हूँ। मैं उससे चन्द घड़ी बातचीत करना चाहता हूँ।"

"लेकिन !"

"देखो चिमन, किसी भी तरह तुम मुझे उससे मिला दो।"

"तुम यही पर बैठो। रात को मुझसे यही पर मिल लेना।"

"मैं तुम्हें साधूपुर के पास जो टूटा मन्दिर है, वही पर मिलूँगा।"

चिमन वहाँ से चला गया।

महल में हलचल थी।

केसर अपने पृथक् महल मे बैठी प्रेमचन्द जी का उपन्यास पढ़ रही

थी। चिमन को देखकर वह उठी और ओर बोली, "क्या बात है ? ठकुराणी सा ने मुझे बुलाया है ?"

"हाँ।"

"क्यों ?"

चिमन के होठों पर हँसी नाच उठी, "एक बड़े महात्मा के दर्शन करने।"

"मैं किसी महात्मा-वात्मा के दर्शन नहीं करती। ये सारे के सारे पाखंडी और आवारा होते हैं।" उसने तड़ाक से कहा और उसने अपना मुँह घुमा लिया।

चिमन उसके पास बैठ गया और बोला, "बड़ी राणी सा ! आप विश्वास करें कि वह महात्मा बहुत पहुँचा हुआ है। वह भूत, भविष्य और वर्तमान सबको बता सकता है। फिर ठकुराणी सा का हुक्म है।"

केसर ने कहा, "मैं किसी का हुक्म नहीं मानती। तुम जाकर कह देना कि मैं किसी साधू-बाधू को नहीं मानती।"

चिमन खड़ा रहा।

"तुम जाते क्यों नहीं ?"

"मैं जा रहा हूँ पर मैं आपको कह देता हूँ कि साधू का आपको दर्शन करना ही होगा।"

केसर एकदम गम्भीर हो गई। वह अपनी दृष्टि उस पर गड़ाती हुई बोली, "क्यों ? मुझे ऐसा क्यों करना होगा ?

"बस करना होगा।"

"लेकिन क्यों ?"

"क्योंकि वह साधू आपका शिव है।"

सितार के तार झनझना उठे हों, ऐसा लगा केसर को। कुछ देर तक वह ठगी-ठगी सी खड़ी रही। उससे न उठते बना और न बैठते। एकदम स्तब्ध।

चिमन ने धीरे से कहा, "शिव आया हुआ है। वह साधू के भेष में है। ठकुराणी ने उसे बुलाया था लेकिन वह उसके यहाँ नहीं गया। वह केवल आप से मिलना चाहता है। वह रात को आपसे गाँव वाले मन्दिर में मिलेगा।"

"ठीक है।"

"मैं अभी उसे कह दूँगा।"

"हाँ-हाँ, चिमन····!"

"क्या है ?"

"लो यह हार !"

"नहीं बड़ी राणी सा, यह हार मैं नहीं लूँगी। मैं सिर्फ शिव से अपनी मित्रता निभा रहा हूँ। चाहता हूँ कि उससे मित्रता निभती रहे।"

× × ×

रात हो गई थी।

अनूपसिंह के डेरे से हल्का-हल्का शोरगुल आ रहा था। लगता था कि वह किसी नौकर को डाँट रहा है।

केसर चुपके से पिछले दरवाजे से निकली और पलक झपकते वह मन्दिर के समीप पहुँच गई।

चारों ओर सन्नाटा था।

शिव एक कोने में दुबका बैठा था।

केसर ने उसे पुकारा, "शिव !"

चाँदनी प्यार की वर्षा कर रही थी। उसके रुपहले प्रकाश मे केसर का सूखा हुआ चेहरा साफ दिखलाई पड़ रहा था। वह उसे देखता रहा। फिर वह उसकी बाँहों मे थी। वह रो रही थी, सिसक रही थी। जब रोते-रोते उसका मन हल्का हुआ तब वे दोनों बातचीत करने लगे।

शिव ने कहा, "तुम कितनी दुबली हो गई हो !"

"बस, अब मैं मर भी जाऊँ तो मुझे कोई गम नही होगा। तुमसे मिलने की साध पूरी हो गई। शिव, चलो मेरे महल में।"

"महल मे ?"

"डरते क्यों हो ? इन बड़े महलों मे बड़े से बड़ा पाप छिप सकता है, फिर एक आदमी क्यों नही छिप सकता ! चलो न, शिव, तुम्हें मेरी कसम !"

और शिव केसर के साथ महल की ओर चला।

× × ×

तीन दिन बीत गये।

शिव केसर के महल में था। दोनों जीवन को समस्त विषमताओं को विस्मृत करके प्यार के क्षणों की सर्जना कर रहे थे। केसर उसे बार-बार कहती

थी कि तुम मुझे ऐसी जगह ले चलो जहाँ हम दोनों सुख-शान्ति से रह सकें। जहाँ कोई भी हमें अलग न करे।"

शिव उसकी भावुकता को परे कर कहता, "केसर! संसार की दृष्टि से हम कहीं बच कर नहीं रह सकते।"

"फिर तुम यहीं पर रहो।"

"खूब!" शिव ने कहा, "वर्षों से जिस गुलामी से मुक्त हुआ हूँ, उसमें तुम मुझे वापस डालना चाहती हो?"

"मेरे पास रहने को तुम गुलामी कहते हो।"

"आनन्द के क्षण बहुत कम होते हैं। थोड़े दिनों के बाद ही उत्तेजित क्षणों की मौत हो जायगी और मैं इसे भी भयानक कैद समझने लगूंगा। केसर! मैं ऐसा नहीं कर सकता। मैं कल यहाँ से चला जाऊँगा।"

केसर का मुँह उतर गया।

तभी चिमन भागा-भागा आया। आकर बोला, "गजब हो गया है बड़ी राणी सा!"

"क्या गजब हो गया है?'

"ठकुराणी सा ने बन्दूक तान ली है। वह छोटी राणी जी की हत्या करने को तत्पर हो गई है।"

"बात क्या है?"

"आप खुद चलकर देख लीजिए।"

केसर ने ओढ़ना ओढ़ा। शिव को वापस आने तक इन्तजार करने की कसम दिला कर वह चली।

अनूपसिंह का कमरा।

अनूपसिंह कुर्सी के हत्थे से अपना सिर फोड़ रहा था।

ठकुराणी हाथ में बन्दूक लिये खड़ी थी।

केसर जैसे ही कमरे में घुसी, वैसे ही ठकुराणी ने गरज कर कहा, "तुम बाहर ही रहना।"

"क्यों?" केसर ने पूछा।

"क्योंकि जिस खानदान की आन रियासत में सिरमौर बन कर रही है। उसी आन को इस कमीनी ने नागिन बन कर डस लिया है।"

"बात क्या हुई हुई ठकुराणी सा !"

"बात इन छिनाल से पूछो कि क्या है ?"

अनूपसिंह ने तड़प कर कहा, "इसे कुछ मत पूछो। इसे गोली से मार दो। इसे गोली से मार दो,"

केसर ने चतुराई का परिचय दिया। उसने बाहर निकल कर देखा। कोई नौकर-चाकर नही था।

तब केसर ने ठकुराणी के हाथ से बन्दूक ली और वह धीमे स्वर में बोली, "बात का बतंगड़ बने, उसके पहले ही उसे सम्भाल लिया जाय।" केसर उसी समय जीत कुंवर के पास गई। उसे वह स्नेह से दुलार कर बोली, "क्या बात है बहिन ?"

"बात कुछ भी नही है।" उसने नाक-भौं सिकोड़ते हुए कहा।

"बात कुछ नही है ?" अनूपसिंह ने भड़क कर खड़े होने की चेष्टा की, पर वह धड़ाम से जमीन पर गिर गया। ठकुराणी और केसर ने उसे सहारा देकर उठाया।

एक अरसे बाद केसर ने अनूपसिंह को देखा था। उसका पेट बहुत फूल गया था। गले के नीचे मांस छिटक गया था और आंखें सदा पीते रहने से डरावनी हो गई थीं।

अनूपसिंह ने घृणा से तड़प कर कहा, "इसे गोली मार दो, मैं कहता हूँ, मुझे बन्दूक दो, बन्दूक दो ! मैं इसे जिन्दा नहीं छोड़ूंगा।"

जीत कुंवर अपने चेहरे पर दृढ़ता लाये हुए पूर्ववत् खड़ी थी। उसके चेहरे पर किंचित् भय नही था। हालांकि उसके चेहरे पर कठोरता थी।

ठकुराणी ने आकर कहा, "यह सब भूल गई है—रक्त-गर्व और रक्त-गौरव। यह गोले के साथ रंगरेलियां मनाती पकड़ी गई। तुम बताओ न, यह कितने शर्म की बात है !"

केसर ने जीत की ओर प्रश्न भरी नजर से देखा और वह बोली, "यह क्या बात है ? इतना पतन ?"

"यह झूठ है। सफेद झूठ !"

अनूपसिंह एक बार फिर झल्ला पड़ा। वह अपने हाथों को जोर से हिलाकर बोला, "यह मुझे उल्लू बनाना चाहती है। यह सच का झूठ करना चाहती है।

छिनाल कहीं की । मैं ईश्वर की कसम खाकर कहता हूँ कि वह गोला मेरे सामने पलंग के नीचे से निकल कर भागा था। मैंने उसे पुकारा। उसे पकड़ने के लिए झपटा, पर मेरे पाँवों ने मुझे जवाब दे दिया। मैं तड़प कर रह गया। तब तक वह कम्बख्त यहाँ से भाग गया। मैं उसका चेहरा भी नहीं देख पाया। मेरे पलंग के नीचे मेरी बीवी का यार ? हूँ ! मैं सबको कच्चा चबा जाऊँगा।"

जीत ने उसी दृढ़ स्वर में कहा, "ये सपने की बात करते हैं। मैं सौगन्ध खाकर कहती हूँ कि यह झूठ है, झूठ !"

ठकुराणी का ध्यान अचानक एक कपड़े के बटुए की ओर गया। वह उसे उठाकर बोली, "यह बटुआ यहाँ कैसे आया ?"

"मैं क्या जानूँ ?"

"यह बटुआ किसका है ?

इस बार जीत भड़क कर बोली, "आप तो मुझसे इस तरह पूछ रही हैं जैसे मैं कोई परमात्मा होऊँ। वाहजी वाह, कोई भी चीज मिल गई तो उसके बारे में सब कुछ मैं बताऊँ ? कोई सपने को सत्य समझ ले तो मैं साबित करूँ कि इसे सपना था या नहीं। देखिए ठकुराणी सा, मैं ज्यादा बकबक करने की आदी नहीं हूँ, मुझे माफ करिए। चलिए बड़ी राणी सा, ठकुराणी सा का दिमाग सठिया गया है। उँह !" और जीत इस नाजुक स्थिति में लापरवाही से नाक-भौं सिकोड़ कर चलती बनी।

ठकुराणी ने उसे रोका।

अनूपसिंह चिल्लाया, "इसे बन्दूक से मार दो ! यह भागने न पाये !"

जीत ने कहा, "मुझसे टकराने की कोशिश न करो, मैं सबको ठीक कर दूँगी।"

उसका इतना कहना था कि ठकुराणी के हृदय में आग लग गई। उसने तुरन्त बन्दूक उठा ली। उसने ज्योंही बन्दूक उठाई त्योंही जीत ने भी दूसरी बन्दूक उठा ली।

बड़ी भयंकर स्थिति हो गई थी।

केसर को लगा कि चन्द घड़ी में यहाँ खून-खराबी होने वाली है। दोनों में से एक धराशायी होने वाली है। वह लपक कर जीत के पास पहुँची और

उसने उसे कमरे के बाहर किया और फिर बड़ी फुर्ती से कमरे को बन्द कर दिया।

ठकुराणी किवाड़ खटखटाती रही और जीत अपने कमरे में चली गई।

केसर ने जीत को अपने पास बुलाया। बड़ी देर तक वह उसे समझाती रही। बाद में उसने इसके सामने शिव का जिक्र किया। जीत ने किसी तरह की कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई। बस इतना ही कहा, "मैं क्या करूं? मैं तुम्हारी तरह कुछ भी सहने को तैयार नहीं हूं। मैं तुम्हारी तरह अपने आपका शोषण नहीं करा सकती। अपने आपको नहीं मार सकती।" कह कर वह सुबक पड़ी।

"फिर भी···"

"मैं किसी से नहीं डरती हूं। ठकुराणी मेरा क्या कर लेगी? इस ठिकाने पर मेरा भी बरावर का हक है।" वह रोती हुई चीखी!

थोड़ी देर बाद शान्त रहने के बाद केसर बोली, "तुम ठकुराणी को नहीं जानती हो! वह इतनी गई-गुजरी और पशु-वृत्ति की है कि समय पड़ने पर वह अपने विकृत अहम् की रक्षार्थ अपने बेटे का खून भी अपने हाथों कर सकती है। वह तुम्हे किसी के द्वारा मरवा देगी।···फिर स्वयं राजाजी भी उसके अधिकार मे हैं।"

"तुम उसकी चिन्ता न करो। मैं भी किसी से कम नहीं हूं। मैं ठकुराणी को ठीक कर दूंगी।···कल मैं राजधानी जा रही हूं। मैं इस बुढ़िया का दिमाग ठीक करके रहूंगी।"

जीत चली गई।

× × ×

शिव ने कहा, "मुझे यहां से चला जाना चाहिए। यहां काफी समय लग गया। इसके साथ यहां की स्थिति भी बदल रही है।"

"हां, शिव तुम्हारा यहां रहना खतरे से खाली नहीं है।"

"लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि गांव वाले, ठकुराणी और अन्य आदमी मुझे भूल गये हैं।"

"तुम्हें कौन भूल सकता है? शिव, तुम क्या हो, यह तो समय ही

बताएगा।"

शिव ने उसे एक बार फिर अपनी बाँहों में भरा और फिर रात के अँधेरे में केसर को बिलखती छोड़ कर चला गया।

रात के अँधेरे में केसर महल की छत पर बैठी हुई तारे गिन रही थी। धीरे-धीरे उसके अधरों से फूट पड़ा—

नाग जी रे
भूलु छूँ बैरी थारों नाँव रे
कोई सूरतड़ी भूल नहीं जावे हो नागजी।

× × ×

दूसरे दिन ही जीत ने अपने आपको अलग समझ लिया। उसने अपनी दासियों को कह दिया कि ये ठकुराणी का हुक्म न मानें और चन्द वसूली करने वाले नौकरो को हुक्म दे दिया कि किसानों की सारी वसूली उसके हाथ में रखें।

यह बात ठकुराणी के पास पहुँची।

वह सीधी जीत के पास आई। उसने जीत को सम्बोधित करके कहा, "अँधेरी कोठरी देखी है? जरा अपनी बहिन केसर को पूछ ले। वह गत बनाऊँगी कि दिन के तारे दिखने लगेंगे।"

जीत ने उपेक्षा से कहा, "भगवान ने दो हाथ मुझे भी दिये हैं।"

ठकुराणी नीचे गई और उसने जीत को पकड़ने के लिए हुक्म दिया। लेकिन जीत बन्दूक लेकर बाहर आ गई। पकड़ने वाले खड़े के खड़े रह गये।

केसर को चिमन बुलाकर लाया और उसने जैसे-तैसे बात को बनाया और उन दोनों को शान्त किया।

ठकुराणी ने उसी समय अपनी विश्वस्त दासियों व दासों को अपने निजी कमरे में इकट्ठा किया। उन्हें यह हिदायत दी कि आज रात को छोटी कुँवराणी का काम तमाम कर दिया जाय।

षड्यन्त्र बन गया!

उसकी खबर केसर को भी नहीं लगी।

उस रात अनूपसिंह पुनः किसी अन्य लड़की के साथ शराब पीकर पड़ गया। भोपालसिंह और शार्दुलसिंह भी इस षड्यन्त्र से नावाकिफ थे।

ठकुराणी ने अपने दासों को जीत के कमरे के चारों ओर खड़ा कर दिया सावधान। एकदम सावधान!

योजना यह बनाई गई थी कि जीत को गला घोंटकर मार दिया जाय गला घोंटने से दूसरे लोगों को यह शक भी नहीं रहेगा कि वह कैसे मरी है। उसका अन्त किसने किया?

स्वयं ठकुराणी अपने सबसे बलिष्ठ दास के साथ जीत के कमरे में घुसी। देखा सन्नाटा था।

ठकुराणी ने धीरे से कहा, "आज कोई नहीं है। मौका अच्छा है वर्ना यह खूँखार भेड़िनी बच ही जायगी।"

वे सब अँधेरे में बढ़े।

"अँधेरा भी खूब रहा आज। देखो कदमों की आहट नहीं होनी चाहिए।"

लेकिन जीत का सारे महल में कोई पता नहीं लगा। ठकुराणी ने एक-एक कमरा खोजा, पर उसे जीत नहीं मिली। तब वह केसर के पास आई। केसर ने कहा, "वह सन्ध्या के समय राजधानी की ओर अपनी पुरानी कार लेकर चली गई है।"

ठकुराणी ने उसी समय दूसरी कार ली और वह भी राजधानी की ओर चल पड़ी।

× × ×

३

हाथी महल में महाराजाधिराज श्री पद्मसिंह जी गये हुए थे। आज वहाँ वायसराय के भतीजे के दिल्ली आगमन पर नाच-गाने का प्रोग्राम था। नाच और गाने में सिवाय पद्मसिंह के दोस्तों के और कोई नहीं था।

जीत ने गढ़ से पता लगाया और फिर वह हाथी महल में आ गई। हाथी

महल में उसने जनानखाने में डेरा जमाया। दासी के हाथ उसने पद्मसिंह को खबर पहुँचाई।

पद्मसिंह अपने गोरे साहब को छोड़कर वहाँ आया। अप्रत्याशित आने का कारण पूछा, "आप यहाँ कैसे पधारी हैं?"

जीत ने पर्दे की ओट मे सारी स्थिति समझाई।

पद्मसिंह ने कहा, "आपने उनका विरोध करके अच्छा नहीं किया। आप उनकी शक्ति से परिचित नही हैं।"

"मैं हरएक की शक्ति से परिचित हूँ। राजाजी! आप उन्हें अपनी शक्ति से अधिक ताकतवर समझ सकते हैं, पर मैं किसी को आप से अधिक नहीं मानती। जिस महान् आदमी के एक सकेत पर सारा राज्य झुक जाता है, वह महान् आदमी एक साधारण औरत के हाथ की कठपुतली बने, यह मैं नहीं सह सकती।"

पद्मसिंह को गुस्सा आ गया। उसने डाँट कर कहा, "छोटी राणीजी, होश में बातें करिए।"

"मैं आपके पाँव पड़ती हूँ। आप मेरी मदद कीजिए।" कह कर जीत ने सारी मर्यादा तोड़ डाली। वह पर्दे के बाहर आ गई। उसने पद्मसिंह के पाँव पकड़ लिये।

अनूठा यौवन और अनुपम रूपरंग।

पद्मसिंह उसे देखता रहा—अनिमेष।

जीत ने कहा, मैं कसम खाकर कहती हूँ कि मुझ पर [illegible] अत्याचार हो रहे हैं। मेरे साथ कुत्ते-सा व्यवहार किया जा रहा है। [illegible] है, कि आपके वह भाई-सा आदमी [illegible] नहीं है। फिर ठकुराणी सा का जुल्म! आप नहीं जानते कि [illegible] हैं! अपनी बात रखना चाहती हूँ।"

"लेकिन मैं क्या कर सकता हूँ?"

"आप सब-कुछ कर सकते हैं। [illegible] दे दें कि आप मेरा [illegible] सूँगी। मैं सब कुछ [illegible]"

पद्मसिंह के [illegible]

प्यासी नजरों से देखा और बाद में अपने आपको सावधान करता हुआ बोला, "ठीक है, मैं सब ठीक कर दूंगा। आप रात भर यही पर ठहरिए।"

जीत ने अपने आपको अहम् से देखा।

रात ढल रही थी।

जीत जालीदार झरोखे में बैठी हुई पातुर का नाच देख रही थी। गोरा आदमी झूम रहा था और कभी-कभी वह अंग्रेजी में कुछ बक उठता था।

पातुर गा रही थी—

म्हें कईयां जगावूं....काची नींदां में सूतो सायबो

नणदल कर्‌यो रसोवड़ो स रे पुरस्यो सोवन थाल

भावज ! भेज्यो म्हारा वीर नै भोजन की वेलयां जाय एजी म्हें.......[1]

वह गा रही थी। उसकी कमर में सौ-सौ बल पड़ रहे थे। दारू खूब उड़ रही थी। अन्त मे सभी लोग थक गये।

गोरा अफसर पातुर को लेकर रंगमहल में चला गया।

अब पर्मसिंह अकेला रह गया। हालांकि जनानी ड्योढ़ी से एक अत्यन्त सुन्दर रूपमती लड़की साथ आई थी, लेकिन आज पर्मसिंह के मानस में एक ही स्त्री का रूप नाच रहा था, वह था—जीत का।

लेकिन ?

वह विचारता रहा। वासना का भीषण संघर्ष उसके मन में होता रहा। वह कभी शय्या कर करवट बदलता और कभी वह कमरे मे चहलकदमी करता था।

अन्त मे चोर की तरह जीत के कमरे की ओर बढ़ा। घुमावदार रास्तों को पार करके उसने जीत का द्वार खटखटाया। जीत ने किवाड़ खोले। उसने खूब शराब पी रखी थी। सिगरेटों का धुआं कमरे में बादलों की तरह छाया हुआ था।

---

१. मैं अपने पति को कच्ची नीद मैं कैसे जगा दूं ? ननद ने रसोई करके सोवन-थाल परोस दिया है। वह कह रही है कि हे भाभी, मेरे भाई को भेज दीजिए, भोजन का समय जा रहा है। पर मैं उसे कच्ची नीद में कैसे जगाऊं ?

—एक राजस्थानी लोक-गीत

जीत ने पूछा, "कौन है ?"

पद्मसिंह ने कहा, "मैं हूँ पद्मसिंह !"

जीत ने कहा, "आप यहाँ क्यों आये हैं ?"

"मैं····मैं···· ।" पद्मसिंह से कुछ भी नहीं कहा गया। वह लड़खड़ा कर रह गया। उसकी आँखों के आँगन मे वासना के नाग नाच रहे थे।

जीत ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोली, "पहले आप मुझे वचन दीजिए कि मै ठकुराणी का पक्ष नही लूँगा, कहिए !"

"मैं वचन देता हूँ।"

"सच ?"

"हाँ !"

जीत ने दियासलाई जलाई। सिगरेट पिया और राजाजी के चेहरे की ओर देखा। फिर उसने कमरे मे एकदम अन्धेरा कर दिया।

× × ×

जीत अपनी सास के दबदबे का पासा पलट कर वापस साघूपुर चली गई। ठकुराणी को इस बात का पता ही नही चला। इसका एक कारण और था कि ठकुराणी को गोरे अफसरों से बड़ा भय था। यही वजह थी कि वह रात भर राजधानी के महल मे ही बैठी रही और राजमाता के कान भरती रही।

सवेरे जैसे ही पद्मसिंह महल मे पहुँचा, वैसे ही दासी ने आकर कहा, "भाजी सा, आपको याद फरमा रही हैं।"

"कह देना मैं थोडी देर बाद उनसे भेंट करूँगा, अभी मुझे वायसराय साहब के भतीजे को रवाना करने जाना है।"

और ठकुराणी राजमाता को कह रही थी। (क्योंकि अब महारानी का पद पद्मसिंह की बहू को मिल गया था।) उसकी आँखों में आँसू थे। वह बोली, "उसने मेरी ओर आग उगलती आँखों से देखा और मुझे ओछे शब्द कहे।···· बाई सा ! आजतक मेरे सामने किसी का मुँह भी नहीं खुलता था, पर उसने मेरी सारी प्रतिष्ठा को धूल में मिला दिया।"

राजमाता उसे धीरज दे रही थी। उसके आँसुओं को अपने आश्वासनों

से पोंछ रही थी। उसे बार-बार कह रही थी, "मैं पद्मसिंह को कह कर सब ठीक करा दूंगी। तुम जरा भी चिन्ता न करो।"

लेकिन हुआ उसका उल्टा ही।

दोपहर को जब पद्मसिंह लौटा तो रावले में उसका बुलावा हुआ। वह वहां गया। माजी सा गाव-तकिये का सहारा लिये बैठी थी। उसने काले वस्त्र पहन रखे थे। उसके मुख की कान्ति फीकी पड़ गयी थी। राजमाता ने यह प्रण कर लिया था कि वह उम्र भर महल से बाहर नहीं निकलेगी।

पद्मसिंह ने राजमाता के चरण-स्पर्श किये।

राजमाता ने उसे आशीर्वाद दिया। बोली, "देखो बेटे, सूरज बाई सा आपकी मौसी हैं। आपको अपनी मौसी का विशेष ख्याल रखना चाहिए। मैं आपसे प्रार्थना करूंगी कि आप एक बार जाकर उनके महल के सभी नौकर-चाकरों को डांट दें तथा इनकी बहू सा को समझा दें।"

पद्मसिंह चुप रहा।

"देखिए बाई सा, राजाजी बोलते नहीं हैं। जरूर उसने इनके कानों को भर दिया होगा।" सूरज ने कहा।

"नहीं-नहीं, आपको भ्रम हो गया है मौसी सा, ऐसा कोई बात नहीं है।"

"लेकिन आप उसे अलग क्यों नहीं कर देते ?"

"देखिए, असली अधिकार उन्हीं का है, अब आप तो बैठी-बैठी पेन्शन लें।" राजाजी ने उपेक्षा से कहा।

ठकुराणी की भवें तन गईं। वह क्रूरता को अपने चेहरे पर नचाकर बोली, "राजाजी! आप मुझे उपदेश दे रहे हैं? मैं खम्मा मांगती हूं—गुस्ताखी के लिए, लेकिन आप यह अच्छी तरह जानते हैं कि आप आज जो कुछ भी हैं, वह मेरी बदौलत हैं।"

पद्मसिंह के भी तौर बदल गये। वह बोला, "आप यह क्यों भूल जाती हैं कि मैंने इसका बदला दे दिया है। आपके ठिकाने में कई बार विद्रोह फैला, किसानों के साथ अन्याय हुआ, दो-तीन आदमियों की आपके नौकरों ने हत्या की, लेकिन मैंने कुछ भी नहीं कहा। क्या यह बदला काफी नहीं ?"

ठकुराणी का मुंह उतर गया।

वह राजमाता के पांव पकड़ कर बोली, "आप इन्हें समझाइए। पता

नहीं, उसने सारे नौकर-चाकरों पर क्या जादू कर दिया ! यह मेरी इज्जत का सवाल है । मेरी आन का प्रश्न है ।"

पद्मसिंह बुत की तरह बैठा रहा ।

राजमाता ने कहा, "इनका हमारे पर बहुत बड़ा अहसान है बेटा ! आपकी मौसी ने अपने जीवन को खतरे में डालकर हमारे साथ बड़े-बड़े नाजुक खेल खेले हैं । इनकी बात हमें रखनी ही पड़ेगी ।"

पद्मसिंह गम्भीर हो गया ।

रावले में कोई नहीं था । एक दासी थी, उसे भी वहाँ से हटा दिया गया ।

पद्मसिंह बड़े धर्म-संकट में पड़ गया । वह क्या करे और क्या न करे ! सोचता रहा, विचारता रहा । अन्त में उसने ठकुराणी को कहा, "आप इस मामले को आपस में ही निपटा लें ।"

"कैसे ?"

"जैसे भी हो ।"

"तुम तो बीच में नहीं बोलोगे ?"

"नहीं ।"

"वचन देते हो ?"

"हाँ !"

ठकुराणी उठ खड़ी हुई । उसने राजमाता के चरण छूकर कहा, "मैं उसको देख लूँगी ।"

पद्मसिंह को अब ख्याल आया कि ठकुराणी अपनी जान पर खेल जायगी । उसने चुपके से कार भेजकर जीतकुँवर को बुलाया ।

केसर अपने महल में परित्यक्ता-सी बैठी बड़े महल की हलचल देख रही थी । जीत घर से निकली । राजाजी की कार थी । ठकुराणी जल कर राख हो गई । उसने तुरन्त एक आदमी को अपने पीहर के ठिकाने को दौड़ाया । वह बहुत अवश थी ।

जीत चार दिन के बाद लौटी ।

उसके लौटते ही ठकुराणी के पीहरवालों ने मिलकर जीत को पकड़ लिया और एक कमरे में बन्द कर दिया ।

ठकुराणी ने सारे नौकरों को बुलाया। उन्हें कड़ाई से कह दिया कि "किसी ने इस रहस्य को जरा भी बाहर कर दिया तो मैं उसे जिन्दा जला दूँगी। जमीन मे गड़वा दूँगी।"

इसके बाद ठकुराणी जीत के पास गई।

उसके हाथ में तार का हण्टर था।

बन्द कमरा—बन्दी-गृह सा।

ठकुराणी ने हण्टर लेकर जीत के आगे दम्भ से फटकारा। जीत क्रोध मे छटपटाती रही। तड़पती रही। लेकिन क्या करती?

ठकुराणी ने अपने पीहर के तीन कारिन्दों को वहां खड़ा कर दिया। उसको पूरा यकीन था कि उसके साथ वे छल नहीं कर सकते।

जीत को सिगरेट पीने की आदत—वह क्या करे?

वह बेचारी बार-बार उन आदमियों से सिगरेट देने के लिए कहती, पर वे नही देते। एक बार उनमें से एक आदमी का दिल बेचैन जीत को देखकर तड़प गया और ठकुराणी से जाकर कहा, "आप हुक्म दें तो मैं उन्हें एक सिगरेट देदूँ।"

"नही!"

वह बेचारा आकर बैठ गया।

थोड़ी देर बाद ठकुराणी खुद वहाँ गई।

जीत दीवार की ओर मुख किये हुए बैठी थी। ठकुराणी का क्रूर अट्टहास सुनकर उसने गर्दन ऊँची की और ठकुराणी को देखते ही उसके तौर बदल गये। ठकुराणी ने पूछा—

"तुम्हें सिगरेट चाहिए?"

"नही!" उसने कठोरता से उत्तर दिया।

"रस्सी जल गई, पर उसके बल नही गये।"

जीत ने कुछ नही कहा। वह बैठ गई।

ठकुराणी ने कहा, "इसी कोठरी मे सड़ा-सड़ा कर मारूँगी।"

जीत ने कहा, "मरने से मैं नहीं डरती।"

ठकुराणी चली गई।

केसर को चिमन ने सारी बातें कही। वह सीधी ठकुराणी के पास गई।

ठकुराणी शराब पी रही थी। जब कभी वह मन ही मन अशान्त होती थी, तब वह वक्त-बेवक्त शराब पीने लग जाती थी। आज भी यही बात थी।

वह शराब पी रही थी। शराब के पास पका हुआ मांस पड़ा था। वह मांस के टुकड़ों को तोड़-तोड कर खा रही थी। इस समय उसका चेहरा इतना अमानवीय लग रहा था कि देखते ही केसर के शरीर मे कँपकँपी दौड़ गई। कितनी गहरी झुर्रियां !

उसने चरण-स्पर्श करके कहा, "ठकुराणी सा ! आप छोटी बहू सा पर ऐसा जुल्म न कीजिए। यह अच्छा नहीं रहेगा !"

"मुझे सीख देने आई हो। मैं अपना भला-बुरा खूब समझती हूँ।" ठकुराणी ने तप्त-स्वर में कहा।

केसर कुछ नही बोली। उसने देखा कि सारे महल में ठकुराणी के भाई, भतीजे और रिश्तेदार जमे हैं। कल उसके एक रिश्तेदार ने दो किसानों को पीट भी दिया। उसके एक छोटे भाई ने एक धोबी का पालतू कुत्ता मार दिया। जिधर देखो वे लोग अशान्ति मचा रहे थे।

केसर ने अनूपसिंह के पास इसकी सूचना भेजी। अनूपसिंह उस समय अपने मामा के लड़कों से घिरा हुआ था। शराब के दौर चल रहे थे। शिकार से लाये हिरनों का मांस पक रहा था।

अनूपसिंह ने उसकी फरियाद सुनी। उसे अपनी कुर्सी पर बिठाकर चार आदमी लाये।

एकान्त।

"कहो, क्या कहना चाहती हो ?"

"मैं यह पूछना चाहती हूँ कि दूसरों को घर में पनाह देने से क्या लाभ है ? वे आपका ही सिर और आपकी ही जूती कर रहे हैं।"

अनूपसिंह ने तुरन्त कहा, "मैं किसी तरह का उपदेश नही सुनना चाहता हूँ। मेरी मां सब समझती हैं। वह मेरा भला-बुरा खूब समझती हैं।"

केसर उसके चरणों में बैठ गई। उसे समझाती हुई वह बोली, "आप मेरे कहने पर ध्यान दीजिए। कही ऐसा न हो कि अन्नदाता अपने ठिकानों को ही हड़प लें।"

"तुम्हें क्या कष्ट हो रहा है ! ठिकाना मेरा और····?"

"मुझे कष्ट इस बात का हो रहा है कि आपसे छोटी राणी को कोठरी में बन्द कर दिया है।"

"उस कुलटा को ? अच्छा किया। मैं उसे दो-तीन दिन में जहर पीने को मजबूर करूँगा। अब मैं उसे जिन्दा थोडे ही रखूँगा !" और इसके बाद उसने कुछ भी सुनने से इन्कार कर दिया। उसने अपने नौकरों को आवाज दी और वह चला गया।

केसर का मन व्यथा से भर गया।

अँधियारा-सा उसके मानस पर छाता गया। उसे लगा कि जीत का जीवन फिर भी कुछ साभिप्राय है। वह कुछ नही है। बन्द पखेरू की तरह वह जिन्दा रहना चाहती है। यौवन के कितने ही बरसो को उसने यों ही बरबाद कर दिया। जीत मे विद्रोह है। वह प्रतिशोध भी लेना जानती है, पर उसमे कुछ भी नही है। वह कुछ भी नही कर सकती।

वह जीत के पास गई।

उसने उसे सिगरेट दी। जीत ने आँसू भर कर कहा, "मुझे यहाँ से निकालो। मुझे यहाँ से भगा ले चलो। फिर मैं एक-एक को देख लूँगी।"

यह खबर तुरन्त ठकुराणी के पास पहुँची। वह आई।

"बड़ी बहू ! तुम यहाँ क्यों आईं ?"

"ऐसे ही।"

"कोई बात नही। भविष्य में ऐसा नही होना चाहिए।"

"ठीक है।" कहकर वह चली गई।

चिमन बैठा-बैठा हुक्का पी रहा था।

केसर ने उसे सारी बातें समझाईं और कहा, "तुम जाकर सारी बातें राजाजी से कह आओ।"

"नही बड़ी राणी सा, मुझे ठकुराणी सा जिन्दा जला देगी।"

केसर कुछ देर सोचती रही। फिर खुद रथ पर सवार होकर चल पड़ी।

रात गहरी हो रही थी।

सवेरे ठकुराणी को मालूम हुआ कि केसर राजधानी चली गई है। फिर क्या था, उसने तुरन्त जीत को मरवाने का कार्यक्रम बना लिया। उसने मन

ही मन सोचा कि वह जीत को छोड़ देगी। जीत बाहर आयेगी और बाद में वह किसी बन्दूक से....!

लेकिन राजाजी खुद आ गये।

उन्होंने आने में इतनी जल्दी की कि ठकुराणी की योजना असफल हो गई। ठकुराणी के भाई-भतीजों को पद्मसिंह ने पकड़ लिया और ठकुराणी को एक महल में बन्द कर दिया और उसे हिदायत दे दी, "अगर मौसी सा आपने फिर कभी ऐसा नीच काम किया तो ठीक नहीं रहेगा। उसका परिणाम बहुत ही भयानक होगा।"

पद्मसिंह के कारण भयानक काण्ड होते-होते रुक गया। ठकुराणी के नाते-रिश्तेदारों पर कई हजार रुपया जुर्माना करके उन्हें छोड़ दिया गया। ठकुराणी को पद्मसिंह ने चार दिन कमरे में बन्द रखा और बाद मे उसे शान्ति से पड़े रहने की आज्ञा दे दी। जीत ठिकाने की सर्वेसर्वा हो गई।

× × ×

४

अभी-अभी सवेरा हुआ है।

केसर महल के जालीदार झरोखे में बैठी-बैठी सूर्य की किरणों का आनन्द ले रही थी। हवा ठण्डी थी।

उसके पास ही उसकी दासी खड़ी थी। वह उसे यह कहने आई थी कि पहले आप स्नान कर लीजिए, लेकिन अपनी मालकिन को विचार-मग्न देखकर उसकी हिम्मत नही हुई। समय गुजारने के लिए वह वहाँ खड़ी-खड़ी झरोखे की जालियाँ हो गिनने लगी।

केसर सोच रही थी। आज उसे भयानक स्वप्न आया था। ऐसा स्वप्न जैसे एक महल है। उस महल में एक राजकुमारी कैद है। वह राजकुमारी सुन्दर है, गोरी है और आकर्षक, साथ ही वह बड़ी कमजोर व लाचार है।

महल का राजा उससे जबरदस्ती विवाह करना चाहता है पर राजकुमारी उससे विवाह किसी भी सूरत मे नही करती। फिर क्या था? राजा ने उस राजकुमारी को कैद कर लिया।

दिन आये और गये।

केसर ने देखा कि राजा का प्रखर व्यक्तित्व शान्त हो गया है। उसके सारे बाल रुई की तरह सफेद हो गये हैं। इधर राजकुमारी भी बूढ़ी हो गई है। उसके भी बाल सफेद हो गये हैं। गालों पर झुर्रियों के निशान बन गये हैं और उसकी सूरत बेमानी हो गई है।

तभी गडगड़ाहट की आवाज के साथ कैद के फाटक खुलते हैं। राजकुमारी चौंकती है। देखती है, वही राजा फिर आया है!

राजा कहता है, 'तुम्हारे हठ ने तुम्हें तबाह कर डाला, लेकिन तुम अब भी मेरे साथ रह सकती हो!"

राजकुमारी घृणा से थूक कर बोली, "मुझे तुमसे घृणा है। मैं किसी की भी होना नही चाहती। मैं अकेली ही रहना चाहती हूँ। मैं मरना चाहती हूँ, मरना।"

सपना टूट गया।

और केसर सोचती रही कि इसी तरह का उसका भी अन्जाम होगा। वह अकेली यहाँ प्यार का दीपक संजोये पड़ी रहेगी। वह समय की प्रतीक्षा करेगी, पर समय प्रतीक्षा नहीं करेगा। तब शिव आयगा। ओह! उस समय इस जिस्म मे क्या रहेगा? हड्डियाँ और मांस। एक निर्जीव लोथड़ा-सा। न भावनाओं का जोश और न उत्तेजना की ज्वाला। एक शान्त और स्थिर ठहराव! थका-थका तन और बुझा-बुझा मन!

तब उसे रात भर नींद नही आई।

वह रात्रि की निस्तब्धता मे बैठी रही।

और अब भी वह यही सोच रही है कि क्या वह अर्थहीन पीड़ित-सुहाग का सिन्दूर लिये अपने शिव की प्रतीक्षा मे अपने यौवन के स्वर्णिम जगत को देखे, जीवन की महा-उपलब्धि प्रेम के अलौकिक क्षणों का उपभोग करे।

अप्रत्याशित उसकी दृष्टि अपनी दासी पर गई।

उसने पूछा, "क्या बात है?"

"आप स्नान कर लें।"

"ओह !" चौंक कर वह उठी। उठकर उसने अँगड़ाई ली और वह चल पड़ी। उदास-उदास !

स्नान से निवृत्त होकर वह दर्पण के सम्मुख खड़ी हो गई। अपने रूप-यौवन की उपेक्षा उससे नहीं देखी गई। वह यकायक सिसक पड़ी।

"उसका यह उज्ज्वल यौवन ऐसे ही मर जायगा ?"

जीतकुँवर ने आने की सूचना दी।

केसर तुरन्त तैयार हुई। अपनी आँखों के आँसुओं को पोंछा।

दोनों पास-पास बैठीं। जीतकुँवर सिगरेट जला कर बोली, "बड़ी राणी ! मैंने ठकुराणी सा को परास्त कर दिया है, पर कोई पता नहीं कि वह कब कोई भयानक कदम उठा ले। सावधान मैं रहती ही हूँ, पर इतना चाहती हूँ कि तुम भी सावधान रहो।"

"मुझे किसी का भय नहीं। मेरा जीवन एकदम निर्भय है। तुम मुझे…!"

जीत ने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया और कहा, "आप अपनी मर्जी से जो चाहें कर सकती हैं। आपका इस ठिकाने पर उतना ही हक है, जितना मेरा। आप मुझसे बड़ी हैं।"

मैं तुमसे उम्र में बड़ी जरूर हूँ, परन्तु हूँ छोटी। तुमने विद्रोह करके वह प्राप्त किया, जिसकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकती थी। मैंने पिछले सारे वर्ष सुलगती हुई लकड़ी की तरह बिताये हैं। मैं जुल्म सहती रही हूँ। मैं अपने आपको मारती रही हूँ।"

"अपनी-अपनी आदत होती है। लेकिन आपको चैन नहीं है। क्या आप किसी से प्रेम करती हैं ?"

"नहीं नहीं !"

"झूठ क्यों बोलती हैं ? आप अपने अपको धोखा दे सकती हैं पर मुझे नहीं, मैं सब जानती हूँ। यह गहरा मौन, एकान्त और यह सहिष्णुता की अपरिमित सीमा प्रेम का ही दान हो सकता है। और चिमन…?"

सन्नाटा।

"मैंने आपको, बड़ी राणी, आदरणीय माना है। जीवन में अधिकार करना और विद्रोह करना मेरा धर्म-सा बन गया है, चाहे वह विद्रोह सही हो या

गलत। मैंने कभी उसके परिणाम पर नहीं विचारा। हाँ, एक बात है कि मैं किसी से दब कर नहीं रह सकती। मैं अपना हनन नहीं कर सकती।"

"फिर ?"

"मुझे पता चला है कि आप 'शिव' नामक किसी दासी-पुत्र से प्यार करती हैं। वह भी आपको तन-मन से चाहता है। यह पता चला है कि स्वर्गीय महराजाधिराज ने उसे राज्य से निकाल दिया था, लेकिन मैं उसे वापस यहाँ बुलाऊँगी। उसे इसी गाँव में जमीन दूँगी और आपके दुःख दूर करूँगी।"

"लेकिन !"

"लेकिन-वेकिन मैं नहीं जानती।"

केसर ने उसे रोककर कहा, "नहीं छोटी राणी, नहीं ! मैं यह सब नहीं कर सकती ! मैं प्रेम में मिट पाऊँगी, पर यहाँ के लोगों की तेज और तिरस्कार भरी नजरों को नहीं सह पाऊँगी।"

जीत ने स्नेह पूरित स्वर में कहा, "यह देखो शिव का पत्र।"

पहाड़ टूट पड़ा है—ऐसा लगा केसर को। जीत को शिव का पत्र कहाँ मिल गया ? पत्र में क्रान्तिकारी आन्दोलन की बातों के अतिरिक्त कुछ पंक्तियाँ भावुकतापूर्ण भी थीं। उसमें शिव ने कई बातें प्रेम को लेकर बड़ी मार्मिक लिखी थीं। उसने यह भी लिखा था कि आजकल वह बड़ा व्यस्त है। विशेषतः वह देश के दीवानों के साथ ही रहता है। वह खूब अध्ययन करता है। उसने यह भी लिखा—आजादी के दीवानों के जीवन-चरित्रों से हृदय को दृढ़ता और विश्वास मिलता है।

जीत ने वह पत्र उसे दे दिया।

बोली, "शिव तुमसे हार्दिक प्यार करता है और तुम उसे अपना सब कुछ मानती हो। मंत्रों के पवित्र अनुष्ठान और सामाजिक रीति-रिवाजों के अनुसार तुम दोनों का विवाह भले ही न हुआ हो, पर यह सत्य है कि आत्मा के लोक में तुम दोनों के प्रेम-बन्धनों की ही गूँज है।....बड़ी राणी ! आत्मवंचक और आत्म-हनन दोनों ही पाप और पतन हैं। आदमी अपने आपको बेमतलब मारकर महान् अवश्य बन सकता है, पर उसकी उस महानता में सदा

खोखलापन बोलता है। यह खोखलापन आदमी को अवश्य दुष्परिणामों से टकराता है।"

"लेकिन छोटी राणी ! यह समाज, यह बन्धन यह खानदान और यह ठकुराणी ?"

"विद्रोह करोगी तो खोखली मान्यताएँ खण्ड-खण्ड हो जायेंगी। फिर नीति का यह कथन है कि यदि ऐच्छिक वस्तु सहज और स्वस्थ रूप से प्राप्त नहीं होती, तो उसे किसी भी तरह प्राप्त करो। बहिन ! जीवन बड़ी कठिनता से मिलता है। उसे व्यर्थ और निष्प्रयोजन मत खोओ। अगर हमारे माँ-बाप हमें एक अपंग और पौरुषहीन व्यक्ति को सौंप सकते हैं तो हम क्यों नहीं अपने अपने लिए दूसरे रास्ते अपना लें ! हम भी तो इन्सान हैं।"

केसर कुछ देर तक चुप रही। फिर बोली, "मेरा यहाँ दम घुट रहा है। मैं चाहती हूँ कि यहाँ से भाग जाऊँ, दूर बहुत दूर और इस घुटनदार महल का मुँह भी नहीं देखूँ !"

दासी ने आकर कहा, "छोटी राणी सा ! महाराजाधिराज पधारे हैं।"

"मैं जाती हूँ बड़ी राणी ! और सुनो, मैं तुम्हारी तीर्थयात्रा का शीघ्र ही प्रबन्ध करूँगी।"

जीत चली गई।

केसर शिव के बारे में सोचती रही।

× × ×

५

...

पद्मसिंह जीतकुँवर के महल में ठहरा।

आने का कारण था—अनूपसिंह की वर्षगांठ। ठकुराणी का प्रभुत्व प्रायः समाप्त-सा हो गया था। अब उसका स्थान जीतकुँवर ने ले लिया था। यह बात सर्वविदित न हो, पर चन्द आदमी यह अच्छी तरह जानते थे कि जीतकुँवर

का राजाजी के साथ अनुचित सम्बन्ध है। इस अनुचित सम्बन्ध के किसी के पास प्रमाण नहीं थे, फिर भी कुछ आदमी इस तरह बातें किया करते थे जैसे वे जो कुछ कह रहे हैं, आँखों देखी ही कह रहे हैं।

जीतकुँवर के पास अधिकार आने के बाद अनूपसिंह के प्रति उसका रवैया बदल गया। उसने ठकुराणी की तरह उसके जीवन को सुखी बनाने के लिए हर सम्भव प्रयास किया। अब वह उसके पास भी जाती थी। उसने अनूपसिंह को यह विश्वास दिलाया कि वह जो कुछ उसके बारे में सोचता है, गलत सोचता है। उस रात उसे जिस आदमी का भ्रम हुआ, वह भ्रम ही था।

लेकिन ठकुराणी ने अपने बेटे को जैसे ही जीतकुँवर की ओर झुकते देखा, वैसे ही वह पीडा से तिलमिला उठी। यह उसकी दूसरी पराजय थी। ऐसी पराजय जो उसे खुद कचोटने लगी। उसने अपने विश्वस्त आदमियों को इकट्ठा किया और वह विचारने लगी कि किस तरह वह उसके उत्सव में विघ्न डाले।

रात को ही शराब के दौर चलने लगे।

सारे महल मे दिये जल रहे थे।

अनूपसिंह की वर्षगाँठ थी। केसर भी बे-मन उसमे सम्मिलित हुई। ढोलनियों के नृत्य के साथ-साथ वाह-वाह हो रही थी।

तभी विस्फोट-सा हुआ।

लोगों ने देखा—पद्मसिंह के पास बोतल फट पड़ी है। तुरन्त आदमी इधर-उधर लपके, कोई भी नहीं मिला। ठकुराणी ने तुरन्त भीतर से दासी को भेजा कि मामला क्या है?

बोतल किसने फेंकी, कोई नही जान सका। लेकिन साथ ही फेंकने वाले के इरादे का पता लग गया। बोतल में तेजाब था। वह इसलिए फेंका गया था कि राजाजी का खात्मा हो जाय, पर निशाना ठीक नही लगा और वे बच गये।

महफिल में सन्नाटा और आतंक छा गया।

अनूपसिंह का मुँह पीला पड़ गया। वह समझ नहीं सका कि वह क्या करे? वह कुछ देर के बाद बोला''''मैं उसे बन्दूक से उड़ा दूँगा। अरे कोई

है ? उस नमकहराम को जो पकड़कर लायगा, उसे मैं सौ रुपये इनाम दूंगा ।"

पद्मसिंह का मुंह ऐसे हो गया था जैसे वह मरता-मरता बचा हो। विमूढावस्था के प्राणी की तरह उसके सारे अंग में जड़ता आ गई। वह कुछ नहीं बोला और सीधे उसने अपने दीवान को आज्ञा दी, "हमारी 'सवारी' इसी समय राजधानी को जायगी।"

जीतकुंवर ने उससे अकेले मे भेंट की। उसने उसे बहुत समझाया कि आप इस तरह मत जाइए, पर पद्मसिंह नहीं माना। जब जीतकुंवर ने अपनी आंखों में आंसू भर लिये तब वह बोला, "मैं आपका हर अनुरोध मान सकता हूं। मुझे आपके यहाँ रहने में प्रसन्नता ही होगी, लेकिन मेरा जीवन सबसे अधिक मूल्यवान है। यहाँ आप और ठकुराणी के कलह का मैं व्यर्थ ही शिकार हो जाऊंगा।"

जीतकुंवर ने पद्मसिंह के पांव पकड़ लिये। रुंधे कण्ठ से बोली, "राजाजी, आप रंग मे भंग मत कीजिए। यह नीच काम सिवाय ठकुराणी के कोई नहीं करा सकता। आप उसे पकड़कर नजरबन्द कर दीजिए।"

"ऐसे मैं···?"

"मैं आपको ठीक कहती हूं।" उसने पद्मसिंह की बात को बिना सुने ही कहा, "यह वह आन और दम्भ वाली औरत है, जो टूट जायगी, पर झुकेगी नहीं। यह कभी न कभी आपके प्राणों की घातक बन सकती है।"

पद्मसिंह कठोर हो गया। वह अपनी मुट्ठियाँ बांधकर तेज स्वर में बोला, "मैं भोला नहीं हूं। मैं सब समझता हूं।"

जीतकुंवर चुप हो गई।

थोड़ी देर के बाद ठकुराणी आई। वह ममता भरे स्वर में बोली, "मुझे यह पता नहीं था। मैं यह नहीं जानती थी कि आपके साथ यहाँ ऐसा खतरनाक खेल खेला जायगा। मैं सच कहती हूं कि इन दोनों बहुओं का कांग्रेस के साथ सम्बन्ध है। ये किसानों जैसे टुटपूंजिए आदमियों को अपने मुंह लगाती रहती हैं। देखिए न, इस बार इन बहुओं ने किसानों से बेगार न करवा कर उन्हें मेहनताना दिया यह नया तरीका इन हरामखोरों को बल नहीं देगा?"

पद्मसिंह चुप रहा।

"आप नहीं जानते ! इस तरह का कोलाहल हमारे लिए ही घातक सिद्ध होगा। रावजी ! आप मेरी बात मानें, हिजड़ों को राज्य न सौंपें। राज्य और शासन बिना कठोरता और दमन के नहीं चलता है। मैं आपको""।"

"मैं सब जानता हूँ।" कहकर पद्मसिंह चल गया।

जीतकुँवर रात के अँधेरे में मोटर की पिछली लाल बत्ती देखती रही।

केसर ने उसे धैर्य बँधाया।

जीतकुँवर ने कहा, "मैं इस बुढ़िया को जान से मार दूँगी।"

और ठकुराणी अपने शराब के नशे में उन्मत्त होकर अपनी खास दासी से बोली, "निशाना चूक गया वर्ना विरोध करने वाले को मैं समाप्त करा देती।"

रात ढल रही थी।

× × ×

ठकुराणी और जीतकुँवर की कलह ने केसर को और परेशान कर दिया। ठकुराणी अपने आदमियों को भेजकर पहले ही गाँव की वसूली करा लेती थी और जब जीतकुँवर पूछती तो कहती कि मैंने वे रुपये फलां जगह खर्च कर दिये।

अनेक बहुएं और ला सकती हूं, पर तुमने एक पराई के कहने पर अपनी मां का साथ छोड़ दिया, यह डूब मरने के बराबर है। थू है तुम पर !"

बेचारा अनूपसिंह क्या करता ! वह अपना सा मुंह लेकर वापस आ गया।

× × ×

चैत्र का महीना लग गया था।

फागुन की मस्ती के पश्चात् चैत्र में गणगौर की तैयारियां होने लगती हैं। प्रायः ही चन्द सौभाग्यवती स्त्रियां और सुकुमारियां वस्त्राभूषणों में सज-धज कर सिरों पर कलश रखकर गौरी की पूजा करने के लिए बगीचों में जाती हैं। बगीचों में वे अपनी जलेरियां (नव अंकुरित दूबों और फूलों का गुलदस्ता) सजाकर गाती हैं—

चंदा थारे चानणे जी
पाणी गयी तलाव
हेडल कोडल को बेवड़ी जी
पाताल सी पणिहार
ओए म्हांरी चन्द्र गोरजा
ओए म्हांरी रूप गोरजा
थारो नैणों रो सुरमो सुवोणो।

आज केसर अपने शिव की याद में दुःखी होकर रात भर छत पर चहल कदमी करती रही। इधर उसकी भेंट शिव से बहुत दिनों से नहीं हुई थी। वह चाहती थी कि वह कुछ दिन के लिए उसके पास जाये और भविष्य में जीवन की कुछ निश्चित योजना बनाये। वह उससे प्रार्थना करेगी कि वह क्यों नहीं गांव आकर रहता। जीतकुंवर उसके निर्वासन की आज्ञा भंग करा सकता है।

दूसरे ही दिन केसर जीतकुंवर के पास गई।

उसने उसको कहा, "मैं कुछ दिन के लिए तीर्थ-यात्रा करने जाना चाहती हूं। आपने भी मुझे आश्वासन दिया था।"

जीतकुंवर उसके मन की बात समझ गई। वह बोली, "तुम जा सकती हो। मैं तुम्हें कहूंगी कि शिव से जरूर मिलना।"

केसर ने कोई जवाब नहीं दिया। वह चुपचाप वहाँ से चली आई और दूसरे ही दिन वह हरिद्वार जाने को तत्पर हुई।

वैशाखी में हरिद्वार का मेला होता ही है।

उसने राजधानी से दिल्ली पत्र डलवा दिया, "शिव तुम मुझे मिलो। मैं दिल्ली पहुँच रही हूँ।"

× × ×

६

दिल्ली की थोड़ी-सी आबादी की एक पुरानी बस्ती।

शिव वहाँ रहता था।

गन्दा मोहल्ला और गन्दा वातावरण।

वहाँ छोटा सा स्कूल था। उसमे चन्द लड़के पढ़ते थे। उसी स्कूल के ऊपरी भाग में शिव रहता था।

महाराजा के निजी 'हाउस' में केसर ठहरी थी। स्टेशन पर उसने उसका बहुत इन्तजार किया, पर शिव नहीं आया। उसका मन धक् से रह गया। कहीं वह गोरों के क्रोध का शिकार तो नहीं बन गया! वह यह जानती थी कि शिव आजादी का सिपाही है। उसका मालिक भी राष्ट्रीय विचारों का है। उसके हृदय में हलचल मच गई। वह अवश हो उठी।

उसने चिमन को बुलाया।

दोपहर का समय था।

चिमन ने गर्दन झुका कर कहा, "हुक्म सा ?"

"तुम चुपचाप इस पते पर जाओ और शिव को तुरन्त बुला कर लाओ।"

केसर वह आज्ञा देते समय यह भूल गई थी कि जहाँ वह ठहरी हुई है, वह महाराजा का निवास-स्थान है।

चिमन धीमे स्वर में बोला, "मैं माफी चाहता हूँ। शिव का यहाँ आना खतरे से खाली नहीं है।"

"क्यों ?"

"शिव को महाराजा ने देश-निकाला दे रखा है और अगर किसी ने यह बात वहाँ पहुँचा दी तो ठीक नहीं रहेगा। बदनामी के साथ खतरा भी हो सकता है।"

चिमन का कहना ठीक था। इसलिए केसर विचारों में खो गई। गुजरता हुआ एक क्षण भी अब उसे शिव के बिना एक युग-सा लगता था। वह हर पल उसे देखने के लिए बेताब हो जाती थी।

वह शिव से कैसे मिले ?

अन्त में उसके चेहरे पर मुसकान खेल गई। लगा, जैसे उसने एक बहुत ही अच्छी बात सोच ली है।

"हाँ, यही ठीक रहेगा !" उसने अपने आप मन ही मन कहा, "इसमें मजा भी बड़ा रहेगा। शिव जब उसे अपने सामने यकायक पायगा तो हक्का-बक्का रह जायगा। बार-बार अपनी आँखों को मलकर वह यह सोचेगा कि वह कोई सपना तो नहीं देख रहा है ?""और दूसरे ही क्षण उसे ख्याल आयगा कि वह सपना नहीं देख रहा है, उसके सामने सचमुच केसर खड़ी है। उसके जीवन की सर्वस्व और उसकी कल्पना की प्रेरणा !

मधुर कल्पना के कारण उसकी पलकें भीग गईं और उसका चेहरा प्यार से दीप्त हो उठा।

वह उठी और उसने कुछ क्षण के बाद चिमन से कहा, मैं बाहर जाती हूँ। तुम मेरे साथ चलो।"

"लेकिन गाड़ी""।"

"नहीं-नहीं, हम दोनों साथ ही चलेंगे। हमारे साथ कोई नहीं जायगा।"

तब वे दोनों चले।

दिल्ली की वही गन्दी बस्ती।

सन्नाटा।

पूछताछ के बाद मालूम हुआ कि आज स्कूल की छुट्टी है और मास्टर जी ऊपर सोये हुए हैं।

"छोटे मास्टरजी कहां हैं ?"

"छोटा-बड़ा एक ही मास्टर है।" उस लड़के ने जो स्कूल के फाटक के पास खड़ा था अपनी आँखें मिचमिचा कर कहा।

केसर कुछ देर तक वहीं खडी रही। चिमन उसे विस्मित दृष्टि से देख रहा था। उसकी आंखों मे भय था और वह हर क्षण मन ही मन शंका प्रकट कर रहा था कि कुछ गजब होने वाला है। कहीं किसी ने हमें यहां देख लिया तो ठिकाने की बड़ी बदनामी होगी। मुझे तो वे लोग जिन्दा ही जला देंगे।

फाटक पर कुछ देर तक केसर निचले होठ पर अँगुली रखकर खड़ी रही। वह उस गन्दे मकान को देख रही थी। खुला, पर बहुत ही जीर्ण घर। घर के बीचोंबीच पीपल का पेड़। दीवारों का चूना उतर गया था, जिसके कारण ईंटें साफ नजर आ रही थी। पानी की मोरी के पास गन्दगी थी। उसकी बदबू के कारण वह नाक-भौं सिकोड़ उठी और उसके मुँह से अनायास ही निकल गया, "कितना गन्दा है!"

तभी एक बालक सीढ़ियों से नीचे उतरा। बालक नगा था—बिलकुल नंगा। लेकिन उसकी दृष्टि ज्योंही अनजान केसर पर पड़ी, त्योंही वह वापस कुछ अस्पष्ट ध्वनि करता हुआ ऊपर की ओर भागा।

केसर के सारे शरीर में अजीब-सी सिहरन दौड़ गई। वह सीढ़ियों पर चढ़ने को तैयार हुई। तभी डाकिया आ गया था। उसने एक चिट्ठी केसर के हाथ में दे दी। केसर ने चिट्ठी को पढ़ा तो हैरान रह गई। यह चिट्ठी उसी की अपनी थी। बहुत खूब! चिट्ठी भेजने वाली पहले, और चिट्ठी बाद मे।

उसने मन ही मन सोचा, यह भी अच्छा ही हुआ, और भी मजा रहेगा! कहूँगी कि देखो तुम्हें चिट्ठी मिल चुकी थी, फिर भी नहीं आये। लेकिन.......

चिमन ने बीच में ही कहा, "राणी सा! जल्दी कीजिए, कहीं कुछ गड़बड़ न हो जाय।"

"नहीं चिमन, कोई नहीं जानेगा इस घटना को। तुम यहीं पर ठहरो। मैं अकेली ऊपर जाती हूँ।"

"अच्छा, पर जरा जल्दी आइएगा।"

"हाँ-हाँ, बस उसे इतना कहना है कि हम आज रात की गाड़ी से हरिद्वार चलेंगे।"

कहकर वह ऊपर की ओर चली ।

सीढ़ियाँ कम चौड़ी थीं । केसर अपना हर पाँव बड़ी सावधानी से रख रही थी । दीवारों पर लगातार हाथ लगने से मैली-सी लकीर खिंच गई थी । ऐसा लगता था कि उतरने वाला एक ही ढंग से उतरता है ।

केसर ऊपर चढ़ती गई ।

उसके पाँवों की आहट के साथ एक युवती ने झाँका । वह युवती जो नितान्त अपरिचित थी, सीढ़ियों के पास वाले दरवाजे पर आकर खड़ी हो गई । केसर को उस युवती ने जरा भी आकर्षित नहीं किया । लड़की काली थी और उसकी शक्ल-सूरत बड़ी साधारण थी । सौन्दर्य उसके कुछ अंगों को स्पर्श कर पाया था ।

केसर ने उसे प्रश्न भरी दृष्टि देखा और पूछा, "मास्टर शिव क्या यहीं पर रहते हैं ?"

"हाँ !"

"उन्हें कहिए कि आप से केसर मिलने आई है ।"

"कहती हूँ ।" कहकर वह युवती भीतर चली गई । केसर उसकी पीठ को स्तब्ध-सी देखती रही ।

"यह कौन हो सकती है ?"

बस एक ही प्रश्न उसके मस्तिष्क में बार-बार छाता गया ।

तभी वह बालक फिर आया । वह भोला-भाला बालक उसे देखने लगा—अपनी पवित्र दृष्टि से । देखते-देखते उसके होंठों पर मुस्कान नाच उठी । केसर ने उसके गाल पर हल्की-सी चपत जमा दी । बालक वापस भाग गया ।

शिव अभी तक बाहर नहीं आया था ।

केसर दरवाजे के भीतर चली गई ।

उसकी कल्पना और रोमांस मर-सा गया । उसने देखा—वह युवती शिव को हाथ पकड़ कर उठा रही है ।

शिव उठा ।

"क्या है ?"

"देखो—आपसे कौन मिलने आई हैं !"

"मुझसे ?" चौंक पड़ा शिव और हड़बड़ा कर उठ बैठा।

देखा—केसर है ! गम्भीर और मौन केसर !

"तुम ?"

"हाँ, मैं ! क्यो कोई आश्चर्य हो रहा है ?"

"नही तो ! आओ-आओ बैठो, इन्दिरा, दरी ला तो।"

अपरिचित युवती ने दरी बिछा दी।

"बैठो केसर ! यह बिना चिट्ठी तुम्हारा आना कैसे हुआ ? मुझे पत्र दे देती।" वह अपने अन्तस् के भावों को रोककर साधारण भाव से बोला।

केसर ने वह पत्र शिव के हाथ में सौंप दिया।

युवती वापस उसके पास आ गई थी। वह केसर को तीखी नजर से देख रही थी। केसर को यह समझते देर ही नही लगी कि उसका आगमन इस युवती को प्रियकर नही लग रहा है।

तब उसने पूछा, "आप कौन हैं ?"

"यह, यह मेरी धर्म-पत्नी !" शिव ने पेड़ के हिलते पत्तों की ओर देखकर कहा, "यह मेरी बहू है केसर, क्या करूँ, कुछ परिस्थिति ही ऐसी थी कि मैं तुम्हे पत्र नही डाल सका।"

केसर उठ खड़ी हुई।

इन्दिरा ने आकर कहा, "ठहरिए न, आप इनके गाँव की हैं। इसलिए मैं आपकी भावज (भाभी) हुई। मैं अपनी ननद को बिना खाना खिलाये नहीं जाने दूंगी।"

कानों में गर्म सीसा पिघल कर बह गया हो और उसने तमाम शरीर में पीड़ा पैदा कर दी हो, ऐसा महसूस हुआ केसर को। वह उठी और चलने को तैयार हुई। इन्दिरा को आश्चर्य सा हुआ।

"मुझे माफ करना बहिन, अभी मैं जल्दी मे हूँ।"

वह उठी ! शिव उसके पीछे-पीछे चला।

एक बार फिर पुकारा, "सुनो तो केसर, देखो, इस तरह मुझे दुःखी करके मत जाओ। मैं तुम्हे कहता हूँ कि....!"

केसर एक पल के लिए रुकी। वह शिव के टूटे-फूटे घर से बाहर आ चुकी थी। उसने घृणा भरी नजर से उसकी ओर देखा।

शिव करुण स्वर मे बोला, "केसर, तुम समझती क्यों नहीं कि किसी बड़े कारणवश ऐसी दुर्घटना अप्रत्याशित व अनायास घटी है। मैं इससे थोड़ा भी सन्तुष्ट नही हूँ, लेकिन क्या करूँ ? एक कर्तव्य, एक वचन की बदौलत मुझे यह सब करना पड़ा।"

"मैं सफाई नहीं चाहती।" उसने कठोर स्वर में कहा।

"लेकिन तुम यह मत समझना कि मैंने तुम्हें धोखा दिया है।"

"इतना ही समझती हूँ—आज अगर तुम्हारी तरह मैं करती तो तुम मुझे बेवफा, छिनाल और कुलटा न जाने क्या-क्या कहते ! खैर, तुम सुखी रहो। जीवन मे अनेकों कष्ट झेल चुकी हूँ। उन कष्टो ने मुझे तोड़ा नही, पर शिव मैं इस आघात को नही सह सकूँगी ! यह मुझे तोड़ देगा !" कह कर वह रो पड़ी और घोड़ा-गाड़ी मे बैठ गई।

चिमन ने पूछा, "क्या बात है ?"

"तुम्हारे शिव ने विवाह कर लिया।"

"हूँ !" चिमन की आँखें फट गयी।

"पुरुष भेड़िया होता है, पुरुष ! न मालूम वह किस-किस तरह आदमी को खाता है, यह कोई नही जानता ! ओह ! यह पुरुष !"

वह निरन्तर रो रही थी !

× = ×

७

....

केसर का शरीर 'हाउस' पहुँचते-पहुँचते टूटने लगा था। वह आकर बिस्तरे पर पड़ गई। उसके सिर में हथौड़े से चलने लगे। चिमन केसर के मना करने पर भी डाक्टर को बुला लाया। उसने जाँच करके इतना ही कहा, "कोई विशेष बात नहीं है।" उसने दवा की गोलियाँ दीं।

लेकिन केसर का मन बहुत बीमार हो गया था। रह-रह कर उसे पुरानी

स्मृतियाँ याद आ रही थीं। शिव का प्यार और आलिंगन, प्रतिज्ञाएँ और वचन। ओह ! पुरुष सचमुच एक छल है। विश्वासघात है।

चिमन उसके दिल का दर्द जान गया। वह उसके पास आया, उसके पलंग के पास बैठ कर बोला "बड़ी राणी सा !"

"क्या है ?"

"आप के दु:ख को मैं जानता हूँ।"

"नही चिमन, मेरे दु:ख को मेरे सिवाय कोई नही जानता। इस मन का रहस्य अथाह है और इसकी पीड़ा भी अपार है। इसे दूसरा नही जान सकता।"

चिमन थोडी देर मौन रहा।

वह उठा और बाहर आया। आस-पास के बंगलों में नन्हे-मुन्ने बच्चे खेल रहे थे। वह उन्हें व्यर्थ ही देखता रहा। फिर आया और बोला, "बड़ी राणी सा, मैं थोड़ी देर के लिए बाहर जा रहा हूँ।"

"कहाँ ?"

"बस, मैं अभी आया।"

केसर ने उसकी ओर तेज़ निगाह से देखा और वह बोली, "तुम कहाँ जा रहे हो, यह मैं जानती हूँ। लेकिन आना जल्दी।"

"अभी आया।"

चिमन सीधा शिव के घर आया।

शिव उस बच्चे को कुछ खिला रहा था।

चिमन को देखते ही उसकी आँखें चमक उठी। वह तुरन्त बोला, "आओ, चिमन आओ ! मैंने समझा था कि तुम लोग मेरी सफाई सुने बिना ही चले जाओगे।"

शिव ने इन्दिरा को पुकारा। इन्दिरा से चिमन का परिचय कराया। परिचय के उपरान्त कुछ खिलाने के लिए कहा।

चिमन ने तुरन्त कहा, "मैं अभी-अभी खाकर आया हूँ।"

"बस रहने दो ! इन्दिरा जल्दी से कुछ बना ला !"

चिमन और शिव बैठ गये।

गहरा मौन।

एकाएक चिमन ने पूछा, "यह तुमने अच्छा नहीं किया शिव, बड़ी रानी सा पागल हो जायेंगी। वह यह सब नहीं सह सकतीं।"

"चिमन ! तुम निश्चिन्त होकर सुनो। तुम्हें मालूम हो जायगा कि मैंने यह सब क्यों किया।"

चिमन ने उसे प्रश्न भरी नजर से देखा।

शिव दूर तक नजर दौड़ाता हुआ आहिस्ते-आहिस्ते बोला, "थोड़े दिन पहले की बात है।"

"फिर यह बच्चा ?"

"अरे मैं तुम्हें बताना ही भूल गया। यह तो मेरे पड़ोसी का लड़का है। इन्दिरा से बड़ा हिल-मिल गया है न ! इसलिए यह प्रायः हमारे पास ही रहता है।···देखो इन्दिरा, हम अभी वापस आते हैं।" वे दोनों बाहर आये।

चिमन ने उसे विस्मय से देखा।

थोड़ी दूर पर खुले मैदान में एक वृक्ष के नीचे बैठ कर शिव बोला, "कुछ दिन पहले की बात है। मैं, जैसा तुम जानते हो, सदा प्रगतिशील विचारधारा का रहा हूँ। जीवन के कटु और तीक्ष्ण अनुभवों ने मुझे थोड़ा-सा जल्दबाज बना दिया है। मुझमें भावुकता पहले से ही अधिक है।

जब मैं दिल्ली आया। तब मैं निराश्रय था। आत्मारामजी ने एक पत्र मुझे अपने मित्र रेवाप्रसाद के नाम लिख कर दिया था। रेवाप्रसाद खन्ना था। सन् १८५७ के बाद अंग्रेजो ने जिन पंजाबियों को दिल्ली में लाकर बसाया था, उनमें लाला के पूर्वज भी थे। मैं वह पत्र लेकर लाला के पास आया। लाला खुद राष्ट्रीय विचारो के थे। वे भी चाहते थे कि उनके देश से अँग्रेज चले जाएँ। वे मुझसे मिल कर बड़े प्रसन्न हुए और इन्होंने मुझे अपने यहाँ रहने की जगह दे दी।

पूरा मकान था।

ऊपर के कमरे में लाला, उसकी बीवी, लाला की इकलौती बेटी इन्दिरा रहती थी। नीचे के एक कमरे में मैं अकेला रहता था। लाला रात-दिन मेरी देख-रेख रखता था और मुझे कहता था, "तुम मेरे बच्चे हो, मैं तुम्हें किसी तरह की तकलीफ न होने दूँगा।"

मैं लाला का स्नेह पाकर गद्-गद् हो गया।

इन्दिरा सुबह-शाम पढ़ने जाती थी। वह कालेज में पढ़ती थी। इन्दिरा से ही थोड़ी फैशनेबुल थी। वह कालेज के सभी सांस्कृतिक आयोजनों मे लेती थी।

वह मुझसे घण्टों बैठकर राष्ट्रीय आन्दोलन और नेताओं के बारे में करती थी। वह मुझसे बहुत घुल-मिल गई थी।

एक दिन वह आई। दोपहर का समय था। लालाजी अपनी दूकान हुए थे।

मैं बैठा-बैठा पढ़ रहा था।

"शिव!"

मैंने नजर उठाई।

"शिव मेरे साथ जरा चलो।"

"पर कहाँ?"

"चलो न एक जरूरी काम है।"

उसका आग्रह मैं नही टाल सका। मैं उसके साथ चल पड़ा। वह मु सिनेमा ले गई, वह भी अँग्रेजी। मैं सिनेमा-गृह के पास पहुँचा, तब उस बोला, "इन्दिरा एक बात कहूँ?"

"कहो।"

"मैं अँग्रेजी नही जानता, फिर यहाँ क्यों लाई?"

"मैं जानती हूँ।" उसने उत्तर दिया, "मैं तुम्हें समझाती रहूँगी। सिनेम बहुत अच्छा है। तुम देखते रहना। मजा आयगा।"

मैं उसका विरोध नहीं कर सका। सोच रहा था कि उसके बाप के मु पर बड़े अहसान हैं। अगर लालाजी मुझे आश्रय नही देते तो इस परदेश मे मेरा बहुत बुरा हाल होता। अनजान जगह और अनजान लोग।

इसलिए मैं चाह कर भी इन्दिरा का अधिक विरोध नही करता था। हम सिनेमा 'हाल' में बैठ गये। वह मेरे समीप बैठी थी। कभी-कभी वह मेरा स्पर्श कर लेती थी और कभी वह मुझे कुछ समझाती-समझाती मेरा पाँव दबा देती थी। मैं कुछ देर तक इस तरह की हरकतों को देखता रहा। अन्त में मैंने उसे इतना ही कहा, "आस-पास भी लोग बैठे हैं।"

उसका मुँह फूल गया। वह सिनेमा खत्म होने तक मुझसे नही बोली। जब हम दोनों बाहर आये, तब मैंने उससे पूछा, "क्या तुम मुझसे नाराज हो ?"

"नहीं तो।"

"फिर तुमने मुझसे बोलना बन्द क्यों कर दिया।"

"कोई किसी के खामखा नजदीक थोड़े आना चाहेगा।"

सच चिमन, मैं हतप्रभा रह गया। क्या इन्दिरा मुझसे प्यार करती है ? यह प्रश्न मेरे मस्तिष्क में धीरे-धीरे धुन्ध की तरह छाता गया। मैं सारे रास्ते उससे नही बोला। मैं बार-बार यह सोच रहा था कि इन्दिरा को क्या हो गया ? वह मुझे इतना क्यों चाहती है ? मेरा उसका कोई मेल नहीं।

क्या करूँ ?

घर में आकर निढाल-सा बिस्तरे पर पड़ गया।

शाम को इन्दिरा खाना लाई। वह बहुत उदास थी। आँखें रोते-रोते सूज गई थी।

"आज तुम उदास लगती हो ?" मैंने पूछा।

"नही तो !"

"फिर सदा की तरह तुम हँसी क्यों नही ?"

"तुम मुझसे बोलना नही चाहते। शिव, क्या मैं इतनी बुरी हूँ ? क्या मैं तुम्हे जरा भी पसन्द नही।"

ऐसी बात "नही," मैंने कहा, "लेकिन मैं गरीब हूँ। प्यार करना मुझे नहीं आता। फिर मेरा बन्धन किसी और से बँध चुका है।"

मेरे इस कथन पर वह चौंकी। उसी समय मेरे मन मे केसर की सौम्य मूर्ति नाच उठी। उसका भोला-भाला चेहरा, उदास-उदास-सी आँखें और आहें। चिमन, जीवन जहर बन गया है लेकिन मैं प्रण कर चुका था कि केसर को इस रहस्य का पता नहीं लगने दूँगा। मैं जानता हूँ, मुझे विश्वास है कि वह मुझे बहुत प्यार करती है। उसके हृदय में मेरे सिवाय कोई नहीं रह सकता। लेकिन कल सारा भेद खुल गया। चिमन, रात भर मैं सो नहीं सका। अन्धेरे में अतीत को टटोलता रहा, ढूँढता रहा, पर अतीत मुझसे कोसों दूर जा चुका था। मैं जानता हूँ केसर मुझे माफ नहीं करेगी। उसके हृदय को

मैं जानता हूँ—कसूरवार के लिए उसके हृदय में कहीं भी किसी तरह की क्षमा नहीं है।" कहते-कहते शिव ने आंसू बहा दिये।

चिमन उसे देखता रहा।

वह फिर बोला, "इन्दिरा मेरे पास आई। उसने मेरा हाथ अपने हाथ में लिया। बोली, "नहीं शिव, मैं तुम्हें नहीं छोड़ सकती"""हर रात तुम मेरे सपनों में आते हो, मैं तुम्हे हृदय से प्यार करती हूँ।" उसने मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर चूम लिया।" मैं हैरान ! यह सब क्या है, क्यों हो रहा है, किस कारण हो रहा है ?

धीरे-धीरे वह मेरे न चाहते हुए भी नजदीक आती रही।

एक बार वह आधी रात को कमरे में घुस आई।

चारों ओर सन्नाटा था।

झींगुर बोल रहे थे। दूर-दूर तक तारों भरा आकाश दिखलाई पड़ रहा था। शान्त ! एकदम शान्त !

मैं उसे देखकर विमूढ़-सा खड़ा रहा। कुछ देर तक मेरी समझ में नहीं आया कि मैं क्या करूँ।

"शिव !" उसने धीमे से कहा।

मैं बोलना चाहता था, पर बोला नहीं सका। मेरे शब्द कण्ठ में रुक गये। अजीब स्थिति थी। क्या करूँ ? अगर लालाजी ने इसे इस समय देख लिया तो मेरा बुरा हाल होगा ! मान-मर्यादा, मेरे जीवन का ध्येय सबके सब माटी में मिल जायेंगे।

मेरा शरीर पसीना-पसीना हो रहा था।

वह मेरे पास आई। बोली, "प्यार करना कोई गुनाह नहीं है। प्यार ईश्वर है। प्यार मनुष्य के हृदय का मधुर वरदान है।"

उसकी भावुकता ने मुझ पर कोई विशेष प्रभाव नहीं डाला।

मैंने उसे अन्धेरे में ही अपने पास खींचते हुए कहा, "अगर ईश्वर प्यार का रूप है, अगर प्यार मनुष्य के हृदय का मधुर वरदान है तो उसे शरीर की बदबू से दूर रखो। ऐसा प्यार हृदय में बसता है।"

इन्दिरा उसी समय चली गई।

मैं समझ गया कि वह मुझसे नाराज होकर यहाँ से गई है। लेकिन मैं

उसे राजी भी कैसे कर सकता था ऐसी विकट परिस्थिति में। दूसरे दिन माताजी ने उदास स्वर में कहा, "आज उसकी तबीयत खराब है। कह रही है कि सिर में दर्द है।"

"सिर में दर्द है!" मैंने विस्मय से कहा, "कहीं जुकाम तो नहीं हो गया है?"

"पता नहीं। मैंने जब पूछा तो बोली—मैं ठीक हूँ, पर वह ठीक नहीं है। जब वह किसी से नाराज होती है, तब वह इसी तरह रूठ जाती है। न किसी से बोलती है और न हँसती है। न खाना खाती है और न घर से बाहर निकलती है। बस, पड़ी रहती है।"

मैं कुछ नहीं बोला। चुपचाप चाय पीने लगा। माताजी कुछ देर तक खड़ी रही, फिर वह जाती हुई बोली, "तुम जाओ, शायद वह मान जाय।"

माताजी चली गईं। उनकी मुद्रा से लगता था कि वह अपनी बेटी का दुःख नहीं सह सकती हैं।

मैं चाय से जैसे ही निवृत्त हुआ, वैसे ही इन्दिरा के पास गया। इन्दिरा तकिये में मुँह छुपाये लेटी थी।

मैंने समीप जाकर पुकारा, "इन्दिरा, इन्दिरा!"

इन्दिरा ने मुझे कोई जवाब नहीं दिया।

मैं कुछ देर तक खड़ा रहा। अन्त में मैंने उसके सिर को अपनी ओर घुमा कर जोर से पुकारा, "इन्दिरा, !"

इन्दिरा ने आँखें खोल कर कहा, "मर गई इन्दिरा!"

मैंने उसे स्नेह से कहा, "ऐसा क्यों कहती है? इन्दिरा क्यों मर गई? मरें उसके बैरी। इन्दिरा जीएगी हजार वर्ष।" मैंने तनिक उपहास मिश्रित स्वर में कहा। कदाचित् मेरे उपहास भरे स्वर से वह राजी हो जाय।

वह नटखट बालिका की तरह बोली, "मैं एक पल भी जिन्दा नहीं रहना चाहती। मैं मरना चाहती हूँ।"

मैंने उसके हल्की चपत लगाते हुए कहा, "यह कैसा पागलपन है, उठो, अब तुम बच्ची नहीं हो। अब तुम बड़ी हो गई हो। जरा समझदारी रखा करो। यह सब बचपना है। कहाँ मैं और कहाँ तुम!"

उसने मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया। उसे दुलराते हुए वह बोली,

"जब तक तुम मुझे प्यार नहीं करोगे, तब तक मैं यहीं पर पड़ी रहूँगी। तुम-मैं, ऊँच-नीच, गरीब-अमीर, अनपढ़-शिक्षित...... ...वह सब प्यार के जोश में नहीं चलता।"

मैं कुछ नही बोला। चुपचाप वहाँ से चला आया।

वह मुझे ठगी-ठगी-सी देखती रही। धीरे से बोली, "पत्थर दिल !" कितनी बचकानी हरकत ! एकदम अपरिपक्व।

मैं पत्थर का हो गया। मैं केसर को छोड़कर किसी को भी प्यार नही कर सकता था। मेरे लिए यह असम्भव था और है। प्यार मैं अब भी चिमन, केसर से ही करता हूँ। मेरी आत्मा के हर कोने में उसकी ही मूर्तियाँ हैं।

इन्दिरा भी पक्की हठी थी। उसने बिस्तरा नही छोड़ा। न ही उसने कुछ खाया। अपने माँ-बाप की वह इकलौती बेटी है। बाप ने उसे समझाया कि कोई बात हो तो बताओ बेटी ! लेकिन इन्दिरा हर बार एक ही उत्तर देती थी "मेरी तबीयत ठीक नही है।"

उसकी माँ उसके कारण बड़ी दु खी हो गई।

मैं भी उसको समझाने में असमर्थ रहा। जब एक दिन मैंने इन्दिरा को माँ को समझाया तो वह बोली, "बेटा, तुम मेरी चिन्ता को नही समझ सकते। मैं वह माँ हूँ, जिसकी अपनी एक सन्तान है। कही इसे कुछ हो गया तो मैं कहीं की भी नही रहूँगी।"

मैं उनके आँसू नही देख सका। परदेश मे जिन आदमियों ने मुझे अपने बेटे की तरह पाला, उन्हें मैं कैसे भूल सकता हूँ ! लालाजी का पिता-तुल्य प्रेम। माताजी की असीम ममता।.....चिमन, मैं इन्दिरा के पास गया। इन्दिरा का मुख सूख गया था। आँखें भूख के कारण भीतर धँस गई थी।

मुझे देखते ही उसने अपना मुँह फेर लिया। मैं कुछ क्षण तक खड़ा रहा। देखता रहा। विचारता रहा कि मैं जैसे ही उसके प्यार को स्वीकार करूँगा, वैसे ही मेरी आत्मा मुझे धिक्कारेगी। हृदय में संघर्ष उठ रहा था। उस संघर्ष का वर्णन मैं नही कर सकता।

मैं सोचने लगा कि यह मन बड़ा अजीब होता है। इसे कोई नही समझा सकता। यह विचित्र है विचित्र, यह नारी सचमुच समीप वाले से ही लिपटती

है। ओह !···फिर मैं उसके कन्धे को हिलाकर बोला, "तुम मुझसे बहुत नाराज हो न, लो मैं तुमसे माफी माँगता हूँ।"

उसने मेरी ओर नहीं देखा।

मैं क्या करता—कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

फिर भी बोला, "तुम मुझे गलत समझ रही हो। मैं किसी और को प्यार करता हूँ। मैंने किसी और को वचन दे रखे हैं। इन्दिरा ! क्या मैं तुम्हारी ही तरह की एक नारी को धोखा दे दूँ ? वह मेरी वर्षों से प्रतीक्षा कर रही है। अपने जीवन के उन क्षणों को वह मेरे इन्तजार में खो रही है, जो गुजरने के बाद कभी नहीं लौटते।"

मेरा इतना कहना था कि उसने एकदम मेरी ओर देखा।

मैंने देखा—उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही है।

"इन्दिरा, यदि ऐसा बन्धन न होता तो मैं तुम जैसी सुशील युवती के प्यार को कभी नहीं ठुकराता !" और मैंने उसकी प्रशंसा करने के हेतु झूठ कहा, तुम जैसी युवती के प्यार को खोकर कोई भी आदमी सुखी नहीं रह सकता। वह बहुत अभागा है।" भावावेश मे मेरी आँखें भी सजल हो उठी।

वह उठी। मेरे सामने खड़ी रही। मुझे अनिमेष दृष्टि से देखती रही। फिर उसने लपक कर मेरा हाथ अपने हाथ में लिया और उसे चूम लिया।

मैं कुछ नही बोला। मुझे निरुत्तर देखकर वह बोली, "अब मैं आपको कभी नही सताऊँगी। आप के प्यार के बीच दीवार नही बनूँगी। मैं किसी नारी के हृदय को नही कुचल सकती।"

वह चली गई। उसने स्नान किया और फिर खाना खाने बैठी।

उसकी माँ और उसके पिता को विश्वास हो गया कि उसके रुष्ट होने का कारण मैं ही हूँ।

× × ×

मैं उस दिन घर देर से लौटा। रात्रि के शून्य पहर में लहरों के गर्जन का संगीत सुनने मैं यमुना तट चला गया। मुझे लगा कि मैं अपराधी हूँ, इस सम्पूर्ण जीवन मे मैं प्रत्येक के हृदय को जलन ही दे सकता हूँ।

तारे पानी में दियों की तरह मचल रहे थे।

जनशून्य उस किनारे पर मैं अकेला बैठ रहा। भावनाओं में मैं बह गया।

मुझे लगा कि कोई मेरे पास आकर खड़ा हो गया है। मैंने उसे पहचान लिया, वह थी केसर।

लहरों की तेज हिलोरों के कारण तारे खो गये।

मैंने केसर का हाथ अपने हाथ में लिया और कहा, "तुम मेरी अन्तरंग हो, मेरे हृदय की प्रेरणा हो, मेरे मानस की कल्पना हो, मेरे जीवन के दुख-सुख की साधन हो।"

तभी कोई मल्लाह चिल्लाया, "अरे सम्भल जइयो, ज्वार आ रहा है।...नावों को बाँध दो।"

मेरा सपना भंग हो गया।

वस्तु जगत में लौटते ही मैंने प्रतिज्ञा की—मैं अब केसर को अपना लूँगा। सारे बन्धन और सारे नियमों को तोड़कर मैं उसे अपने पास बुला लूँगा। केवल दो-चार मंत्र ही किसी के जीवन को चिर-बन्धन में बाँधने को पर्याप्त नहीं। मैं सबको तोड़ दूँगा, तोड दंगा! बन्धन तो मन का होता है। समर्पण तो मन का होता है। मन की अस्वीकृति के साथ कोई भी बाह्य स्वीकृति सही नही। उसमें आनन्द नही।

रात को जैसे ही घर मे घुसा, माताजी ने पूछा, "आज बडी देर कर दी शिव बेटा!"

"हाँ माताजी, मैं जरा काम से चला गया था।"

"कहाँ?"

"बस, एक मित्र के यहाँ।"

"इतनी रात बाहर रहना ठीक नहीं है।"

"आगे से न रहूँगा।" कहकर मैं सो गया।

सवेरे इन्दिरा चाय लेकर आई। वह मुझसे नहीं बोली। जब मैंने उससे कारण पूछा तो वह बोली, "जगत बहुत बड़ा है। मुझे भी कोई न...ोई मिल जायगा।" मैंने देखा उसमे मुझे प्राप्त ... वह रहा...

मैंने उससे बहस करना अच्छा न... पी

इसके बाद चिमन, तुम्हें क्या व...

करती थी। वह मुझसे बड़ी उपेक्षा

मेरी बात का अवेला करके बोलती थी। मैं उससे परेशान हो उठा। आखिर मैं भी आदमी था, हर समय की कठोर बात मुझसे नही सही गई।

इधर वह रात को देर से आती थी। माँ कुछ कहती तो वह उससे भी झगड़ पड़ती थी। उससे नही झगड़ती तो वह अपने आपको कोसती थी। यह सब मेरे कारण हुआ। न मैं उसके घर आता और न उसका झुकाव मेरी ओर होता। सचमुच मुझे अपने आप पर कभी-कभी बड़ा गुस्सा आता था। कभी-कभी झुँझलाहट। कभी-कभी मैं यह भी सोचता था कि मैं लालाजी का घर छोड़कर चला जाऊँ !····एक दिन मैंने अपना बिस्तर भी बाँध लिया, लेकिन लालाजी ने घर छोड़ने का कारण पूछा। मैं कुछ भी कारण नहीं बता सका। चुपचाप उनके सामने खड़ा रहा। मेरी गर्दन झुकी थी। मेरी आँखों में पश्चात्ताप था।

उन्होंने मेरे सिर पर हाथ रखकर पूछा, "क्या बात है ?"

"ऐसे ही जा रहा हूँ। आपको बहुत कष्ट दे लिया !"

"कष्ट कैसा बेटा ? औलाद के स्नेह को कौन माँ-बाप कष्ट समझेगा ! मैं चाहूँगा कि तुम मुझे बहुत कष्ट दो, इतना कष्ट दो कि मेरा जीवन उन कष्टों से भर जाय।" कहते-कहते उनकी आँखें भर आईं।

मैं वापस अपने कमरे मे चला गया।

चिमन ! लालाजी के आत्मिक-बन्धन ने मुझे उस दिन उस घर से विदा नही होने दिया। यदि मैं उस दिन विदा हो जाता तो आज मैं उस नजर से नीचे नही गिरता जिस नजर ने मुझे अपनी रोशनी समझा था। मैं लालाजी के अटूट स्नेह में बँध गया। दिन गुजरे····गुजरते गये।

एक माह बाद की बात है।

मैं यमुना के किनारे टहलने चला गया था। इधर मुझे सन्तोष नही मिलता था। कुछ उद्विग्न रहता था।···इसका कारण यह था कि इन्दिरा का मन आजकल कहीं भटक गया था।

अब जब कभी उसे अपने पास बुलाता तो वह अजीब व्यंग्य में मुझसे बातचीत करती। उसका लहजा ही बदल गया था।

तो मै तुम्हे कह रहा था कि मैं उस रात देर से आया। आते ही मुझे मालूम हुआ कि इन्दिरा अभी तक नहीं लौटी है।

लालाजी ने मुझे पूछा, "तुम्हें वह कुछ कह कर गई है ?"

"नहीं तो !"

"फिर कहाँ गई है ?"

"मैं कुछ कह नहीं सकता।" कहकर मैं कपड़े बदलने भीतर चला गया। मैं काफी गम्भीर हो गया था। समझ नहीं पा रहा था कि आखिर इन्दिरा इतनी रात गये कहाँ रहती है ?

कपड़े बदलकर आया तो लालाजी अपनी पत्नी से पूछ रहे थे। उनकी पत्नी उदास बैठी थी।

"इन्दिरा की माँ, वह तुम्हें कुछ कह नहीं गई ?" लालाजी ने पूछा।

"नहीं।"

"बड़ी अजीब लड़की है।"

"अजीब हो या कुछ और, पर मैं आज उसे साफ-साफ शब्दों में कह दूँगी कि इतनी रात गये घर से बाहर रहना ठीक नहीं है। ये सब भले घर की लड़कियों के लक्षण नहीं हैं।" माताजी के स्वर में आक्रोश था।

लालाजी काफी समझदार और धैर्यशील व्यक्ति थे।

उन्होंने माताजी की ओर देखा और परामर्श भरे स्वर में बोले, "देख इन्दिरा की माँ, कठोर रवैया बच्चों को खराब कर देता है। सदा आदमी को धीरज से काम करना चाहिए। तुम उसे धीरज से समझा देना।"

उनमें काफी देर तक चर्चा होती रही। अन्त में लालाजी ऊपर जाकर सो गये।

रात ढल रही थी।

माताजी जहाँ बैठी थी, वहीं पड़कर खुर्राटे भरने लगी।

लेकिन मुझे नींद नहीं आई। मैं अपने कमरे में चहल-कदमी करने लगा। मुझे यकीन था कि वह अपनी किसी सहेली के साथ फिल्म का अन्तिम शो देखने चली गई है।

लालाजी के पास एक अन्धा भिखारी रहता था। वह बारह और एक के बीच में पानी माँगता था। जब उसने पानी माँगा तो मैंने बत्ती बुझा दी।

मेरे कमरे में घोर अन्धेरा छा गया। उस अन्धेरे में भी मुझे इन्दिरा का

तमतमाया और नाराज मुख जलते अंगारे की तरह दिखलाई पड़ जाता था। मेरे कल्पना लोक में केवल वह ही रह जाती थी।

लेकिन इस उद्विग्नता और परेशानी मे भी मैं केसर को नहीं भूल पाया। घोर अन्धकार मे दूरस्थ जलते दीप की तरह उसकी स्मृति का अपना अस्तित्व था।

केसर, सचमुच केसर है! प्रभु के मस्तक पर शोभा पाने वाली अनुपम! मैं क्या करूंगा चिमन, वह मुझे अब कभी माफ नहो कर सकती!"

वह कुछ देर तक चुप रहा। फिर सिलसिले को जोड़ता हुआ वह बोला, "शान्त पहर था। मुझे नींद नहीं आ रही थी। अन्धकार में मैंने सोचा जरूर था, पर मेरा मस्तिष्क किसी के कदमा की आहट सुनने को बेचैन था। हर घड़ी मुझे ऐसा लगता था कि किसी के कदमों की आहट आ रही है।

आखिर वह आहट भी सुनाई पड़ी।

मैं सजग होकर खड़ा हो गया।

इन्दिरा घर के सामने आई। वह खड़ी रही। सड़क की धीमी बत्ती में मैं उसके चेहरे के भावों को पढ़ने में सर्वथा असमर्थ रहा, किन्तु यह मैं अच्छी तरह समझ गया कि वह परेशान है। क्योंकि वह दो-तीन बार दरवाजे तक आई और चली गई।

मैं चुपचाप अंधेरे मे उसकी गतिविधि को देखता रहा। कुछ देर बाद वह दरवाजे के समीप आई और सुबक-सुबक कर रोने लगी। रोती-रोती वह उठी और चलती बनी।

मैं उसके पीछे गया।

उसे बड़ी नाटकीयता से पकड़ा।

उसने मेरी ओर देखा, मैंने उसकी ओर; और वह फूट-फूट कर रो पड़ी। मै उसे अबोध बालक जैसी जिज्ञासा भरी नजर से देख रहा था।

उसने रुंधे कण्ठ से कहा, "मुझे छोड़ दो, मुझे छोड़ दो, शिव मुझे छोड़ दो!"

"लेकिन क्यों?"

"क्यों, यह मैं तुम्हें नहीं बता सकती। तुम मेरे माँ-बाप को कह देना कि आपकी बेटी इस संसार मे नहीं है!"

मेरे पाँवों की जमीन खिसक गई।

"आखिर बात क्या है ?"

"बात ? नहीं-नहीं, बस मुझे मरने दो !"

मैंने उसका हाथ मजबूती से पकड़ लिया और कहा, "जब तक इन ह में दम है, मैं तुम्हें किसी भी कीमत में नहीं मरने दूंगा !"

"सच शिव ?"

मैंने उसे और दृढ़ता से पकड़ा।

"देखो !"

"विश्वास रखो इन्दिरा, मैंने आज तक किसी से झूठे वायदे नहीं किये।

इन्दिरा मेरे कमरे में आई।

मैंने प्रकाश कर दिया।

वह धीरे-धीरे बोली, "शिव, मुझे क्षमा कर देना। मुझे मरने दो। मृत्यु के बिना मैं अब नहीं रह सकती।"

"कारण क्या है ?"

"कारण सुन कर मुझसे घृणा तो नहीं करोगे ?"

"नहीं, नहीं। तुम तो यह अच्छी तरह जानती हो कि मैं गांधीजो के आदर्शों को मानता हूँ। प्राणी मात्र से प्यार करना मैं अपना धर्म समझता हूं और पापी से पापी को स्नेह देना ही मानवीय धर्म है।"

इन्दिरा दीवार पर नजर जमा कर बैठ गई। वह नहीं बोली। मैं उत्कण्ठा से उसके रहस्य को जानने के लिए बैठ गया।

वह अन्त में बड़ी मुश्किल से बोली, "मैं माँ बनने वाली हूँ।"

पहाड़ टूट पड़ा हो मुझ पर, ऐसा मुझे लगा।

उसने मेरे पाँव पकड़ लिये। बोली, "मैं माँ बन रही हूँ। मुझे किसी ने छल लिया है। शिव, वह मक्कार मुझे छोड़कर कहीं भाग गया। कहता रहा, मैं तुमसे विवाह करूँगा। मैं उसके घर भी गई। पर वहाँ से मालूम हुआ कि उसने जो आलीशान मकान बताया था वह उसका अपना नहीं। उसमें वह एक कमरा किराये पर लेकर रहता था। तीन दिन से वह कहीं चला गया है।····अब मैं क्या करूँ शिव ?····शिव, मुझे मरने दो। मैं अपना यह काला मुँह अपने माँ-बाप को नहीं दिखा सकती।"

मैं धर्म-संकट में पड़ गया।

इन्दिरा ने मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, "मैं अब सिर्फ मर सकती हूँ। मरना ही चाहिए मुझ जैसी लड़की को।"

मेरी स्थिति बड़ी नाजुक थी। मेरी इच्छा हुई कि मैं फूट-फूट कर रो पड़ूँ। कहाँ गयी हमारी नैतिकता ?

बड़ी मुश्किल से मैंने उसे कहा, "यह सब क्यों किया ?" उस समय केसर का मुख मेरे सामने नाच उठा। कुछ भी हो, वह कितनी महान है !

मेरा उत्तर पाकर वह घर से बाहर निकली। मैंने उसे रोका। कहा, "मैं अभी माताजी···!"

"इससे तुम्हें क्या मिलेगा ? खामखा मैं बदनाम होऊँगी। लोग मेरे नाम पर घृणा से थूकेंगे। क्या तुम चाहते हो कि मेरे कलंक की कहानी घर-घर की कहानी बन जाय ?" वह सुबक पड़ी।

वह चल पड़ी। मैं उसे देखता रहा। मेरे मन में संघर्ष, सिर्फ संघर्ष !

अन्धकार मद्धिम रोशनी को अपने में लीलता गया।

मुझे लगा कि इन्सानियत मरी जा रही है। मुझे महसूस हुआ कि मेरे सामने मानवता अपने प्राणों की भीख की झोली फैलाये निराश होकर जा रही है।···मैं भावावेश में भर उठा। भावुकता की चरम सीमा में मैं अपने आपको भूल गया। केसर का ध्यान नहीं रहा। स्वजनों-परिजनों का ख्याल नहीं रहा। अच्छे-बुरे परिणाम का विचार नहीं रहा। सिर्फ यही सोचता रहा कि मुझे एक प्राणी की रक्षा करनी है।···किसी का अहसान उतारना है। और मैंने उसे पकड़ लिया। उस समय मेरा प्रेम भी गूँगा हो गया था।

मैं कुछ नहीं बोला। वह मेरे सीने पर सिर रखकर रो पड़ी। मैं भी आँसू बहाता रहा।

फिर मैंने उसके बालों को सहलाकर कहा, "चलो, घर चलो, मैं तुम्हें कलंक के जीवन से बचाऊँगा।"

हम दोनों घर में आ गये। वह अपने कमरे में सो गई, लेकिन मैं उस रात एक पल के लिए भी नहीं सो सका। रह-रह कर मेरे मस्तिष्क में एक ही बात गूँज रही थी कि मैं क्या करूँ ?

आखिर सबेरा हुआ।

इन्दिरा चाय लेकर आई।

चाय बना कर उसने मुझसे कहा, "तुम पिताजी से बात करो।"

"लेकिन···?"

"शिव, तुम देवता हो। मैं कहीं की नहीं रहूँगी। यह सब मैंने गलत किया। जरूर मेरे भीतर कोई छिनाल औरत बैठी थी।"

"इन्दिरा, मेरी हिम्मत नहीं होती!"

"क्यों?"

"सोचता हूँ, लालाजी मुझे कितना कमीना समझेंगे। सोचेंगे कि मैंने इसे बच्चे की तरह पाला और उसने सांप की तरह मुझे डसा। इन्दिरा, मेरा चरित्र और नैतिकता भ्रष्ट हो जायगी। जरा अच्छी तरह तुम सोच लो।"

"मेरा जीवन केवल इसी सूरत से बच सकता है।" और उसने मेरे पांव पकड लिये। उसकी आँखों में आंसू आ गये। मैं क्या करता? सच चिमन, मुझसे कुछ भी करते नहीं बना। मैंने उसे उठाया और अपने सीने से चिपका लिया, जैसे वह मेरी अपनी है।

तभी आ गईं माताजी। उन्होंने हमें जैसे ही इस रूप में देखा कि वह लालाजी के पास भागती-भागती गईं। फिर क्या था, घर में कुहराम मच गया।

लालाजी ने मुझे बहुत जलील किया। मैंने उन्हें साफ-साफ कह दिया, "हम दोनों विवाह करेंगे। इन्दिरा माँ भी बनने वाली है।"

वे यह सब सुनकर पागल की तरह चीख पड़े।

चीखते-चीखते उन्होने कहा, "मेरे घर से निकल जाओ।" और वे मेरे पास आये। मैं कांप गया। मेरा सारा शरीर पसीना-पसीना हो गया।

उन्होने मुझे विचित्र दृष्टि से घूरा और वे चीखे, "ओ नीच, तुझसे एक कुत्ता भी अच्छा होता है, वह रोटी डालने वाले को कभी नहीं काटता और तूने अपने मालिक को ही काटा।···जा, जा, मेरे घर से निकल जा!"

लाचार हम दोनों यहाँ आ गये।

कुछ दिनों के बाद ही इन्दिरा सीढ़ियों से गिरी। साथ में वह बच्चा भी गिर गया।···लेकिन जो बन्धन अग्नि के पवित्र अनुष्ठान के बीच हम दोनों

ने स्वीकार किया, वह अब नहीं टूट सकता।''''चिमन ! तुम केसर को सारी बातें बता देना और कह देना कि मैं एक सिसकता हुआ दीया हूँ जो जल रहा है, काँप-काँप कर जल रहा है।"

चिमन उठ गया।

"ठहरो चिमन, कुछ खा लो और हाँ, केसर से कहना कि वह तुम्हें ही प्यार करता था, प्यार करता है, प्यार करता रहेगा।"

चिमन ने कहा, "मैं कुछ भी नहीं खाऊँगा। मन बड़ा दु:खी हो गया है। बड़ी रानी सा यह सब कैसे सहन करेंगी ? सच वह पागल हो जायेगी।

वह धीरे-धीरे शिव की आँखों से ओझल हो गया।

× × ×

८

शिव ने घर में प्रवेश किया।

पड़ोसी का बच्चा चला गया था। घर में शून्यता छाई हुई थी। कभी-कभी चूड़ियों की खनक से शून्यता भंग हो जाती थी। शिव उदास था।

इन्दिरा ने उसे जैसे ही देखा, वैसे ही बोली, "आप अकेले कैसे आये ? चिमनजी कहाँ गये ? मैंने उनके लिए खाना भी बना लिया है।"

शिव ने कहा, "वे चले गये, मैंने उनसे बहुत अनुरोध किया, पर·वे नहीं रुके। कहने लगे कि मुझे एक जरूरी काम है।"

इन्दिरा ने कहा, "उन्होंने कह दिया और आपने जाने दिया। खूब मेहमानवाजी करते हैं। अरे, उन्हें दो घड़ी और रोक लेते, कौन-सी बारिश हो रही थी ! आखिर आग्रह-अनुग्रह भी कोई चीज होती है, पर आपने उन्हें रोका ही नहीं होगा। बड़े उदासीन हैं आप !"

शिव ने तनिक कठोर स्वर में कहा, "यह तुमने कैसे जान लिया ? मैंने इतनी देर उसे बातों में बहलाये रखा।"

इन्दिरा को उसकी बात पर विश्वास नहीं हुआ।

वह शिव को खाना परोसने लगी।

खाना खाते-खाते शिव ने उससे कहा, "देखो, इन्दिरा, यह चिमन मेरे गाँव का है, यह तुमसे हजार तरह की बातें पूछेगा, पर तुम इसे कुछ भी मत बताना।"

'क्यों ?"

"बस, यूँ ही, ये लोग बड़े भोले होते हैं। हर बात का एक नया ही अर्थ निकालते हैं।"

इन्दिरा के चेहरे पर रोष के भाव आ आये। वह बोली, "जरूर तुमने उन्हें मेरे बारे मे सब कुछ बता दिया होगा शिव ! तुम पहले कितने अच्छे थे और आजकल तुम कितने बदल गये हो ! तुम्हारे स्वभाव में कठोरता आ रही है।"

"मैं उपदेश सुनाना नहीं चाहता। मैं इधर बहुत परेशान रहता हूँ। इन्दिरा हम कितने व्यर्थ क्षणों में जी रहे हैं।"

इन्दिरा खामोश हो गई। वह कुछ भी नहीं बोली।

चिमन 'हाउस' पहुँचा।

केसर उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। चिमन चुपचाप उसके पास बैठ गया। दोनों थोड़ी देर मौन रहे। बाद में चिमन ने मौन तोड़ा, "यहाँ से कब चलने का विचार है ? मेरे ख्याल में हरिद्वार ही चला जाय ?"

"अब मैं हरिद्वार ही जाऊँगी।"

"मतलब ?"

"जिसके जीवन की सब तृष्णाएँ मर जाती हैं, उसकी आखिरी तमन्ना हरिद्वार ही हो सकती है।"

चिमन ने तड़प कर कहा, "नहीं-नहीं ऐसा न कहिए बड़ी राणी सा, आप····!"

"तुम बोलते-बोलते चुप क्यों हो गये ?"

"मैं आपको यह बता रहा था कि शिव ने एक अत्यन्त मानवीय कार्य किया है। सचमुच वह देवता है। शिव की जगह अगर आप भी होती तो ऐसा

ही करतीं। क्योंकि आदमी का कर्त्तव्य और परिस्थिति उस समय उसको ऐसा करने के लिए विवश कर देते हैं।" चिमन ने गम्भीर स्वर में कहा।

"कैसे ?"

चिमन ने सारी कहानी सुना दी। कहानी सुनाकर वह बोला, "अब आप बताइए कि वह क्या करता ? उसके सामने कौन-सा रास्ता था ? क्या वह उस परिवार की इकलौती कन्या को मरने देता ?"

केसर के होंठों पर तरस भरी मुस्कान नाच उठी।

चिमन उस मुस्कान का रहस्य नहीं समझ सका। वह प्रश्न भरी दृष्टि से उसे देखने लगी। बोली, "मैं आपका मतलब नहीं समझा ! आप कुछ कहना चाहती हैं ?"

"मैं यह कहना चाहती हूँ कि शिव ने जो भी कहा है, वह एक झूठी कहानी है। बात में जो नाटकीय तत्व हैं, वे श्रोता पर केवल प्रभाव डालने के लिए बनाये गये हैं। मुझे ऐसा लगता है कि शिव निरन्तर संघर्ष से कुण्ठित हो गया और अब उसने शायद यह समझा कि जीवन भर मैं इसी तरह कैसे लड़ता रहूँगा, और फलतः उसने अपने जीवन को व्यवस्थित कर लिया है।'''' और तुम यह भी अच्छी तरह जानते हो कि वह आजकल कहानियाँ लिखता है। जो आदमी कहानियाँ भी लिखता है, वह अपनी और दूसरों की परिस्थिति के उतार-चढाव से भी परिचित हो जाता है।''''क्या तुम एक बार शिव की बहू को यहाँ नहीं ला सकते ?"

"क्यों नहीं !"

"फिर कल तुम उसे बड़ी होशियारी से लाना। देखो, शिव को पता न लगे। एकदम गुप्त ढंग से।"

चिमन ने कहा, "आप देखती जायें।"

दूसरे दिन संध्या के समय चिमन शिव के यहाँ पहुँचा। संयोग से शिव कहीं गया हुआ था। मालूम हुआ, "इस समय वे घूमने जाते हैं, यमुना-तट।"

चिमन ने इन्दिरा को कहा और उससे चलने की प्रार्थना की।

इन्दिरा तुरन्त चलने को उद्यत हो गई।

जब वे दोनों 'हाउस' पहुँचे, उस समय रात का हल्का अँधेरा छाने लगा था।

चिमन ने सारी कहानी इन्दिरा को सुनाई। इन्दिरा कहानी सुनती-सुनती रो पड़ी। उसकी आँखों में आँसू बह उठे। केसर ने पूछा "क्या बात है ? अरे, तुम रोने क्यों लगीं ?"

इन्दिरा ने कहा, "जब वे चिमन भैया से बात करके आये, तब उन्होंने मुझे कहा कि तुम अपने बारे में उन्हें कुछ भी मत बताना, तभी मैं समझ गई थी कि मामला गड़बड़ है। क्योंकि एक बार पहले भी उन्होंने एक किस्सा इसी तरह का मेरे बारे में बनाकर सुना दिया था। यह हर किस्से मे यह साबित करना चाहते हैं कि इस सम्बन्ध में उनका कोई कसूर नही है। लेकिन बात बिलकुल इसके विपरीत है, बहिन !"

केसर ने पूछा, "क्या बात है ?"

इन्दिरा बोली, "मेरे बाप लाला जरूर हैं, पर हैं बहुत गरीब।"

हम चार बहिनें हैं। हमारा एक छोटा भाई है। शिव अपने एक राजस्थानी दोस्त के यहाँ रहता था। उसका घर हमारे पड़ोस में था। वह भावुक था और बडी-बड़ी नैतिक आदर्शों की बातें किया करता था। वह हमारे मोहल्ले में पढ़ा-लिखा था, इसलिए लोग उसका सम्मान करते थे।

मैं उसे सचमुच अपने भाई की तरह मानती थी, और यह आपका शिव मुझे 'बहन-बहन' कहता था। मेरे हृदय मे शिव के प्रति बड़ा आदर था और मै उसका बहुत सम्मान करती थी। वह अपने भाइयो के लिए संघर्ष करता आया है। राजाजी ने उसे देश निकाला दिया है। यह हमारे लिए गौरव की बात थी।

वह हमारे लिए आदरणीय था।

उसने हमसे कभी भी आपकी चर्चा नही की।

इन्दिरा रुकी। केसर के चेहरे पर कठोर भाव उत्पन्न हुए। वह कुछ बोलना चाहती थी, पर वह नही बोली। चुपचाप जलती आँखों से देखती रही।

इन्दिरा ने पुनः कहा, "धीरे-धीरे हम दोनों नजदीक आते गये। शिव का दबदबा भी इधर उस मोहल्ले मे फैलता गया। मैं आपको क्या कहूँ, वह मुझे बहुत ही प्यारा लगता था।

एक दिन आपके इस शिव ने मुझे पुकारा। अपने कमरे में बुलाया और जानती हो, उसने क्या किया ?·················मैं कुछ भी नही कर सकी। मैं यह सोचती रही कि इसे क्या हो गया है ? इसने एकदम ऐसा नीच कदम क्यों उठा लिया है ?

वह मुझसे बोला, "मैं तुम्हें प्यार करता हूं !"

लेकिन इसकी नीचता देखो—उस दिन के बाद भी यह मुझे 'बहिन' कहता रहा। अन्त में एक दिन मेरे माँ-बाप को उसकी खबर मिल गई और उन्होने शिव को बड़ा फटकारा। तब आपके शिव ने उनके सामने शादी का प्रस्ताव रखा और गरीबी से मजबूर मेरे बाप के सामने दूसरा चारा न था। अतः हमारा विवाह हो गया और हम यहाँ आकर रहने लगे।

सच बात यह है। लेकिन शिव सदा अपनी महानता का प्रदर्शन करने हेतु कोई न कोई नयी कहानी गढ़ कर सुना देता है। लिखने की प्रवृत्ति ने उसे हर बात में कुछ नवीनता लाने की आदत डाल दी है और वह मेरे बारे में बहुत ही ऊटपटाँग कहा करता है। मैं सोचती हूँ कि अब इनका स्वभाव ही ऐसा हो गया है।"

इन्दिरा की बात सुनकर केसर का मन ग्लानि से भर आया। वह उठी और उसने भीतर जाते हुए कहा, "वह तुम्हारा पति है, इसलिए वह क्षम्य है, अगर वह केवल मेरा परिचित होता तो मैं उसे जान से मार देती। लेकिन तुम यकीन रखो, मैं तुम्हारे सुहाग-सिन्दूर को कभी भी नही पोंछूंगी। पर मुझे तुम दोनों की बातों पर जरा भी विश्वास नहीं आता। पता नहीं, कौन झूठ बोल रहा है और कौन सच। मुझे ऐसा लग रहा है कि तुम दोनो ही सफेद झूठ बोल रहे हो। सत्य कुछ और ही है। चिमन इन्दिरा को घर पहुँचा आ ! मुझे अब इनमें न दिलचस्पी है और न स्नेह। दया भी नही है। ये बड़े ओछे लोग हैं। थू है इन पर·······"

इन्दिरा घर पहुँची तो शिव ने पूछा, "कहाँ गई थीं तुम ?"

इन्दिरा ने झूठ कहा, "अपने घर।"

शिव को सन्तोष हो गया।

× × ×

रात बड़ी बेचैनी से गुजरी।

केसर का विद्रोही मन उस रात पल भर के लिए शान्त न रह सका। वह हर दम भाग कर शिव को दण्ड देना चाहती थी। उसे बहुत दुख था कि शिव अपने जीवन के निरन्तर संघर्ष को इस परिणाम पर बदलेगा। वह ऐसा सोच भी नहीं सकती थी। ऐसी उसने मन में कल्पना ही नहीं की थी। उसकी माँ का दर्दनाक जीवन, उसकी अपनी गुलामी और किसानों के लिए अपने प्राणों को हथेली पर रखने की प्रवृत्ति, उन सबका क्या हुआ ?

वह सोचती रही—आदमी एकदम इतना बदल जाता है ! इन्सान से शैतान ! वह अपने पिछले जीवन के समस्त कार्य-कलापों पर इस तरह पर्दा डाल देता है, जैसे कुछ हुआ ही नहीं। ओह, ये कैसे आदमी होते हैं !

वह रात्रि उसके लिए न खत्म होने वाली महारात्रि बन गई।

उसे बार-बार विगत का स्मरण हो उठता था।

तब उसने विश्लेषणात्मक दृष्टि से शिव का अपने प्रति प्यार देखा। जब-जब शिव को मौका मिला, उसने केसर को प्यार किया। दरअसल भावुकता उसके मन की बड़ी दुर्बलता थी। फिर उसके समक्ष जीवन के संघर्ष के अन्त की कोई अवधि नहीं थी, और उसने अपने आपको इस परिस्थिति के हवाले कर दिया कि उसे भी अब सैट हो जाना चाहिए।

लेकिन फिर····!

केसर को लगा कि उसने जिस आदमी को अपने लिए चुना था, वह आदमी सर्वथा अनुपयुक्त था। उसके मन में संघर्ष का कोई ठोस आधार नहीं था, एक भावुकता थी, और यह निराधार भावुकता का ही परिणाम है कि आज वह इतनी पीड़ा को सहन कर रही है।

रात कैसे बीती, यह वह नहीं जान सकी।

सवेरे वह बहुत देर से उठी।

× × ×

चिमन शिव को बुला लाया।

शिव प्रतीक्षा-गृह में बैठा अपने को भावी संघर्ष के लिए तैयार कर रहा था। बार-बार वह उन वाक्यों को दोहरा रहा था, जो वह केसर से कहना चाहता था।

केसर आई।

शिव ने उसकी ओर देखा और बोला, "मुझे क्षमा कर दो। मानवीय कर्तव्य के पीछे मैंने अपने और तुम्हारे प्यार की बलि दे दी।"

केसर ने कोई उत्तर नही दिया। चुपचाप उसके पास बैठ गई।

"मैं तुमसे माफी माँगने आया हूँ। मुझे तुम गलत न समझना। मैंने जीवन में केवल तुम्हें ही प्यार किया।"

केसर हठात् उठ खड़ी हुई। उसका चेहरा लाल था। होंठ सख्ती से उसने भींच रखे थे। वह जल्दी-जल्दी चहल-कदमी करने लगी, मानो उसके अन्तस् मे भीषण हाहाकार है। जैसे वह अपने अन्दर उठते हुए अशान्त सागर पर काबू पाने में असमर्थ है।

शिव अपना पूर्व योजनाबद्ध कार्यक्रम पेश करता रहा, "मेरे सामने एक असहाय-निर्दोष युवती का कुम्हलाया मुख था। उसे मेरे ही जैसे किसी पुरुष ने छला था, और वह मेरे पाँव पकड़ कर मुझसे जिन्दगी की भीख माँग रही थी। उसका प्यार, उसके बाप के अहसान और उसकी ममता, मैं क्या करता केसर? मुझसे कुछ हुआ नहीं। मैं भावावेश में बह गया।"

"लेकिन तुमने इसे छिपाया क्यों?"

"इसलिए छिपाया, क्योकि मुझे विश्वास था कि तुम इस चोट को सहन नहीं कर पाओगी। तुम पागल हो जाओगी।"

"और तुम्हारी माँ की दर्दनाक मृत्यु, तुम्हारे जीवन के उद्देश्य, क्या एक लड़की के जीवन से अधिक महत्वपूर्ण नहीं थे?"

शिव चुप रहा।

"तुम चुप क्यों हो?"

"कह तो रहा हूँ कि जो भावावेश मे हो गया, उसके लिए मेरे पास कुछ भी सफाई नही है।"

केसर का धैर्य जाता रहा। यह आदमी कितना बन रहा है। उसका रुका हुआ गुस्सा फूट पड़ा। वह झपट कर उसके पास आई। उसकी बड़ी-बड़ी आँखों मे खून उतर आया और उसने शिव के मुँह पर थप्पड़ो की बौछार कर दी। वह पागलों की तरह चिल्लाई, "झूठे मक्कार, वहशी, दरिन्दे! तुम मुझसे इतना बड़ा झूठ बोल सकते हो? तुम मास्टरजी और राष्ट्रीयता की बड़ी-बड़ी बातें करते रहे? कहाँ है तुम्हारा वह मास्टर?... तुम इन्दिरा जैसी भोली लड़की

के साथ जबर्दस्ती करके अपने आपको मानवता का पोषक बना सकते हो ? कमीने, तुम्हें कभी शान्ति-सन्तोष नहीं मिलेगा । तुम्हारी माँ की आत्मा और मेरा हृदय तुम्हें सदा बद्दुआ देगा । जा मैं एक शब्द भी सुनने को तैयार नहीं हूँ । मैं कहती हूँ—चला जा, और अपना मुँह मुझे कभी मत दिखाना । झूठे कहीं के, कितनी अच्छी और प्रभावशाली कहानी बना सकते हो ! इन्दिरा लखपति की बेटी ? छिः वह एक मामूली लड़की............"

शिव उठ खड़ा हुआ । वह कुछ नहीं बोला । उसे महसूस हो गया कि इन्दिरा ने केसर के समक्ष अपने को निर्दोष प्रमाणित करने हेतु वही उसकी झूठी कहानी "गलत आदमी" सुनादी है । खैर यह अच्छा ही हुआ, वह मुझे घृणा करे यही उत्तम ! औरत भी मर्द की बेवफाई नहीं सह सकती । यह घृणा इसे मेरे प्यार से अलग कर देगी । वह भी कहीं अपने आपको रोकेगी । उसके जीवन में भी कोई ठहराव आयेगा । वह रो उठा । बेचारी इन्दिरा ! हे ईश्वर यह तुम किस जन्म का दण्ड दे रहे हो ?

केसर ने उसे जाते-जाते कहा, "मेरी इच्छा हुई कि तुझे गोली से उड़ा दूँ, पर उस इन्दिरा का ख्याल ही मुझे रोक रहा है ।.........जा.........निकल जा !"

और उसके जाते ही केसर फूट-फूट कर रो पड़ी । वह रोती रही, सिसकती रही । आज उसने न खाना खाया और न पानी पिया । सिर्फ कलपना, तड़पना और सिसकना ।

अन्त में चिमन उसके पास आया ।

"बड़ी राणी, तुम में बड़ा साहस है । तुम भी ...।"

"भैया ! आज मैं जीवन का सब कुछ हार गई हूँ । अब मुझे अन्धकार चाहिए । मैं मरना चाहती हूँ । मैंने ठकुराणी होकर अपने शौर्य, कर्त्तव्य और मान-मर्यादा को छोड़कर शिव से एकनिष्ठ प्यार किया, मैंने सतीत्व और नारीत्व की हत्या करके शिव को अपने मन-मन्दिर का स्वामी बनाया, क्या यह दिन देखने के लिए ?"

चिमन ने बात को बदलते हुए कहा, "हम लोग कब तीर्थ-यात्रा को चलेंगे ?"

केसर की आँखों में आँसू आ गये। वह विगलित स्वर में बोली, "मेरी यात्रा समाप्त हो गई है। मेरी आशा के सपने टूट गये। अब मैं लौट जाऊँगी। असीम आनन्द की खोज में मैं निकली थी, उस आनन्द के उद्गम का ही अन्त हो गया। बचपन की बात छोड़ दो, पर यौवन के प्रारम्भ मे मैंने यह प्रतिज्ञा की थी कि चाहे कितनी प्रतीक्षा करनी पड़े, चाहे मुझे कितना ही विरोध सहना पड़े, पर मैं एक दिन शिव को अपना बना कर रहूंगी। मैं अपनी निर्भयता और साहस में उन लड़कियों को नया सबक दूंगी, जो बेचारी एक बार इन ठाकुरों के चगुल में फँसकर उम्र भर नरक का जीवन बिताती हैं।.... मैं अतीत की विस्मृति पर नये का निर्माण करूंगी। लेकिन शिव इतना कमीन होगा, यह मैं नहीं जानती थी। उसने किये-कराये पर पानी फेर दिया। जी चाहता है कि मैं यमुना मे कूद कर अपनी इह-लीला समाप्त कर दूं। इस अचानक बवण्डर ने मेरे चारों ओर प्रकाश को लील लिया है। अब हर साँस व्यर्थ-सी लगती है।....चलो, हम वापस ठिकाने चलेंगे।"

"इस तरह....?"

"यात्रा समाप्त हो गई।"

चिमन ने कोई उत्तर नहीं। वह वापस जाने की तैयारियाँ करने लगा।

× × ×

९

...

जीतकुँवर ने एक नया कारिन्दा रखा, जिसे ठकुराणी ने कभी किसी अपराध में अपने ठिकाने से निकाल दिया था। ठकुराणी का कहना था कि, "वह आदमी अच्छा नहीं है, उसने गाँव वालों के साथ गद्दारी की थी। उसने एक अँग्रेज अफसर को ठिकाने के पत्र दिये थे तथा स्वर्गीय ठाकुर सा का हार भी चुरा लिया था। वह गाँव के राज दूसरों को बताता था।" जीतकुँवर ने

जीतकुँवर सिगरेट मुँह में डाले अपनी दासी से बात करके हँस रही थी। वह अपनी दासी को कह रही थी, "वह बूढ़ी खूसट मुझ पर रोब जमाने लगी। कहने लगी—चन्द्रपाल को निकाल दो। मैंने कहा—नहीं। मेरा इतना कहना था कि मुझे आँखें दिखाने लगी। मैंने कहा—कि मैं आपकी आँखें बाहर निकाल लूँगी। बुढ़िया मेरे सामने गिड़गिड़ाने लगी। मैं उसे ठोकर मारकर लौट आई।" इतना कह वह हँस पड़ी।

ठकुराणी ने यह सब सुना। वह खून का घूंट पीकर रह गई। वह उसी समय अनूपसिंह के पास आई। अनूपसिंह भोपालसिंह के साथ शतरंज खेल रहा था। वह नशे में था।

ठकुराणी ने शतरंज को उठाकर भोपालसिंह को बाहर निकाला। वह बेचारा सकपका कर बाहर भागा।

"छोटे ठाकुर!"

"क्या है?"

तुम्हें क्या हो गया है, देखो तुम्हारी वहू मेरी किस तरह खिल्ली उड़ा रही है। मैं उसका खून पी जाऊँगी!"

"पी जाओ!" कहकर वह तन कर बैठ गया, "मैं तुम दोनों से परेशान हो गया हूँ।"

"ओह!" वह क्रोध से अपने होठों को काटती हुई बाहर आई। बाहर आते ही वह वापस जीतकुँवर के पास गई। बोली, "मेरी तुमसे प्रार्थना है कि तुम चन्द्रपाल को अपने यहाँ से निकाल दो!"

"मैंने कह दिया न, कि मैं ऐसा नही कर सकूँगी।"

"मैं वह अपमान सह सकती हूँ जिसकी महल के बाहर चर्चा न हो सके, पर मैं वह अपमान नहीं सहूँगी जिसका एक अपने आदमी से सम्बन्ध है, जिसके कारण मेरी शान-आन में बट्टा लग जाय। छोटी राणी! मैं ठकुराणी हूँ। मेरे रोम-रोम में दम्भ भरा है। मने जीवन में बड़े-से- बड़ा खेल खेला है। मुझे कठोर न करो। मुझे गुस्से में मत लाओ। हर बात की एक सीमा होती है।"

"आप मुझे कितना ही उपदेश क्यों न दें, पर मैं चन्द्रपाल को नहीं निकालूँगी। यह मेरा अन्तिम फैसला है।"

जीतकुँवर द्वारा स्पष्ट उत्तर पाकर ठकुराणी बाहर चली आई।

उसकी एक भी नहीं सुनी और उसे नहीं हटाया। तब ठकुराणी भड़क उठी और उसने उसी समय जीतकुँवर को अपने पास बुलाया।

जीतकुँवर आई।

ठकुराणी ने शराब पी रखी थी। इस लांछित-अपमानित जीवन में उसका सहारा अफीम और शराब ही था।

जीतकुँवर उसके पास बैठ गई। उसने भी सिगरेट सुलगा ली।

"आपने मुझे क्यों याद फरमाया है ?"

"छोटी राणी, मैं चाहती हूँ कि तुम चन्द्रपाल को अपने पास मत रखो। जानती हो, मैंने उसे गाँव से निकाल दिया था। मैं नहीं चाहती कि यह आदमी यहाँ रहे।"

"लेकिन मैं इसे रखूँगी। यह बहुत चतुर है।"

"इसे तुम नहीं रख सकोगी !"

ठकुराणी के तौर एकदम बदल गये, "छोटी राणी, आखिर मैं तुम्हारी सास हूँ। आखिर मैं वह औरत हूँ, जिसके हुक्म की अवज्ञा करना हँसी-खेल नहीं।...मैं कहती हूँ कि उस नमक-हराम को महल से अभी निकाल दो। मेरी इस आज्ञा का तुम्हें पालन करना ही होगा।"

"मैं ऐसा नहीं कर पाऊँगी !"

"बहू !" ठकुराणी का चेहरा लाल हो गया।

"यह दीवानजी की सिफारिश पर यहाँ आया है। उन्होंने उसकी जमानत दी है और मुझे ठिकाने की भलाई के लिए ऊपर वाले अफसरों को खुश रखना ही पड़ेगा।"

"और मुझे खुश नहीं रखोगी ?"

"मैं मजबूर हूँ।" कहकर जीतकुँवर वापस आ गई।

ठकुराणी यह उपेक्षा नहीं सह सकी। उसका अन्तस् अपमान के कारण हाहाकार कर उठा। वह उठी, उसने और शराब पी।

वह सोचने लगी—"इस बहू के कारण मेरा दबदबा और शौर्य समाप्त होता जा रहा है, अन्यथा यहाँ और महाराज के यहाँ मेरी तूती बोलती थी। यह मेरी दुश्मन है, दुश्मन !"

वह उठी। फिर जीतकुँवर के पास गई।

जीतकुँवर सिगरेट मुँह में डाले अपनी दासी से बात करके हँस रही थी। वह अपनी दासी को कह रही थी, "वह बूढ़ी खूसट मुझ पर रोब जमाने लगी। कहने लगी—चन्द्रपाल को निकाल दो। मैंने कहा—नहीं। मेरा इतना कहना था कि मुझे आँखें दिखाने लगी। मैंने कहा—कि मैं आपकी आँखें बाहर निकाल लूंगी। बुढ़िया मेरे सामने गिड़गिड़ाने लगी। मैं उसे ठोकर मारकर लौट आई।" इतना कह वह हँस पड़ी।

ठकुराणी ने यह सब सुना। वह खून का घूंट पीकर रह गई। वह उसी समय अनूपसिंह के पास आई। अनूपसिंह भोपालसिंह के साथ शतरंज खेल रहा था। वह नशे में था।

ठकुराणी ने शतरंज को उठाकर भोपालसिंह को बाहर निकाला। वह बेचारा सकपका कर बाहर भागा।

"छोटे ठाकुर!"

"क्या है?"

तुम्हें क्या हो गया है, देखो तुम्हारी बहू मेरी किस तरह खिल्ली उड़ा रही है। मैं उसका खून पी जाऊंगी!"

"पी जाओ!" कहकर वह तन कर बैठ गया, 'मैं तुम दोनों से परेशान हो गया हूँ।"

"ओह!" वह क्रोध से अपने होठों को काटती हुई बाहर आई। बाहर आते ही वह वापस जीतकुँवर के पास गई। बोली, "मेरी तुमसे प्रार्थना है कि तुम चन्द्रपाल को अपने यहाँ से निकाल दो!"

"मैंने कह दिया न, कि मैं ऐसा नहीं कर सकूँगी।"

"मैं वह अपमान सह सकती हूँ जिसकी महल के बाहर चर्चा न हो सके, पर मैं वह अपमान नहीं सहूँगी जिसका एक अपने आदमी से सम्बन्ध है, जिसके कारण मेरी शान-आन मे बट्टा लग जाय। छोटी राणी! मैं ठकुराणी हूं। मेरे रोम-रोम में दम्भ भरा है। मने जीवन में बड़े-से- बड़ा खेल खेला है। मुझे कठोर न करो। मुझे गुस्से मे मत लाओ। हर बात की एक सीमा होती है।"

"आप मुझे कितना ही उपदेश क्यों न दें, पर मैं चन्द्रपाल को नहीं निकालूँगी। यह मेरा अन्तिम फैसला है।"

जीतकुँवर द्वारा स्पष्ट उत्तर पाकर ठकुराणी बाहर चली आई।

ठकुराणी अपने कमरे मे आई और उसने फिर शराब पी। उसे लगा कि आज उस पर हर चीज़ व्यंग्य कर रही है। उसे कह रही है, "तू कुत्ती है, तेरा यहाँ कोई अस्तित्व नही।""

उसने बन्दूक उठाई और वह सीधी उस कमरे की ओर बढ़ी जिस कमरे में चन्द्रपाल बैठा था। वह बन्दूक में कारतूस भर कर धीरे-धीरे जा रही थी। चन्द्रपाल कागजात देख रहा था। उसे क्या मालूम था कि कोई अनिष्ट होने वाला है। ठकुराणी बन्दूक तान कर दरवाजे के बीच खड़ी हो गई।

कमरे मे चार खिडकियाँ थीं, पर चारों के आगे मजबूत लोहे की सनाख लगी थी। चन्द्रपाल उसे देखते ही हाथ ऊँचे करके खड़ा हो गया। उसका चेहरा सफेद पड़ गया।

ठकुराणी ने दहाड़ कर कहा, "नीच! आज फिर तुम मुझे अपमानित करने के लिए यहाँ आ गये? क्या तुमने यह नहीं सोचा था कि एक दिन तुम यही से गद्दार समझकर निकाले गये थे।""खबरदार! यहाँ से भागने की चेष्टा की तो! मैं तुम्हें आज जिन्दा नही छोड़ूँगी। तुम्हे क्या पता कि तुम्हारे कारण मुझे कितना तिरस्कार सहना पडा। तुम्हें स्वर्गीय ठाकुर सा ने एक दिन कहा था न कि अब की बार तुमने इस ठिकाने में कदम रख दिया तो मैं गोली से भून दूँगा। वे आज नहीं हैं, लेकिन मै तुम्हें जिन्दा नही छोड़ूँगी। मैं उनके वचनो को पूरा करूँगी।"

"नही-नहीं, मुझे छोड़ दीजिए। मैं आपके चरणों मे""।"

"खामोश!"

उधर एक दासी ने भागकर इस घटना की खबर जीतकुँवर को दी। जीतकुँवर भी होश खो बैठी। वह भी पिस्तौल लेकर दौड़ पड़ी। उसने दूर से आवाज लगाई, "ठकुराणी सा, ठकुराणी सा, रुक जाइए, मैं कहती हूँ कि रुक जाइए।"

ठकुराणी ने एक बार उसकी ओर तेज निगाह से देखा। जीतकुँवर उसकी ओर झपट रही थी। उसने तुरन्त कहा, "मै तुम्हारी आज्ञा नहीं मान सकती। मैं इस साँप के बच्चे को जिन्दा नही छोड़ सकती!"

धाँय!

एक चीख निकली और चन्द्रपाल लुढ़क गया।

जीतकुँवर का खून खौल उठा।

वह क्रोध में अन्धी बन गई। उसने आव देखा न ताव ठकुराणी पर, अपनी सास पर, गोली दाग दी। ठकुराणी ने एक बार बन्दूक छोड़ने का और यत्न किया, पर पिस्तौल की गोली उसके गले के पास लगी थी, इसलिए उसे चक्कर आ गया और वह दीवार के सहारे गिर गई।

जीतकुँवर पत्थर की तरह निश्चल हो गई।

ठकुराणी के पास खून की धारा बह निकली।

जीतकुँवर उसके पास गई।

तभी मोटर आकर रुकी। उसमें से केसर उतरी। उसने इस नज़ारे को देखा तो वह हतप्रभ-सी रह गई। सारे नौकर इकट्ठे हो गये थे।

केसर ने दौड़कर ठकुराणी को उठाया। जीतकुँवर भी उसके पास आ गई।

ठकुराणी ने बड़ी कठिनता से अपनी आँखें खोलीं। केसर को देखकर उसके आँखों में घृणा झलकी। वह टूटते स्वर में बोली, "तुम आ गईं बड़ी राणी! मेरी यात्रा समाप्त हो गई, पर इतना वचन दो कि मेरे शरीर पर तुम दोनों की छाया भी नहीं पड़ेगी। तुम दोनों ने मेरे ठिकाने का पानी लजाया है, तुम दोनों ने मेरी आन-शान को बट्टा लगाया है, मुझे कई बार अपमानित किया है। तुम दोनों मुझ साधूपुर की ठकुराणी को मत छूना। तुम्हारे स्पर्श मात्र से मुझे दुःख होगा, दुःख! मैं तुम दोनों पर थूकती हूँ। थू....."

केसर ने चिल्लाकर कहा, "डाक्टर को बुलाओ!"

"डाक्टर की अब कोई आवश्यकता नहीं है। मुझे प्रसन्नता है कि मैंने चन्द्रपाल को मार दिया। मैं जिस शान की मृत्यु चाहती थी, वह मुझे मिल गई। काश, मुझे मारने वाला कोई दुश्मन होता। राम............राम.......!"

ठकुराणी की साँस टूट गई।

केसर ने निश्चल बैठी जीतकुँवर को हिलाकर कहा, "मैं सब कुछ हार चुकी हूँ। शिव ने भी मुझे धोखा दे दिया है, अच्छा हुआ यह खून मेरे हाथ से हो गया!"

जीतकुँवर ने कहा, "नहीं-नहीं!"

"छोटी राणी, तुम अब इस ठिकाने को सम्भालो। मेरे जीवन की यात्रा समाप्त हो गई। एकदम खत्म।"

ओलइंडर रो पड़ी ।

मैगर बोली, "मेरे लिए जेन और फ्लौसी इस जीने से अधिक अच्छी है और अगर मैं छूट गई तो मुझे यह संतोष होगा कि मैंने तुम्हें बचा लिया ।"

ओलइंडर उसके चरणों में लोट गई । चारों ओर सन्नाटा था, मानो मौत सब जगह आकर बैठ गयी हो ।